

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ	पक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५	१०	सिर	मरि
६	४	घाया	घाया
८	११	भइ	भइ
२६	१६	सुभर	सुघर
४३	२०	सव	सव कोई
४६	१५	कोटवारा	कोतवारा
५६	६	जि	जिउ
६३	५	त्रासमान	त्रास मान
१००	७	देसि है	देसिहै
१०४	२	मारहु देसू	'मारहु देसू'
१०७	२१	माहि	मोहि
१२२	८	भै	पै

पुस्तक-विवरण

आख्यानक काव्य

आख्यान या उपन्यास हिंदी-साहित्य के लिये नई वस्तु है पर प्राचीन समय ही से अन्य विषयक काव्यों के साथ-साथ आख्यानक काव्य भी पाए जाते हैं। इतना प्रबल है कि उनकी सरलता अन्य विषयक काव्यों की अपेक्षा न्यून है। विशेष राजनैतिक तथा सामाजिक परिस्थितियों के कारण हमारे साहित्य के प्रारंभिक काल में वीर-गाथाओं की प्रधानता और माध्यमिक काल में धार्मिक ग्रंथों की प्रचुरता रही। इसी माध्यमिक काल में हमारा साहित्य परिपक्व हुआ। इसी काल में आख्यानक काव्य भी अपनी प्रौढ़ता को पहुँचा। इसी काल में आख्यान के अद्वितीय कवि मलिक मुहम्मद जायसी ने, बेल-चाल की अवधि में, पदमावत नामक सुंदर आख्यान लिखा। वर्तमान युग परिवर्तन का युग है। इस युग में हम आख्यानक काव्यों के स्थान में उपन्यास और आख्यायिकाओं का उद्भव देख रहे हैं। काव्य अब छोड़कर न रहकर बेल-चाल की गद्यमय सरल शृंखला पहन रहा है। यह गद्य का युग है। इस युग में हम आख्यान का परिवर्धित रूप उपन्यास और आख्यायिकाओं में देख रहे हैं।

आख्यानों की रचना बहुत पहले ही आरम्भ हो चुकी थी जैसा कि अन्य देशों में देखा जाता है। आख्यान पहले-पहल प्रचलित दत्त-कथाओं के आधार पर सड़ा होता है। ये दत्त-कथाएँ कुछ अर्थों में ऐतिहासिक और कुछ अर्थों में कल्पित होती हैं। पीछे साहित्य की परिपक्वता के साथ-साथ उत्साही कविगण उनके आधार पर सुंदर आख्यानों की रचना कर डालते हैं। हिंदी-साहित्य का जन्म ऐसी परिस्थितियों में हुआ जिनमें वीर-गाथाओं को छोड़ आख्यान आदि विषयों की ओर उसे झुकने का अवसर कम मिला, फिर भी यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि विक्रमीय १४वीं शताब्दी में कुछ छोटे मोटे आख्यानों का प्रचार अवश्य था। १५वीं शताब्दी के साहित्य को हम ऐसी प्रौढावस्था में पाते हैं जिससे इस अनुमान को पुष्टि होती है कि इसके बहुत पूर्व ही साहित्य में अच्छे-अच्छे आख्यानों की रचना होने लगी थी पर दुर्भाग्यवश उनका लोप हो गया है। अभी तक जो कुछ पता चला है उससे आख्यानक काव्यों की शृंखला वि० १५ वीं शताब्दी से २०वीं शताब्दी तक निरंतर चली जाती है।

आख्यान लिखनेवाले कवि हिंदू और मुसलमान दोनों थे पर इन दोनों के प्रथो में शैली, उद्देश्य आदि सभी बातों में अंतर है। इसके आधार पर हम हिंदी-साहित्य के आख्यान-लेखकों को दो संप्रदायों में विभक्त कर सकते हैं—हिंदू और मुसलमान संप्रदाय। हिंदू और मुसलमान आख्यान-लेखकों में

सबसे भारी अंतर ता यह है कि एक का उद्देश काव्यों द्वारा केवल मनोरजन था, दूसरे का अपने मत तथा धार्मिक विचारों का प्रचार करना । मुसलमान लेखक प्रायः सूफी संप्रदाय के अनुयायी थे जिनका उद्देश मनोरजक प्रेमगाथाओं-द्वारा अपने उदार आध्यात्मिक भावों को हिंदू जनता के कानों तक पहुँचाना था । उनकी कहानियाँ सब प्रकार से हिंदू धर्म पर यदि अंतर था तो उनकी प्रेमभावना में जो उनके धर्म की विशेषता थी ।

हिंदू और मुसलमान लेखकों में समानता केवल भाषा की थी । दोनों हिंदी भाषा का प्रयोग करते थे पर एक साहित्यिक भाषा अपने काव्य में लिखता था, दूसरा प्रचलित अपरि-मार्जित भाषा को लेकर अपने उद्देश को पूर्ण करता था । हिंदू लेखक उद्बुद्धप्रिय थे । उन्हें छंद शास्त्र का पूर्ण ज्ञान था । मुसलमान लेखक अपनी विवशता के कारण केवल दोहे चौपाई का प्रयोग करते थे । उनका उद्देश था जनता के कानों में अपने भावों को भली भाँति पहुँचाना । अतः उन्होंने जनता में प्रचलित भाषा और सरल छंदों का उपयोग किया । एक का उद्देश था काव्यकला दिखाने हुए मनोरजन करना, दूसरे का उद्देश था मनोरजन करते हुए अपने भावों को पाठकों के हृदय में बैठाना । एक ऊपरी तडक-भडक में रह गया, दूसरा अपने उद्देश में सफल हुआ या नहीं पर उसने अपने निःस्वार्थ, सरल प्रयत्न से जनता में यथेष्ट प्रसिद्धि पाई और वह साहित्य में अमर हो गया ।

मुसलमान लेखकों के आल्यानो का आदर्श 'मसनवी' काव्य था जिमका प्रचार फारसी-साहित्य में अधिक है और जिसके ढंग पर उर्दू में भी काव्य लिखे गए हैं। ऐसे काव्यों में हम महाकाव्यों की गभीरता, सरसता और सुंदरता पाते हैं, पर जिन्हें हिंदू लेखकगण आल्यान लिखने में न पा सके। इसका एक कारण यह था कि हिंदू-लेखकों का आदर्श संस्कृत महाकाव्य था। संस्कृत काव्यशास्त्र के अनुसार महाकाव्य का नायक एक महान् व्यक्ति रखा जाता था। ऐसे महान् व्यक्ति प्रायः उन्हें इतिहास में मिल जाते थे जिन्हें वे अपने महाकाव्य का नायक बनाते थे। हिंदी-साहित्य में एक प्रकार से महाकाव्यों की कमी है। जो हैं भी उनके नायक प्रायः ऐसे व्यक्ति हैं जिनकी ओर हम धार्मिक या साहित्यिक दृष्टि से देखते हैं। कल्पित व्यक्तियों को लेकर महाकाव्य की रचना करने की ओर हिंदू-लेखकों का एक प्रकार से ध्यान ही नहीं गया। दूसरा कारण एक और है जिसके वशीभूत हो हिंदू-लेखकगण आल्यानो के प्रणयन में भली भौंति सफल न हो सके। वह है साहित्यिक और नैतिक परिस्थिति। हिंदी-साहित्य की जब से उन्नति प्रारंभ हुई, तब से हिंदू पराधीन हो चले थे। साहित्य के प्रारंभ में केवल पृथ्वीराजरासो ही एक ऐसा ग्रंथ रचा गया जिसे हम महाकाव्य कह सकते हैं। पीछे जब हिंदू विदेशियों के शासन में आने लगे तब उन्हें धर्म-संस्कृत ने आ घेरा। धार्मिक संघर्ष में

उन्होंने यदि कुछ लिखा तो वह अपने धार्मिक भावों का प्रबल करने या उसकी सरक्षा करने के लिए । ऐसे समय में कुछ काव्य ऐसे लिखे गए जिन्हें महाकाव्य कह सकते हैं । उनके नायक हमारे 'राम' हैं । उसके पीछे विलासिता ने आ घेरा—कविगण समस्या-पूर्ति, नायिकाभेद और शृंगार की ओर झुके—वे करते ही क्या ! जनता की रुचि ही ऐसी हो गई । उनके अभिभावकों को इसकी आवश्यकता थी । इस 'वाह' 'वाह' की शायरी के जमाने में भला कोई महाकाव्य रचने की धीरता रख सकता था । हाँ, अब परिस्थितियाँ अनुकूल हैं । संभव है, कविगण महाकाव्य लिखने की ओर प्रवृत्त हो ।

इसमें सदेह नहीं कि मुसलमान लेखकों ने हिंदी साहित्य में आख्यान-काव्यों के लिखने में सफलता पाई और उनमें कवि मलिक मोहम्मद सर्वश्रेष्ठ माने जा सकते हैं । कुछ दिन पूर्व 'जायसी' अपने ढंग के प्रथम, अंतिम और श्रेष्ठ कवि माने जाते थे पर अब ग्वाज से मुसलमान कवियों-द्वारा प्रणीत प्रायः १० ग्रंथों का पता लग चुका है । जायसी के पूर्व के दो कवियों के ग्रंथों का पता मिला है । स्वयं जायसी के लिखने से ज्ञात होता है कि उसके पूर्व आख्यानो का प्रचार था । जायसी अपनी पदमावत में लिखते हैं—

विक्रम धँसा नेत्र के पारा । मदनवति कहँ मनु पतारा ।
मधुपाठ मुगुधावति लागी । गगनपूर होइगा बैरागी ।
राजकुँवर कंचनपुर गयऊ । मिरगावति कहँ जोगी भयड

साधा कुँवर मनोहर जोगू । मधुमालति कहँ कीन्ह प्रियोगू ।
प्रेमावति काँ सुग्गरि साधा । ऊपा लुगि अनिरुध धर बाधा ।

इमसे स्पष्ट है कि जायसी के पूर्व स्वप्नावति, मुगधावति, मिरगावति, मधुमालति और प्रेमावति इन पाँच आख्यानों का प्रचार हिंदी-साहित्य में था । इन उल्लिखित आख्यानों में मृगावती और मधुमालती तो काव्य रूप में हस्तगत हुई हैं, शेष का अब तक पता नहीं चला । , सभव है, आगे चलकर इनका भी पता चल जाय । जायसी के पश्चात् आलम, उममान, शेर नवा, कासिम, नूरमोहम्मद, फाजिल शाह आदि अनेक कवि हुए हैं जिनके आख्यान-ग्रंथ मदमावती ही के ढंग के हैं । उसमानकृत 'चित्रावली' तथा नूरमोहम्मदकृत 'इद्रावती' काशी ना० प्र० सभा-द्वारा प्रकाशित हो चुकी हैं ।

जायसी

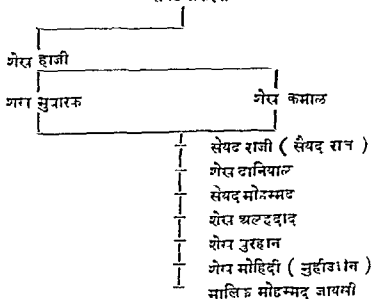
पदमावत के लेखक मलिक मोहम्मद जायसी अवध के रहने-वाले थे । उनके जन्म आदि के विषय में कुछ भी ज्ञात नहीं । कवि के कथन से पता चलता है कि ये जायस में आकर बस गए थे ।

जायस नगर धरम-अस्थानू । तहाँ आह कवि कीन्ह बरानू ।

एक जनश्रुति ने पता चलता है कि ये गाजीपुर के किसी दरिद्र मुसलमान के पुत्र थे । बचपन में इन्हें चेचक निरुली जिससे इनके बचने की आशा नहीं रही । इनकी माता ने मकनपुर के मदारशाह को मनीती मानी । कहते हैं, जायसी की जान तो बच गई पर इनकी एक आँख जाती रही । ये कुरूप भी हो गए ।

मनोती पूर्ण होने के पूर्व इनकी माता चल बसी। पिता पहले ही मर चुके थे। ये अनाथ होकर भाधुओं के साथ रहने लगे। कवि ने अपनी आँसू फूटने का उल्लेख पदमावत में किया है—
 “एक नयन कवि मोहम्मद गुनी।” इनकी धाई आँसू फूटी थी। आप लिखते हैं—“मोहम्मद बाई दिसि तजा एक मरवन, एक आँसि।” इससे तो यह भी पता चलता है कि इनका एक कान भी बहरा हो गया था। कवि मलिक मोहम्मद निजामुद्दीन औलिया की शिष्य-परंपरा में थे। आपने अपनी गुरु-परंपरा का वर्णन पदमावत में यों किया है—

सैयद अशरफ



मुसलमानों में प्रचलित गुरु-परंपरा के अनुसार जायसी की दी हुई परंपरा में अंतर पड़ता है। उनके अनुसार सैयद

राजे शेर कुतुब आलम और शेर हसामुद्दीन के पश्चात् हुए हैं। शेर आलम और सैयद अशरफ शेर अलाउल हक के चले थे।

कहते हैं कि जायसी सिद्ध फकीर थे। इनकी प्रशंसा सुनकर अमेठी के राजा ने इन्हें अपने यहाँ बुलाया और रखा। इन्हीं के आशीर्वाद से अमेठी के राजा के पुत्र भी हुआ। तभी से राजा इनका अनन्य भक्त हो गया। मरने पर इनकी कब्र इन्हीं राजा के कोट के सामने बनी जो अभी तक वर्तमान है। कहते हैं कि एक बार किसी राजा ने इन्हें न पहचानकर इनकी कुरूपता की हँसी उड़ाई थी, तब इन्होंने उत्तर दिया था “मोहि कहँ हँससि कि कोहरहि” अर्थात् मुझे हँसता है कि कुम्हार या बनानेवाले ईश्वर को? इस पर वह बड़ा लज्जित हुआ और उसने क्षमा माँगी।

जायसी ने अपने ग्रंथ में अपने चार मित्रों का उल्लेख किया है—यूसुफ मलिक, सलार कादिम, सलौने मियाँ और बडे शेर। यूसुफ मलिक और सलौने मियाँ गाजीपुर और भोजपुर के शासक महाराज जगतदेव (स० १५८४) के आश्रित थे।

जायसी की जानकारी

डाक्टर प्रियर्सन का कथन है कि जायसी ने जायस में आकर स्थानीय पंडितों से संस्कृत काव्य-रीति का अध्ययन किया था। यह सर्वथा अमाननीय है। जायसी की भाषा से यह बात

कभी नहीं भूलकती कि ये सस्कृत अच्छी तरह जानते थे । प्राय इनकी भाषा में तत्सम शब्दों का व्यवहार ही नहीं है । इन्होंने चद्र को सो माना है जो सस्कृत जाननेवाला पंडित कभी न करेगा । जायसी का शब्द-भांडार भी परिमित है, सस्कृत जाननेवाले कवि को कभी शब्दों की कमी न होगी । जायसी को यद्यपि सस्कृत रीति-ग्रथों तथा काव्या का पूर्ण ज्ञान न था पर वे खुब घूमे थे । सत्सग से उन्होंने अपना ज्ञानभांडार भली भाँति बड़ा लिया था । वे बहुश्रुत भी थे । भाषा काव्य-परपरा का ज्ञान उन्होंने अवश्य किसी भाषा-कवि से प्राप्त किया था पर उनकी जानकारी परिपक्व नहीं कही जा सकती । छद-शास्त्र, नरसिंह आदि का इन्हे परपरागत ओछा ज्ञान था । छद शास्त्र का ज्ञान तो इसी से स्पष्ट है कि इन्होंने दोहे-चौपाई जैसे सरल छंदों का व्यवहार पदमावत में किया है । इमसे सदेह नहीं कि अवधी भाषा में ये दोनो छंद मँजे हुए हैं और इन्हीं में वह अच्छी भी लगती है पर ऐसे सरल छंदों को रचने में भी जायसी ने अनेक स्थानों पर भूलों की हैं । दोहे और चौपाइयों में हमे अनेक स्थानों पर मात्रा की कमी-बेशी दिखाई पडती है ।

जायसी सुसलमान थे तो भी इन्होंने अपने काव्य में स्थान-स्थान पर हिंदू पौराणिक कथाओं का हवाला दिया है । इससे पता चलता है कि हिंदू पौराणिक वृत्तों का इन्होंने सत्सग से अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था पर यह ज्ञान

पक्का न था। इन्होंने अनेक स्थानों पर भूलों की हैं यथा— 'कैलास' शब्द का प्रयोग इन्होंने स्वर्ग के अर्थ में किया है। इद्र का स्थान स्वर्ग है, कैलास नहीं। मानसरावर हिदुओं के अनुसार उत्तर में है। पर इन्होंने उसे सिंहल द्वीप के निकट माना है। सात समुद्रों के नाम भी इन्हे भली भाँति ज्ञात न थे, क्योंकि इनके गिनाए हुए नामों में किलकिला और मानसरपुराणों के अनुसार नहीं हैं। ये रामायण और महाभारत के पात्रों के गुण-शील और कृतियों से भली भाँति परिचित थे। यह समय का प्रभाव था क्योंकि माध्यमिक काल में उत्तरीय भारत में राम-कृष्ण की चर्चा जोरो से चल रही थी। लोग महाभारत और रामायण का अध्ययन धर्मग्रन्थों की भाँति करते थे। इन्होंने अवश्य अनेकों बार उनकी कथा सुनी होगी।

जायसी को भारतवर्ष के भिन्न-भिन्न स्थानों का अच्छा ज्ञान था। पदमावत में कई स्थलों पर इसका परिचय मिलता है। उदाहरणार्थ रतनसेन की सिंहल-यात्रा के वर्णन में जायसी का वर्णन भौगोलिक दृष्टि से ठीक जान पड़ता है। ज्योतिष का ज्ञान भी जायसी को अच्छा था। मुसलमान तो आप थे ही। मुसलमानी धर्मग्रन्थ कुरान का इन्हे पूर्ण ज्ञान रहा होगा। पदमावत में स्थल-स्थल पर हमें ऐसे भाव मिलते हैं जिन्हें हम कुरान की आयतों से मिला सकते हैं। मुसलमानी धर्म की अनेक बातों का भी समावेश पदमावत में कहीं-कहीं हुआ है।

सत्तेप ने हम यह कह सकते हैं कि कवि मलिक मोहम्मद जायसी यद्यपि बहुत पढ़े-लिखे न थे पर उनकी जानकारी अनेक विषयों में अच्छी थी। जायसी भावुक थे, बहुश्रुत थे, और सच्चे कवि थे जिन्हें 'पंम की पौर' ने पदमावत जैसे सुंदर ग्रंथ के रचने के लिये प्रेरित किया था।

पदमावत का निर्माणकाल

पदमावत के निर्माणकाल में अभी बड़ा भगडा है। मिश्रबधुओं ने पदमावत का निर्माणकाल हिजरी सन् ६२७ माना है। इस दिनांक से जायसी ने सन् १५७५ में ग्रंथ आरंभ किया। अनेक पाठियों में निर्माणकाल हिजरी ६२७ ही मिलता है। पर ना० प्र० सभा द्वारा प्रकाशित संस्करण में जायसी ने निर्माणकाल यों दिया है—

सन् नव से सैतालीस धदा । क्या अरभ उन कवि कहा ॥

इससे जायसी ने पदमावत का आरंभ हि० सन् ६४७ में किया अर्थात् सन् १५६७ में। यह काल युक्तिसंगत भी जान पड़ता है क्योंकि जायसी ने पदमावत में शेरशाह सूरी की प्रशंसा की है जो उस समय दिल्ली का सुलतान था। मुसलमान आख्यान-लेखक तत्कालीन शासक की प्रशंसा करते थे। अतः यदि शेरशाह सूरी को तत्कालीन शासक मानें तो हिजरी सन् ६२७ को पदमावत का निर्माणकाल नहीं मान सकते। उस समय दिल्ली के तख्त पर उत्राहीम लोदी वर्तमान था।

‘पदमावत’ अपने समय में बहुत प्रचलित और लोकप्रिय ग्रन्थ हुआ। इसका अनुवाद बँगला में भी हुआ। अरकान राज्य के वजीर मगन ठाकुर को पदमावत बहुत प्रिय थी। उन्होंने अपने आश्रित एक ‘आलोउजालो’ नामक कवि से पदमावत का अनुवाद बँगला में कराया। अनुवाद बहुत ही उत्तम हुआ है। इस अनुवाद की हस्तलिखित प्रतियाँ मिली हैं जिनमें पदमावत का निर्माणकाल यो मिलता है—

“शेर मुहम्मद जति, जगन रचिल ग्रथि
संलग्न सप्तविंश नव शत।”

इसका अर्थ होगा कि शेर मुहम्मद ने जब ग्रन्थ की रचना की उस समय सन् था “नौ सै सत्ताइस”। यह अनुवाद सन् १७०० के लगभग हुआ था। अब यह विचारणीय है कि जायसी ने पदमावत की रचना कब की। इसके समाधान में दो बातें कही जा सकती हैं—

(१) या तो कवि ने—जैसा कि मिश्रवधु कहते हैं—ग्रन्थ (पदमावत) का आरम्भ हिजरी सन् ६२७ में किया जिस समय इब्राहीम लोदी शासन करता था पर शेरशाह सूरी के सुल्तान होने पर उन्होंने बदना बनाई।

(२) पदमावत की प्रतियाँ अधिकतर उर्दू लिपि में मिलती हैं। संभव है, और अधिक संभव है कि जायसी ने स्वयं उसे उर्दू लिपि में लिखा हो। उर्दू में ‘सत्ताईस’ और ‘सैतालीस’ लिखने पर उनमें अधिक अंतर नहीं होता। थोड़े

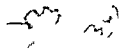
से भ्रम में सँतालीस का सत्ताईस पढा जा सकता है। उर्दू लिपि की यह कठिनाई जगत्प्रसिद्ध है। कितनी बार लोगों ने कुछ का कुछ पढ लिया है। लायलपुर (पंजाब) के पते से भेजी हुई एक रजिस्टरी के मिर्जापुर में डेलिवर हो जाने का उल्लेख स्वर्ग० वायू जगन्मोहन वर्मा ने चित्रावली की भूमिका में भी किया है। अतः यह नितांत अमाननीय नहीं कि जायसी ने पदमावत में निर्माणकाल ६४७ ही लिखा हो पर उर्दू लिपि में लिखने के कारण कुछ लोगों ने उसे ६२७ पढा हो कुछ लोगों ने ६४७।

पदमावत की कथा

सिंहलद्वीप अति सुंदर द्वीप है। अन्य द्वीपों से उसकी सुंदरता बढ़-चढ़कर है। यहाँ का राजा गधर्वसेन है। उसका प्रताप चारों ओर फैला है। उसके पास असह्य सेना है। उसकी रानी चपावती को पदमावती नामक अपूर्व सुंदरी कन्या उत्पन्न हुई। उसने एक हीरामन नामक सूअरा पाल रखा था। हीरामन बड़ा बुद्धिमान् था। युवावस्था प्राप्त होने पर भी पदमावती का पिता उसके विवाह की कोई परवा नहीं करता था। एक दिन पदमावती ने अपने प्रिय शुक से अपनी मनोव्यथा कही। उसने कहा “प्रिय शुक, मुझे दिन पर दिन मदन सता रहा है, पर मेरे पिता मेरे विवाह का कोई आयोजन नहीं करते।” शुक ने उत्तर दिया “जो भाग्य में लिखा है वही होगा। यदि आप आज्ञा दें तो मैं

जाकर देश-विदेश में आपके लिए कोई वर खोजूँ।” उन दोनों की बातचीत कोई सुन रहा था। उसने जाकर राजा से चुगली साईं। इस पर राजा ने क्रुद्ध होकर शुक को मार डालने की आज्ञा दी। पद्मावती ने बड़ी विनती और युक्ति से उसकी जान बचाई। एक दिन वह अपनी सरियों के साथ मानसरोवर में नहाने गई। इसी बीच शुक के पिंजरे को बिल्ली ने आ घेरा। वह मौका पाकर अपनी जान बचाकर वन की ओर उड़ गया। वहाँ वह एक चिड़ीमार के जाल में पड़ गया। वह उसे लेकर चला। पद्मावती को जब शुक के उड़ जाने का समाचार मिला तब वह प्रत्यत दुखी हुई। उसने बड़ा शोक मनाया। शुक को लेकर बहेलिया सिधलदीप की हाट में बेचने को चला। वहाँ चित्तौरगढ़ का एक ब्राह्मण भी कुछ व्यापार करने की अभिलाषा से आया था। उसने उस शुक को खरीद लिया और घर की ओर लौट पड़ा। जब वह चित्तौर पहुँचा तब शुक के गुणों की चर्चा चारों ओर फैलने लगी, फैलते-फैलते राजा के कानों तक जा पहुँची।

चित्तौरगढ़ का राजा रतनसेन था। उसने जब शुक के गुण का हाल सुना तब उसने ब्राह्मण को बुलाया और शुक को मुँहमार्गे मूल्य पर खरीद लिया। वह उसे बड़े प्रेम से अपने यहाँ रखने लगा। उसकी रानी नागमती बड़ी सुदरी थी। एक दिन नागमती राजा की अनुपस्थिति में शृ गार करके शुक के समीप आई और पूछने लगी “क्यों शुक, मेरे जैसा



रूप तुमने कहीं देखा है ?” शुक हीरामन पदमावती का ध्यान करके हँस पड़ा और कहने लगा “सिंघल की नारियों का क्या हाल पूछती हो ? उनकी बरामरी सत्तार में कोई नहीं कर सकता ।” यह सुनकर नागमती बड़ी रुष्ट हुई । उसने शुक को मार डालने की आज्ञा दी । धाय ने शुक को छिपाकर रानी से कहा कि वह मार डाला गया ।

राजा रतनसेन जब शिकार से लौटा तो उसने शुक की खोज की । उसने नागमती से कहा ‘या तो शुक को ला या स्वयं अपनी जान दे ।’ नागमती बड़े सकट में पड़ी । अंत में धाय ने शुक ला दिया तब राजा प्रसन्न हुआ । शुक के मिलने पर राजा ने उससे सभी बात पूछी । उसने पदमावती के रूप-गुण की चर्चा की । वह उस पर मुग्ध हो गया । लोगों के लाख समझाने पर भी उसने निश्चय किया कि पदमावती को अवश्य अपनाऊँगा । वह योगी होकर अपने साधियों को लें शुक को आगे कर सिंघल द्वीप की ओर चल पड़ा । मार्ग में अनेक कष्टों को भेड़कर वह समुद्र-तट पर पहुँचा और ‘गजपति’ की सहायता से उसने घोहित लेकर समुद्र पार करना निश्चय किया । चार, खीर, दधि, उदधि, सुरा, किल-किला और मानसरोवर आदि सात समुद्रों को पार करता हुआ वह सिंघल द्वीप में पहुँचा । वहाँ पर महादेव का एक मंदिर था, जहाँ रतनसेन अपने साधियों के साथ बैठकर तप करने लगा । शुक को उसने पदमावती के पास भेज दिया ।

शुक ने जाते समय राजा से कहा कि वसंतपक्षमी को पदमावती यहाँ पूजा करने आवेगी तब आपसे भेंट होगी ।

शुक को बहुत दिन के बाद देखकर पदमावती बड़ी प्रसन्न हुई । हीरामन ने अपना सारा हाल कह सुनाया और रतन सेन के पहुँचने का समाचार भी दिया । पदमावती उस पर मुग्ध हो गई । उसने प्रतिज्ञा की कि राजा के गले में जयमाल डालूँगी । इसके पश्चात् शुक राजा के पास लौट आया । पदमावती वसंतपक्षमी के दिन उस महादेव के मंडप में पहुँची और उससे राजा का साक्षात् हुआ पर राजा उसे देखते ही मूर्छित हो गया । उसके मूर्छित होने पर पदमावती ने उसके वक्ष स्थल पर चदन से लिप्ट दिया "जोगी, तू अभी भिक्षा प्राप्त करने योग्य नहीं है, तू ठीक मौके पर सो जाता है ।" यह लिप्टकर वह चली गई ।

पदमावती के चले जाने पर राजा को होश हुआ । वह बहुत पछताने लगा । उसने प्राण देने का निश्चय किया । यह समाचार सुनकर सब देवता घबरा उठे । महादेव और पार्वती ने वेश बदलकर उसकी परीक्षा करने का निश्चय किया । पार्वती ने अप्सरा का रूप धारण किया और राजा से कहने लगी कि मैं ही पदमावती हूँ । राजा को सच्चा प्रेम था । उसने उत्तर दिया कि तू पदमावती नहीं है । पार्वती को विश्वास हो गया कि उसे सच्चा प्रेम है । उसने महादेव से कहा कि इसकी रक्षा करनी चाहिए । राजा ने महादेव और

पार्वती का यथार्थ रूप पहचान लिया और उनकी स्तुति करने लगा। महादेव ने प्रसन्न होकर सिद्धिगुटिका उसे दी और सिंघलगड में उसे घुसने की आज्ञा दी।

योगियों ने गड जा घेरा। राजा के दूत आए और उनका अभिप्राय पूछने लगे। उन्होंने उत्तर दिया कि हमें 'पदमावती' चाहिए। इस पर दूत क्रुद्ध होकर चले गए और राजा से सब हाल जा सुनाया। वह बड़ा क्रुद्ध हुआ। योगियों ने गड के भीतर प्रवेश किया। वे राजा की आज्ञा से पकड़ लिए गए। रतनसेन को सूली देने की आज्ञा हुई। वह इस पर बड़ा प्रसन्न हुआ। उपस्थित लोगों ने कहा कि अवश्य यह कोई राजकुमार है। महादेव और पार्वती रतनसेन की सहायता को आ पहुँचे। महादेव ने (जो भाँट के वेश में थे) राजा को बहुत समझाया कि यह जोगी नहीं राजा है, यह पदमावती के योग्य वर है इससे अपनी कन्या का विवाह करो। राजा ने न माना। इस पर लड़ाई की तैयारी हुई। योगियों की तरफ से देवता भी थे। देवताओं की शरध्वनि सुनकर राजा घबरा गया और उसने महादेव का असली रूप पहचानकर उनसे क्षमा माँगी और कहने लगा कि "कन्या आपकी है, चाहे जिससे उसका विवाह कीजिए।"

इसी बीच हीरामन शुक ने आकर राजा को चितौर का सारा हाल कह सुनाया। गधर्वसेन रतनसेन के साथ पदमावती का विवाह करने पर राजी हुआ। विवाह शुभ अवसर

शुभ घड़ी में हुआ। रतनसेन अपने साथियों के साथ सिंधल में रहकर सुख लूटने लगा। उसकी अनुपस्थिति में उसकी रानी नागमती बहुत दुखी हो रही थी—उसके विरह-विलाप से पशु-पक्षी तक दुखी होते थे। एक दिन, रात को, एक पक्षी ने उमका रोदन सुना। उसके दुःख पर तरस लाकर उसने प्रतिज्ञा की कि मैं तुम्हारा सदेश रतनसेन के पास पहुँचाऊँगा। सदेश लेकर वह सिंधल पहुँचा और एक वृक्ष पर बैठकर सुस्ताने लगा। सयोग से रतनसेन शिकार खेलता हुआ उसी वृक्ष के नीचे थककर आ बैठा।

पक्षी उस वृक्ष पर बैठकर एक दूसरे पक्षी से बातचीत कर रहा था। उसने नागमती का कष्ट कह सुनाया। राजा ने उन दोनों की बात सुनी। वह व्याकुल हो उठा और उसने अपने राज्य को लौटने की ठानी। रतनसेन अपने राज्य को लौटने की तैयारी करने लगा। उसने पद्मावती को साथ लिया। राधर्वसेन ने उसे असख्य धन दिया। सब ले-देकर वह जहाज पर सवार हुआ। समुद्र-तट पर उसे समुद्र भिक्षुक के रूप में मिला। उसने राजा से दान माँगा। राजा ने लोभ-वश उसे कुछ न दिया। जहाज पर चढ़कर राजा जब आधे समुद्र में आया तब तूफान बड़े जोर का आया और उसका जहाज लुका की ओर बह चला। वहाँ विभीषण का एक केवट मछली मार रहा था। उसने राजा को भर-माना चाहा। राजा को अपनी बातों में लाकर वह जहाज

को एक भयकर समुद्र में ले चला। वहाँ पहुँचकर जहाज डूबने-डूबने होने लगा। तब राजा बहुत घबराया। इसी बीच में एक पत्नी आकर उस राक्षस को ले उठा। राजा का जहाज फट गया। वह एक पट्टे पर एक ओर वह चला और रानी पद्मावती दूसरी ओर।

पद्मावती वहते-वहते एक तट पर लगी। पास ही में समुद्र की कन्या लक्ष्मी खेल रही थी। उसने उसे बचाया। वह उसे अपने घर ले गई और आदर से अपने यहाँ रखा। इधर राजा वहते-वहते एक दूसरे निर्जन तट पर जा लगा। वहाँ पहुँचकर वह बहुत विलाप करने लगा। अंत में दुखी होकर वह अपनी हत्या करने पर तैयार हुआ। उसको ऐसा करने के लिये उद्यत होते देव समुद्र, ब्राह्मण का रूप धरकर, उसे रोकने को उपस्थित हुआ और उसे लेकर पद्मावती के पास पहुँचा।

राजा जिस समय पद्मावती के पास पहुँचा उस समय लक्ष्मी उसको परीक्षा लेने को रास्ते में मिली। उसने चाहा कि राजा को भरमावे पर वह सच्चा प्रेमी था। अंत में प्रसन्न होकर लक्ष्मी ने उसे पद्मावती से मिला दिया। समुद्र की कृपा से राजा को उसके अन्य साथी भी मिले और वह सब को लेकर घर चला। चलते समय समुद्र ने उसे अमृत, हंस, राजलक्ष्मी, शार्दूल और पारस पत्थर उपहार में दिए। सब कुछ लेकर रत्नसेन चित्तौर पहुँचा और पद्मावती तथा

नागमती के साथ सुख से रहने लगा । नागमती से नागसेन और पद्मावती से कमलसेन नामक पुत्र हुए ।

रतनसेन की सभा में राघव चैतन नामक एक पंडित था जिसने यक्षिणी को सिद्ध किया था । एक दिन रतनसेन ने पूछा 'द्विज कब है' । राघव के मुँह से निकल पडा 'आज' । अन्य लोगो ने कहा—'आज नहीं हो सकती, कल है' । राघव अपनी बात पर अड गया । उसने यक्षिणी के प्रभाव से उस दिन द्विज दिखा दी । अत में दूसरे दिन बात खुली तो राघव देश से निकाल दिया गया । उसका निकाला जाना सुनकर पद्मावती बड़ी चिंतित हुई । उसने उसे बुलवा भेजा और दान देकर प्रसन्न करना चाहा । रानी ने अपने हाथ का एक ककण उसे दान दिया । इसे लेकर राघव दिल्ली पहुँचा । वहाँ उसने सुल्तान अलाउद्दीन से सारा हाल कहकर पद्मावती की सुदरता का वर्णन किया । अलाउद्दीन पद्मावती की सुदरता का हाल सुनकर उस पर मुग्ध हो गया । उसने चित्तौर पर चढाई करने की ठानी । उसने सरजा नामक दूत को चित्तौर भेजा । राजा यह सुनकर बडा क्रुद्ध हुआ । उसने कहा 'जीते जी यह हो नहीं सकता' । सुल्तान ने आखिर चित्तौर पर चढाई कर दी । आठ व^१ तरु मुसलमान चित्तौर घेरे रहे पर कुछ न हुआ, अत में सुल्तान ने एक चाल चली । उसने प्रकट में राजा से मित्रता की और चित्तौर दावत खाने गया । रतनसेन के यहाँ गोरा-बादल

दो घोर घं । वे इत फपट फो समझ गए । उन्होंने राजा फो म्बरदार क्रिया पर राजा ने एक न मानी ।

चिचौर में कई दिन तक सुल्तान फी खातिरदारी होती रही । एक दिन सुल्तान राजा फे साथ शतरज खेलने लगा । मयाग से पदमावती ऊपर झरोखे पर बैठकर देख रही थी । षादशाह ने उसका प्रतिविम दिवाल पर लगे हुए आइने में देखा । उसे देखकर वह मुग्ध हो गया—उसे मूर्च्छा आ गई । राघव ने समझाया कि वही पदमावती थी । अतमें षादशाह ने विदा माँगी । राजा उसे पहुँचाने चला । अपने किले से बाहर होते ही राजा सुल्तान फे सिपाहियों द्वारा पकट लिया गया और वदी फरफे दिल्ली भेजा गया । कारागार में उसे अनेक प्रकार फे कृश दिए जाने लगे । इधर चिचौर में हाहाकार मच गया, दोनों रानियाँ सती होने को तैयार हुई । गौरा-षादल पदमावती फे फहने पर, उनकी सहायता करने पर उद्यत हुए ।

सुल्तान फे यहाँ दिछो में चिचौर से सोलह सै पालकियों पर चढकर सिपाही पहुँचे । षादशाह से कहा गया कि पदमावती आई है । वह एक वार राजा से मिलना चाहती है । फिर सुल्तान फे महल में रहेगी । षादशाह ने इसे मान लिया और राजा से मिलने फी आहवा दे दी । रतनसेन फे वदीगृह में वह पालकी पहुँचाई गई जिसमें एक लोहार बैठा था । उसने राजा फी बेडी तुरत काट दी और

राजा घोड़े पर सवार होकर भागा । अन्य छिपे हुए सिपाहियों ने उसकी रक्षा की । इस प्रकार शाही सेना को मारकाटकर लोग रतनसेन को छुड़ा लाए । रतनसेन जब चित्तौर पहुँचा तो उसने देवपाल की शरारत सुनी । उसने राजा की अनुपस्थिति में पदमावती को बहकाने के लिए दूती भेजी थी । वह क्रोध से लाल हो गया और देवपाल से लड़ने को उद्यत हो उठा । दोनों राजाओं में लड़ाई हुई । इस द्वंद्व में देवपाल मारा गया । उसकी साँग से रतनसेन बेतरह घायल हुआ । मरते समय उसने चित्तौर की रक्षा का भार बादल पर सौंपा ।

रतनसेन के शव को लेकर उनकी दोनों रानियाँ सती हुईं । उनके सती होने के पश्चात् शाही सेना चित्तौर पहुँची । सती होने का समाचार बादशाह ने सुना । वह हाथ मलकर रह गया ।

पदमावत की कथा का आधार

पदमावत की कथा का आधार ऐतिहासिक है, पर थोड़े अंशों में । भारतीय इतिहास में अलाउद्दीन और चित्तौर के भीमसिंह की कथा प्रसिद्ध है । कहते हैं कि भीमसिंह की स्त्री पद्मिनी अपूर्व सुंदरी थी । उसकी सुंदरता का वर्णन सुनकर अलाउद्दीन ने चित्तौर पर चढ़ाई की और भीमसिंह को हराया । उसने सधि करने के उद्देश से कहला भेजा कि यदि पद्मिनी का चित्र मुझे दिखा दिया जाय तो मैं दिल्ली लौट जाऊँगा । अलाउद्दीन की यह बात राजा ने मजूर कर ली और पद्मिनी की

छाया दर्पण में उसे दिखा दी गई । अलाउद्दीन उसके रूप पर और भी मुग्ध हो गया और उसने चाल से भीमसिंह को कैद कर लिया । अलाउद्दीन ने चित्तौर में कहला भेजा कि जब तक पद्मिनी न भेजी जायगी तब तक राजा को मुक्त न किया जायगा ।

यह समाचार सुनकर पद्मिनी ने एक ढग निकाला । उसने अपने मायके से गोरा-नादल नामक दो वीरों को बुला भेजा और उनसे सहायता करने को कहा । दोनों ने एक युक्ति सोची । उन्होंने बादशाह को कहला भेजा कि 'पद्मिनी तुम्हारे पास रहने को तैयार है ।' उन दोनों ने बहुत से वीरों को सुमज्जित कर पालकी में बैठाया और सब बादशाह के शिविर में पहुँचे । सुल्तान को सूचित किया गया कि पद्मिनी आ रही है, वह पहले अपने पति से भेंट करना चाहती है । अलाउद्दीन ने उसकी इच्छा-पूर्ति के लिए आज्ञा दे दी । वेश बदले हुए सब राजपूत भीमसिंह के पास पहुँचे । उन्हें लेकर वे चित्तौर की ओर चले । अलाउद्दीन को शक हुआ । उसने पीछा किया । भीमसिंह सकुशल चित्तौर पहुँच गया । गोरा-नादल खूब लडे । गोरा युद्ध में मारा गया और बादशाह अपना मुँह लेकर वापस गया ।

इस कथा को थोड़े हेर-फेर से अन्य लोगों ने भी लिखा है । आईन अक़बरी में भीमसिंह के स्थान पर रतनसिंह नाम मिलता है । इसके अनुसार रतनसिंह की मृत्यु अलाउद्दीन

के साथ युद्ध में हुई। पद्मिनी पति के साथ सती हुई। जो हो, सीधी-सादी कथा यह जान पड़ती है कि रतनसेन चित्तौर के राजा थे। उनकी पत्नी पद्मिनी या पद्मावती अपूर्व सुंदरी थी। उसके रूप की चर्चा सुनकर अलाउद्दीन ने उसे पाने की इच्छा से चित्तौर पर चढ़ाई की। युद्ध में राजा ने उसे कई बार हराया, पर अंत में उसने सधि की और पद्मावती को बादशाह ने देखा। उसने धोखे से राजा को कैद कर लिया। गौरा-बादल सुलतान को धोखा देकर राजा को छोड़ा ले गए। राजा मारा गया और पद्मावती उसके साथ सती हो गई। बादशाह को कुछ न मिला। वह रिसिया कर रह गया।

इस ऐतिहासिक कथा का प्रचार भारत में बहुत प्रबलता के साथ हुआ। प्रायः सभी प्रांतों में इसका कोई न कोई रूपांतर प्रचलित हुआ। उत्तरी भारत, विशेष कर अजमेर में इसके आधार पर एक कहानी प्रचलित हुई जिसका नाम था हीरामन सूत्रा और पद्मिनी रानी की कहानी। अभी तक अशिक्षित जनता में यह किसी न किसी रूप में पाई जाती है। गाँवों में प्रायः लोग इसे कहा करते हैं। जान पड़ता है, जायसी ने उसी प्रचलित कहानी को लेकर अपना काव्य खड़ा किया है। वे इतिहास के अधिक जानकार थे अतः जो अंश उन्होंने लिया है, ठीक लिया है। कथा में बहुत कुछ अंश कवि को अपनी ओर से मिलाना पड़ा है जैसे पद्मिनी को

सिंहलराज की कन्या मानना । सिंहल में पद्मिनी स्त्रियों का होना केवल गोरक्षपथी साधु मानते हैं । इस विचार के आधार पर जायसी ने पदमावती को सिंहल की माना और उसके पिता का नाम गधर्वसेन रखा जो केवल कल्पित है । सिंहल तक की यात्रा आदि सारी बातें कवि को अपनी कल्पना-द्वारा पूर्ण करनी पड़ी हैं । यदि वह ऐसा न करता तो उसके काव्य की कथा अपूर्ण रह जाती । यह कहना ठीक है कि रतनसेन और पदमावती के सवध के पूर्व की सारी बातें कवि को केवल कथा की भूमिका बाँधने के लिए लिखनी पड़ी हैं । यदि ऐसा न किया जाता तो न तो कवि नायक और नायिका का 'प्रयत्न' ही लिख सकता और न उसका काव्य ही पूर्ण होता ।

प्राचीन पद्धति के अनुसार जायसी अपने काव्य में अलौकिक वस्तुओं को लाने में भी नहीं हिचके हैं जैसे शुक का मनुष्य की भाँति बातचीत करना, राक्षस का मिलना आदि । प्राचीन विश्वास के अनुसार कवि को ऐसा करने में हिचक नहीं हुई । कादवरी में भी इसी प्रकार शुक बातचीत करता है । राक्षस आदि का वर्णन प्रायः भारतीय सभी प्राचीन आख्यायिकाओं में कुछ न कुछ मिलता है । इन इनी-गिनो बातों को छोड़कर पदमावत में हम कोई और अलौकिकता तथा अस्वाभाविकता नहीं पाते । पात्र प्रायः सजीव व्यक्तियों की भाँति आचरण करते हुए पाए जाते हैं । उनके आचरण किसी प्रकार अलौकिक या अस्वाभाविक नहीं दिखाई पड़ते ।

पदमावत की विशेषता

प्रायः सभी मुसलमान आख्यान-लेखक सूफी संप्रदाय के थे। सूफी मतानुसार ईश्वर की कल्पना प्रियतम के रूप में की जाती है। 'उपासना के व्यवहार के लिए सूफी परमात्मा को अनंत सौंदर्य, अनंत शक्ति और अनंत गुणों का समुद्र मानते हैं।' सूफी मत भारतीय अद्वैतवाद से बहुत कुछ मिलता-जुलता है। प्रोफेसर ब्राउन का मत है कि वह भारतपर्यटन के वेदात का रूपांतर है। सूफी मत इस्लाम धर्म के विरुद्ध है। इस्लाम धर्म में सासारिक पदार्थों के उपभोग को ही आनंद मानते हैं और स्वर्ग में इन्हीं वस्तुओं के पाने की इच्छा रखते हैं। सूफी मत में स्वर्ग में 'प्रभु' का दर्शनमात्र अभीष्ट है। कवि 'मीर' इस पर फरमाते हैं—

शेख तुम्हें जन्नत मुझे दीदार ।
वा भी हर एक की जुदा किस्मत ॥

सूफी, सच्चे सूफी होने के लिये प्रथम तृष्णा और मोह का दमन अत्यन्त आवश्यक समझते हैं। सूफियों को नमाज-रोजे से कम वास्ता रहता है। अंत शुद्धि ही उनके मोक्ष का पक्का साधन है। यद्यपि जगत् सूफियों के लिये मिथ्या मृगतृष्णा है, ईश्वर निराकार है पर हमारे यहाँ के निर्गुण-वादियों से भिन्न वे ईश्वर का सुंदर रूप जगत् के सारे सुंदर पदार्थों में देखते हैं। वे सारे जगत् को ईश्वर के 'प्रेम की पीर' से व्यथित देखते हैं—प्रेम की पुकार उन्हें सर्वत्र सुनाई देती है।

किसी ने सूफी भाव का सच्चा स्वरूप इस प्रकार प्रकट किया है—

‘दरियाय इश्क वह रहा है लहरो मे वेशुमार’

प्रेम को आनन्द में मग्न होना, सौंदर्य और सदाचार की मदिरा पीकर मस्त होना सूफियों की परमोपासना है। इस सिद्धांत के अनुसार भावों की भरमार हम उर्दू और फारसी-साहित्य में देखते हैं। हिंदी-साहित्य में केवल मुसलमानों-द्वारा लिखे आल्यानो में हमें इसका मधुर रूप देखने का मिलेगा।

जायसी सूफी संप्रदाय के थे। पदमावत में उन्होंने अपने मत की भली भाँति व्यंजना की है। पदमावत में जहाँ कहीं प्रेम का वर्णन आया है वहाँ कवि उसे लौकिक पक्ष से उठाकर अलौकिक की ओर ले गया है। स्वयं कवि ने सारी कथा अन्योक्ति समझकर लिखी है। वे स्वयं अत में लिखते हैं—

तन चितउर मन राजा कीन्हा । हिय संघल बुधि पदमिनि चीन्हा ।
गुरु सुआ जेइ पथ दिखावा । बिलु गुरु जगत को निर्मल पावा ।
नागमती दुनिया कर धधा । बाँचा सोइ न एहि चित धधा ।
राघन दूत सोइ सैतानू । माया अलाउदीन सुल्तानू ।

सारे पदमावत में हमें आध्यात्मिक प्रेम का आभास मिलेगा, चाहे वह वियोग अवस्था में हो चाहे सयोग। इतना ही नहीं,

प्राकृतिक वर्णन करते-करते कवि को ससार के सारे पदार्थ उस परमात्मा के प्रेम की पीर से व्यथित दिखाई पड़ते हैं। जायसी ने सूफी मत के सच्चे अनुयायी की भाँति पदमावत में विश्वव्यापी विरह की व्यजना स्थान-स्थान पर की है—जैसे,

विरह के आगिःसूर जरि काँपा । रातिव दिवस जरे श्रोहि तापा ।
इत्यादि ।

जायसी की भाषा

जायसी ने पदमावत में अवधी भाषा का प्रयोग किया है। यह अवधी तुलसीदास की रामायण की भाषा की भाँति साहित्यिक नहीं है वरन् ठेठ प्रचलित भाषा है। अवधी का प्रचार अवध, आगरा प्रदेश, ववेलखण्ड, छोटा नागपुर और मध्यप्रदेश के भागों में है। अवधी के दो भेद माने जाते हैं—पूर्वी और पश्चिमी। पश्चिमी अवधी लखनऊ से कन्नौज तक बोली जाती है, पूर्वी गोडा और अयोध्या के पास। जायसी की भाषा पूर्वी अवधी है। ये अधिकतर जायस में रहे जो पूर्वी अवधी की सीमा के भीतर है।

अवधी की माता अर्धमागधी है। प्राचीन समय में गंगा और यमुना की उपत्यका में दो प्राकृतों का प्रचार था—मागधी और शौरसेनी। पूर्वी भाग में मागधी बोली जाती थी, पश्चिमी में शौरसेनी। इन दोनों के मध्य में जो भाषा प्रचलित थी वह अर्धमागधी के नाम से विख्यात थी। इसी

अर्धभागधी से अवधी की उत्पत्ति हुई है। जायसी की भाषा को हम अवधी का प्राचीन उदाहरण कह सकते हैं। इनके पूर्व के मुसलमान आख्यान-लेखकों ने अवधी भाषा का प्रयोग अपनी भाषा में किया था पर जायसी जायस के रहनेवाले थे अतः उन्होंने अवधी के जिस शुद्ध रूप का प्रयोग किया है वह अधिक प्रामाणिक है। जायसी की भाषा को समझने के लिये अवधी भाषा के व्याकरण का सक्षिप्त ज्ञान कर लेना आवश्यक है। सन्तोप में वह यहाँ दिया जाता है।

सज्ञा और सर्वनाम

अवधी में प्रायः सबाएँ तद्भव रूप में पाई जाती हैं। अधिकतर तो ऐसी होंगी जिनका सबंध प्राकृत से मिलेगा। कितनी का रूप अभी तक प्राकृत की भाँति है। अवधी के 'वा', और 'आना' के स्थान में ब्रजभाषा और रण्डी बोली में क्रम से 'औ' और 'आ' होता है। अवधी में लघ्वन्त करने की प्रवृत्ति है और ब्रज और रण्डी में दीर्घान्त। यह प्रवृत्ति सर्वनामों में भी पाई जाती है। वचन के विषय में यह ध्यान देने की बात है कि जब तक सज्ञा में कारक-चिह्न नहीं लगता तब तक उनका रूप एक वचन सा ही रहता है।

जायसी ने 'तू' या 'तैं' के स्थान पर 'तुई' प्रयोग किया है। यह रूप कन्नौजी और पश्चिमी अवधी का है।

श्रवणी के सर्वनामों का रूप इस प्रकार है—

सर्वनाम

विकृत

सवध

कर्ता

विकृत

सवध ।

एक वचन

बहुवचन

सर्वनाम	कर्ता	विकृत	सवध	कर्ता	विकृत	सवध ।
मैं	मैं	मैं	मैं	हम	हम, हमारे	हमार, हमरे
तू	तू	तू	तू	तुम, तु	तुम, तुम्हारे	तुम्हार, तुम्हरे तोहार, तोहरे
आप	आप	आपु	आपन	आप	आप	आपन
यह	ई	ए, एह, एहि	एकर, एहिकर	इन, ए	इन	इनकर, इनकर
जो	जो, ज, जौन, जेइ (जायसी)	जे, जेहि	जेकर, जेहिकर	ज	जिन	जिनकर, जिनकर
वह	ऊ,	ओ, ओहि, ओहि	ओकर, ओहिकर	वे, उन	ओन, उन	ओनकर, ओनकर
सो	सो, से, तौन,	ते, तेहि	तेकर, तेहिकर	ते	तिन	तिनकर, तिनकर
कौन	को, कौन, के, केइ (जायसी)	के, केहि,	केकर, केकर	को, के	किन	किनकर, किनकर

कारक

कारक दो प्रकार से व्यक्त होते हैं। कुछ में तो प्राकृत और अपभ्रंश की भाँति 'ह' और 'हि' विभक्तियाँ लगती हैं। इन विभक्तियों का प्रयोग प्रायः सभी कारकों में होता है। ये विभक्तियाँ अभी तक सयोगावस्था में हैं। वियोगावस्था के कारक-चिह्न ये हैं।

कर्ता—ए (साहित्य में आकारात शब्दों में सकर्मक भूत क्रिया के साथ)

कर्म—के, काँ, कहँ

करण—सेँ, सन, से, मों (केवल पश्चिमीय अवधी)

सद्दान—के, काँ, कहँ

अपादान—सेँ, तें, मेती, ँत

सवध—कर, क, केर, कै (खो०) केरी (खो०)

अधिरूपा—मे महेँ, माँ, पर

जायसी ने अपादान कारक के लिये 'भै' या भए' का प्रयोग किया है। इस विभक्ति से करण कारक का भी काम लिया है जिसका अर्थ 'कारण' और 'द्वारा' होता है।

सवध कारक में लिंग-भेद हिंदी में पाया जाता है। बोल चाल की अवधी में यह भेद नहीं होता पर साहित्य में यह दिखाई पड़ता है।

क्रियाएँ

अवधी में तिङत क्रियाएँ शरारत मिलती हैं। कृदन्तमूलक क्रियाओं का पता कहाँ-कहाँ उनके लिंग भेद से होता है

साधारण क्रिया (Infinitive) का रूप लघ्वत
ब्रकारात् होता है। जैसे, आउव, जाव, करव, खाव,
पीयव, पढव, लिखव, सुनव, रहव, होव, कहव, सुनव
इत्यादि।

अवधी में भविष्यत् क्रिया का केवल तिङ्गत रूप है जिसमें
लिंगभेद होता ही नहीं। ब्रज और खड़ी में 'गा' और 'गी'
से लिंगभेद स्पष्ट होता है।

उच्चारण

उच्चारण के कुछ साधारण नियम ये हैं।—

(१) दो से अधिक वर्णों के शब्दों में यदि आदि में 'इ' या
'उ' की मात्रा हो तो इनके उपरांत 'आ' का उच्चारण अवधी में
होगा—जैसे, सियार, बियाज, बियाह, दुआर, कुआर,
गुवाल, ब्रज और खड़ी में सधि से काम लिया जायगा जैसे
स्यार, व्याज, ब्याह, द्वार, कार, ग्वाल।

(२) 'अ' और 'आ' के उपरांत अवधी में 'इ' अधिक
आवेगा। यथा—आइ, जाइ, खाइ, आइहै, जाइहै, खाइहै।
अवधी के 'इ' के स्थान में ब्रज में 'य' आवेगा जैसे—आय,
जाय, खाय, आयहै, जायहै, खायहै।

(३) पद के आदि में 'ऐ' और 'औ' का उच्चारण अवधी
में 'अइ' और 'अउ' की भाँति होगा। यथा ऐस = अइस,
जैस = जइस। दैरि = दउरि।

(४) पदान्त 'ऐ' और 'औ' का उच्चारण अवधी में भी व्रज की भाँति 'अय' और 'अव' सा होगा, जैसे कहे = कहय, तपै = तपय, चलौ = चलव ।

जायसी की भाषा की कुछ विशेषताएँ

जायसी ने यद्यपि अपनी पदमावत में पूर्वी अवधी के व्याकरण का अनुसरण किया है पर कहीं-कहीं उनकी भाषा पर अन्य आसपास की भाषाओं का भी प्रभाव पड़ा है । यथा—

(१) ऊपर कहा जा चुका है कि अवधी में क्रिया में पुरुष, वचन और लिंग-भेद कर्ता के अनुसार होता है । पश्चिमी हिंदी में भूतकालिक सकर्मक क्रिया में पुरुष-भेद नहीं होता । जायसी ने कई स्थानों पर इसका अनुसरण किया है । यथा—

- (१) का मैं बोआ जनम ओहि भूँजो ।
- (२) तिन्ह पावा वत्तिम कैलासू ।
- (३) तुन्ह सिरजा यह समुद अपारा ।
- (४) भूलि चकोर दिष्टि तहँ लावा ।
- (५) अब तुम आइ अंतरपट साजा ।

(२) जायसी ने कई स्थानों पर सकर्मक भूतकालिक क्रिया में लिंग, वचन पश्चिमी हिंदी की भाँति कर्म के अनुसार रखा है । यथा—

बसिठन्ह आइ कही अस वाता ।

(३) कहीं-कहीं साधारण क्रिया का रूप अवधी की भाँति 'व'कारात् न होकर नकारात् मिलता है। जैसे—कित आवन पुनि अपने हाथा।

(४) कहीं-कहीं कारक चिह्न न लगने पर भी पश्चिमी हिंदी की भाँति सज्ञा में बहुवचन का रूप दिखाई देता है। यथा—

(१) नसँ भई सव ताति।

(२) जोवन लाग हिलोरँ लेई।

(५) कुछ ऐसे शब्दों का प्रयोग जायसी ने किया है जो ठेठ अवधी ऋ हैं। यथा—

रॉध, अहक, जहिया नौजि, तीवइ, महुँ, तहुँ, अधिकौ, इत्यादि।

(६) किसी समय (अपभ्रंश तथा प्राकृत काल) में सयध कारक की विभक्ति 'हि' या 'ह' भव कारको की विभक्ति का काम देती थी, पर पीछे से वह केवल कर्म और सप्रदान के लिये काम में आने लगी। जायसी ने प्राचीन प्रथा के अनुसार कहीं कर्ता में 'हि' विभक्ति का स्थानापन्न 'ऐ' का प्रयोग किया है।

(१) राजै (राजहि) कहा सुता कहु सूया।

(२) सूऐ (सुअहि) तहाँ दिन दम कलकारी।

यहाँ 'ऐ' 'ने' के स्थान पर आया है।

छंद

जायसी ने पद्मावत में सात चौपाइयों (अर्धालियों) के पीछे एक दोहा रखा है। प्राचीन कवि चद वरदाई ने अपने रासो में दोहे, चौपाई का प्रयोग किया है। चौपाई का नाम 'रासो' में 'पिञ्जक्यरी' कहा है। उदा०—

चरित त्वय साहाय चर, गण पास सुरतान ।

मजी सेन मामत पति, आयो योजन यान ॥

मुनि चरित माहाव नास वर योलि मीर वमराव मना भर ।

दिय निरघात घाव नीसांघ चलयो सेन सज्जै मन्थान ॥

दोहा लिखने की प्रथा प्राचीन है। प्राकृत और अपभ्रंश में 'दोधक' छंद मिलता है। दोहे, चौपाइयों का क्रम भिन्न-भिन्न कवियों ने भिन्न-भिन्न रखा है। जायसी के पूर्व कवियों ने (मझन, कुतुबन) पाँच चौपाइयों के बाद एक दोहा लिखा है। जायसी ने सात और जायसी के पीछे तुलसी ने रामायण में आठ चौपाइयों के पश्चात् एक दोहा रखा है। वास्तव में तुलसी की आठ चौपाइयों चार चौपाई हुईं। चौपाई का अर्थ चतुष्पदी है जिसका अर्थ है चार तुकांतपद। अतः दो चौपाइयाँ मिलकर एक चतुष्पदी होगी। मुसलमान कवियों ने अज्ञानवश आधी चौपाई (अर्धाली) को पूरी चौपाई मानकर पाँच और सात चौपाई का क्रम रखा है जो वास्तव में ढाई और साढ़े तीन चौपाई हैं।

दोहे और चौपाई के लिए अवधी भाषा विशेष रूप से उपयुक्त है। जितनी सुगमता से ये छंद अवधी भाषा में चलते

हैं उतनी अन्य भाषा मे नहीं । विहारी आदि कवियो ने सुदर दोहे लिखे हैं पर पदलालित्य मे वे अवधी में रचे दोहो को नहीं पहुँच सकते ।

खड-सूची

	पृष्ठांक
(१) पदमावती गड	१—१७
(२) रतनसेन गड	१८—३७
(३) प्रेम गड	३८—५८
(४) भेंट गड	६०—७४
(५) नागमती गड	७५—१०२
(६) राघव चेतन गड	१०३—१२३
(७) युद्ध गड	१२४—१४२
टिप्पणी	१—३४

संक्षिप्त पदमावत



(१) पदमावती खड

सुमिरा आदि एक करतारु । जेहि जिउ दीन्ह कीन्ह ससारु
 कीन्हेसि प्रथम जाति परकासू । कीन्हेसि तेइ परवत कलासू
 कीन्हेसि अगिन, पवन, जल, रेहा । कीन्हेसि बहुते रग उरेहा
 कीन्हेसि धरती, सरग, पतारु । कीन्हेसि वरन वरन औतारु
 कीन्हेसि दिन, दिनअर, ससि, राती । कीन्हेसि नरपत, तराइन-पांती
 कीन्हेसि धूप, सीउ औ छाँहा । कीन्हेसि मेघ, बीजु तेहि माँहा
 कीन्हेसि सप्त मही वरन्हा । कीन्हेसि भुवन चौदहो खड

कीन्ह सबै अस जाकर दूसर छाज न काहि । १ ॥
 पहिलै ताकर नाँवै लै कथा करौ आगाहि ॥ १ ॥

धनपति उहे जेहिक ससारु । सबै देइ निति, घट न भँडारु
 जावत जगत हासि औ चाँटा । सबकहँ भुगुति राति दिन चाँटा
 तारु दीठि जो सब उपराहा । मित्र सत्रु कोड विसरै नाहीं
 पखि पतंग न विसरै कोई । परगट गुपुव जहाँ लागि होई
 भोग भुगुति बहु भाति उपाई । सबै खवाइ, आप नहिं खाई

ताकर उहें जो ग्याना पियना । सब कहँ देइ भुगुति ओ जियना
सवै आस-हर ताकर आसा । वह न काहु के ग्राम निराना
जुग जुग देत घटा नहि उभै हाथ अस कीन्ह ।

और जो दीन्ह जगत महँ सो सब ताकर दीन्ह ॥ २ ॥

आदि एक वरना मंड राजा । आदि न अत राज जेहि छाजा
सदा मरवदा राज करेई । औ जेहि चहै राज तेहि टंड
छत्रहि अछत, निछत्रहि छावा । दूसरि नाहि जो सखरि पावा
परवत ढाह देस सब लोगू । चाटहि करै हस्ति सरि जोगू
वज्रहि तिनकहि मारि उडाई । तिनहिं वज्र करि देइ वडाई
ताकर कीन्ह न जानै कोई । करै सोइ जो चित्त न होई
काह भोग भुगुति सुख सारा । काह भूय बहुत दुख मारा
सवै नास्ति वह अहथिर ऐस साज जेहि केर ।

एक साजै, औ भाजै, चहै सवारै फेर ॥ ३ ॥

अलय अरु अवरन सो कर्ता । वह सब सो सब ओहि सो वरता
परगट गुपुत सो मरव-वियापी । वरमी चीन्ह, न चीन्है पापी
ना ओहि पूत, न पिता, न माता । ना ओहि कुटुंब, न कोई संग नाता
जना न काहु, न कोई ओहि जना । जहँ लगि सब ताकर सिरजना
वै सब कीन्ह जहा लगि कोई । वह नहि कीन्ह काहु कर होई
हुत पहिले अरु अब है सोई । पुनि सो रहै, रहै नहिं कोई
और जो हांड सं वाउर अघा । दिन दुइ चारि सरै करि वधा
ना यह मिला न वेहरा ऐस रहा भरिपूरि ।

दीठिवत कहँ नीयरे अध मूरुखहिं दूरि ॥ ४ ॥

कोन्हेसि पुरुष एक निरमरा । नाम मुहम्मद पूतो-करा
 प्रथम जेति त्रिधि तारुन साजी । श्री तेहि प्रीति सिहिटि उपराजी
 दीनकलेमि जगत कहँ दीन्हा । भा निरमल जग, मारग चीन्हा
 जौ न होत अम पुरुष उजारा । सूक्ति न परत पथ अंधियारा
 दुमरे ठाँ दव वै लिगे । भए धरमी जे पाढत सिखे
 जेहि नहि लीन्हा जनम भरि नाऊँ । ता कहँ कीन्हा नरक महँ ठाऊँ
 जगत वसौठ दुई ओहि कीन्हा । दुइ जग तरा नाउँ जेहि लीन्हा
 गुन अवगुन विधि पूछ्य होइहि लेख ओ जोख ।

१ वह विनुउव आगे होइ करव जगत कर मोर ॥ ५ ॥

सेरमाहि देहली सुलतानू । चारिउ गड तपै जस भानू
 श्रीही छाज छात श्री पाटा । सब राजे मुई धरा लिलाटा
 जाति सूर श्री साँडे सूर । श्री उधिवत सबै गुन प्रा
 मूर नवाए नय-सँड वई । मातउ दीप दुनी सब नई
 तहँ लागि राज खडग करि लीन्हा । इसकदर जुलकरन जो कीन्हा
 हाथ सुलेमाँ केरि अंगूठी । जग कहँ दान दीन्हा भरि मूठी
 श्री अति गरु भूमिपति भारी । टेकि भूमि सत्र सिहिटि सँभारी
 दीन्हा असीस मुहम्मद करहु जुगहि जुग राज ।

वादमाह तुम जगत के जग तुम्हार मुहताज ॥ ६ ॥

सैयद असरफ पार पियारा । जेहि मोहि पथ दीन्हा अंधियारा
 लेसा हिये प्रेम कर दीया । उठी जेति, भा निरमल हीया
 मारग हुत अंधियार जो सूझा । भा अँजोर, सब जाना वूझा
 खार समुद्र पाप मोर मेला । बोहित-धरम लीन्हा कै चेला

उन्ह मोर कर वूडत कै गहा । पायो तीर घाट जो अहा ।
 जाकहँ ऐस होइ कधारा । तुरत वेगि सो पावै पारा ।
 दस्तगीर गाढे कै माथी । वह अवगाह, दीन्ह तेहि हाथी ।

जहाँगीर वै चिस्तो निहकलक जम चाँद ।

वै मखदूम जगत के हैं ओहि घर के वाँद ॥ ७ ॥

ओहि घर रतन एक निरमरा । हाजी सेगु सवै गुन भरा
 तेहि घर दुइ दीपक उजियारे । पथ देख कहँ दैव मँवारे
 सेस मुहम्मद पून्यो-करा । सेस कमाल जगत निरमरा
 दुग्री अचल ध्रुव डालहि नार्हीं । मेरु खिरिद तिन्हहुँ उपराहीं
 दीन्ह रूप प्रौ जोति गोसाई । कीन्ह सभ दुइ जग के ताई
 दुहुँ सभ टेके मव मही । दुहुँ के भार सिहिटि धिर रही
 जेहि दरसे औ परसे पाया । पाप हरा, निरमल भइ काया
 मुहमद तेइ निचिंत पथ जेहि सँग मुरासद पीर ।
 जेहिके नाव औ खवरु वेगि लाग सो तीर ॥ ८ ॥

गुरु मेहदी सेवक में सेवा । चलै उताइल जेहि कर सेवा
 अगुआ भयउ सेस वुरहानू । पथ लाइ मोहि दीन्ह गियानू
 अलहदाद भल तेहि कर गुरु । दीन दुनी रोसन सुरखुरू
 सैयद मुहमद कै वै चेला । सिद्ध-पुरुष-सगम जेहि खेला
 दानियाल गुरु पथ लखाए । हजरत ख्वाज खिजिर तेहि पाए
 भए प्रसन्न ओहि हजरत ख्वाजे । लिये मेरइ जहँ सैयद राजे
 ओहि सेवत मैं पाई करनी । उधरी जीभ, प्रेम कवि वरनी

वै सुगुरु हौं चेला निति प्रिनयौ भा चेर ।

उन्ह हृत देगै पायउँ दरम गासाई केर ॥ ९ ॥

एरुनयन कवि मुहमद गुनी । सोइ विमोहा जेहि कवि सुनी
चाँद जैस जग विधि औतारौ । दीन्ह कलरु, कीन्ह उजियारा
जग सूझा एक नयनाहाँ । उआ सूक जम नखतन्ह माहाँ
जौ लहि अरहि उअ न हाई । तौ लहि सुगँध वसाड न सोई
कीन्ह समुद्र पानि जो रारा । तौ अति भयउ असूक अपारा
जौ सुमेरु तिरमूल प्रिनासा । भा कचन-गिरि लाग अकासा
जौ लहि घरी कलफे न परा । काँच होइ नहि कचन-करा
एक नयन जस दरपन औ निरमल तेहि भाउ ।

मव रुपवतइ पाउँ गहि मुख जोहहि कै चाउ ॥ १० ॥

चारि भीत कवि मुहमद पाए । जोरि मित्ताई सिर पहुँचाए
यूसुफ मलिक पँडित बहु ग्यानी । पहिलै भेद-भात वै जानी
पुनि मलार कादिम मतिमाहाँ । राँडे-दान उमै निति बाहाँ
मियाँ सलौने भिष बरियारु । वीर सेत-रन सडग जुभारु
मरु बड, बड सिद्ध घराना । किए आदेस सिद्ध बड माना
चारिउ चतुरदसा गुन पढे । औ सजोग गोसाई गढे
निरिउ होइ जौ चदन पासा । चदन होइ वेद तेहि वासा
मुहमद चारिउ मोति मिलि भए जो एकै चित्त ।

एहि जग साध जो निबहा ओहि जग विछुरन कित्त ॥ ११ ॥

जायम नगर धरम-अस्थान् । तहाँ आइ कवि कीन्ह वगान्
औ विनती पँडितन सन भजा । दूट मँवारहु, मेरवहु सजा ॥ ११ ॥

हौं पडितन केर पछलगा । किछु कहि चला तवल देइ डगा
 हिय भँडार ^{उतरी} नग अहै जो पूंजी । खोली जीभ ^{तीर} के कूँजी
 रतन-पदारथ वोल जो बोला । सुरस प्रेम मधु भरी अमोला
 जेहि के वोल विरह के ^{काह} चाया । कहँ तेहि भूख, कहाँ तेहि माया ?
 फरे भेख रह भा ^{तपसी} तपा । धूरि-लपेटा मानिक छपा

मुहमद कवि जौ विरह भा ना तन रकत न माँसु ।

जेइ मुख देखा तेइ हँसा सुनि तेहि आयउ आँसु ॥१०॥

सन नव सै मँतालिस अहा । कथा अरभ बैन कवि कहा
 सिवल दीप पदमिनी रानी । रतनसेन चितउर गढ आनी
 अलउदीन देहली सुलतानू । रागो ^{the man who prac ed vadi to} चेतन कीन्ह बसानू
 सुना ^{दरिद्र} साहि ^{दुख} गढ छका आई । हिदू ^{दुख} तुरुकन्ह भई लराई
 आदि अत जस गाथा अहै । लिखि भासा चौपाई कहै
 कवि बियास रस-कँवला पूरी । दूरि सो नियर, नियर सो दूरी
 नियरें दूर फूल जस काँटा । दूरि जो नियरे जस गुड चाँटा

भँवर याइ बनखड सन लेइ कँवल के वास ।

दादुर वास न पावई भलहि जो आछै पास ॥ १३ ॥

सिवलदीप कथा प्रब गावौ । औ सो पदमिनि वरनि सुनावौ
 निरमल दरपन भाति बिसेखा । जो जेहि रूप सो तैसइ देखा
 वनि सो दीप जहँ दीपक वारी । औ पदमिनि जो दर्ई मँनारी
 गध्रवमन सुगध नरेसु । सो राजा, वह ताकर देसु
 लका सुना जो रावन राजू । तेहू चाहि बड ताकर साजू

५३१ १०२

पदमावती राठ

अस्यपतिक-सिरमौर कहावै । गजपतीक
नरपतीक कहँ और नरिंदू । भूपतीक
मेस चकवे राजा चहँ राठ भूय
सवै ध्याड सिर नावहि सरवरि करै न
जगहि दीप नियरवा जाई । जनु कैला
घन अमराउ लाग चहँ पासा । उठा भूमि
तरिवर मने मलयगिरि लाई । भड जग
मलय-समीर सोहावन छाहा । जेठ जाउ
ओही छाँह रैनि होइ आवे । हरियर स
पथिक जो पहुँचै सहि कै धामू । दुख तिसरै,
जेठ वह पाई छाँह अनूपा । फिरि नहि
प्रस अमराउ मघन घन वरनि न पारै
फूलै फरै छवो रिउ जन सदा
घसहिं परि वोलहि बहु भासा । करहि हु
भोर होत वोलहि चुहचूही । वोलहि प
सारे सुआ जो रहै कहँ करही । कुरहि पं
'पीन-पीन' कर लाग पपीहा । 'तुही-तुही'
'कुह-कुह' करि मोइलि रागा । औ भिंगरा
'दही दही' करि महरि पुकारा । हारिल वि
कुहकहि मार सोहावन लाग । होइ कुरा
जावत परी जगत मे भरि बैठे अमरा

साहि

पैग पैग पर कुवाँ वावरी । साजी बैठक और पाँवरी
 और कुड बहु ठावहिं ठाऊँ । सब तीरथ औ तिन्ह के नाऊँ
 मठ मडप चहुँ पास सँवारे । तपा जपा सब आसन मारे
 मानसरोदक बरनौ काहा । भरा समुद अस अति अवगाहा
 पानि मोति अस निरमल तासू । अमृत आनि कपूर सुवासू
 खँड खँड सीढी भई गुरेरी । उतरहि चढहि लोग चहुँ फेरी
 फूला कवँल रहा होइ राता । सहस सहस पखुरिन कर छाता
 ऊपर पाल चहुँ दिसि अमृत-फल सब रूख ।

देखि रूप सरवर कै गै पियाम औ भूख ॥ १७ ॥

आस पास बहु अमृत वारी । फरी अपूर, होइ रखवारी
 पुनि फुलवारि लागि चहुँ पासा । विरिछ वेधि चदन मइ वासा
 सिंहलनगर देखु पुनि बसा । धनि राजा अस जेनै देसा
 ऊँची पैरी ऊँच अवासा । जनु कैलास इद्र कर वासा
 राव रक सब घर घर सुखी । जो दीरै सो हँसता-मुखी
 रचि रचि साजे चदन चौरा । पोतें अगर मेदे औ गौरा
 सबै गुनी औ पडित ग्याता । ससकिरित सब के मुख वाता
 अस कै मँदिर सवारै जनु सिवलोक अनूप ।

घर घर नारि पदमिनी मोहहि दरसन रूप ॥ १८ ॥

पुनि आए सिंघलगढ पासा । का बरनौ जनु लाग अकासा
 तरहिं करिन्ह वासुकि कै पीठी । ऊपर इद्रलोक पर दीठी
 परा सोह चहुँ दिसि अस वाँका । कोपै जाँघ, जाइ नहि भाँका
 अगम असूक देखि डर खाई । परै सो सपत-पतारहि जाई

नव पौरी वांकी नव रगडा । नवौ जो चढे जाइ बरम्हडा
 कचन-कोट जरे नव सीसा । नरसतहि भरी वीजु जनु दीमा
 लफा चाहि अँच गड ताका । निरसि न जाइ, दीठि मन घाफा
 हिय न समाइ दीठि नहिं, जानहुँ ठाढ मुमेर ।

फहँ लागि फहँ उँचाई फहँ लागि बरनौं फेर ॥ १६ ॥

निति गढ वाँचि चलें ससि सूरु । नाहिं त होइ बाजि-रथ चूरु
 पौरी नवौ बञ्ज कँ साजी । सहस सहस तहँ बैठे पाजी
 फिरहि पाँच कोतवार सुभैरी । काँपे पावँ चपत वह पौरी
 पौरिहि पौरि सिंह गढि काढे । डरपहि लोग देखि तहँ ठाढे
 वट निधान वै नाहर गढे । जनु गाजहिं चाहहि सिर चढे
 टारहिं पूँछ, पसारहि जोहा । कुजर दरहि कि गुजरि लौहा
 फनरु-सिला गढि सीढी लाई । जगमगाहि गढ ऊपर ताई

नवौ रगड नव पौरी श्री तहँ बञ्ज केवार ।

चारि बसेरे सौ चढै, सत सौ उतरै पार ॥ २० ॥

नव पौरी पर दसवँ दुवारा । तेहि पर बाज राज-घरियारा
 घरी सो बैठि गने, घरियारी । पहर पहर सो आप निवारी
 जहाँ घरी पूजि तेहि मारा । घरी घरी घरियार पुकारा
 परा जो डाँड, जगत मव डाँडा । 'का निचिंत भाटी कर भाँडा
 तुम्ह तेहि चारु चढे हौ काँचे । आएहु रहै, न थिर होइ दाँचे
 घरी जो भरी घटी तुम्ह आऊ । का निचिंत होइ सोड बटाऊ
 पहरहिं पहर गजर निति होई । हिया बजर, मन जाग न सोई

मुहमद जीवन-जल भरन रहैट प्री के रीति ।

घरी जो आई ज्यो भरी, ढरी, जनम गा वीति ॥ २१ ॥

गढ पर बसहि भारि गटपती । अमुपति गजपति भू-नर-पती
 नव धौराहर सोने माजा । अपने अपने घर नव राजा
 रूपवत धनवत सभागे । परस-परखान पौरि तिन्ह लागे
 भोग विलास सदा सब माना । दुख चिता कोड जनम न जाना
 मँदिर मँदिर सब के चौपारी । वैदिक कुँवर सब खेलहि सारी
 पासा ढरहि खेल भल होई । खडगदान-मरि पूज न कोई
 भाट वरनि कहि कीरति भली । पावहि हस्ति घोड सिंघली
 मँदिर मँदिर फुलवारी चोवा चदन वाम ।

निसि दिन रहै बसत तहँ छवौ ऋतु वारह मास ॥ २२ ॥

पुनि चलि देखा राज-दुआरा । मानुप फिरहि पाइ नहि तारा
 हस्ति सिंघली बांधे वारा । जनु मजीव सब ठाड पहारा
 कौनौ सेत पीत रतनारे । कौनौ हरे वूम औ कारे
 पुनि वावे रज-वार तुरगा । का वरनौ जस उन्हेके रगा
 मन तँ अगमन डोलहि वागा । लेत उसास गगन सिर लागा
 पान समान समुद पर धावहि । बूड न पावँ, पार होइ आवहि
 धिरन रहहि रिस लोह चवारी । भीजहिँ पूँछ, सीस उपरही
 अस तुखार सब देखे जनु मन के रघुवाह ।

नैन-पलक पटुँचावहि जहँ पटुँचा कोड चाह ॥ २३ ॥

राजसभा पुनि देख बईठी । द्रमभा जनु परि गै डीठी
 धनि राजा असि सभा सवारी । जानहु फुलि रही फुलवारी

जस अवधान पूर होइ मासू । दिन दिन हिये होइ परग
जम अचल महँ छिपै न दीया । तस उजियार दिखावै ही
सोने मँदिर सँवारहि औ चदनु सब लीप ।

दिया जो मनि भिवलोक महँ उपना सिवलदीप ॥ २६ ॥
भए दस मास पूरि भइ घरी । पदमावति कन्या औत
जानौ सूर किरिन टुँति काढी । सूरुज कला घाटि, वह वा
भा निसि महँ दिनकर परकासू । सब उजियार भयउ कैला
इते रूप मूरति परगटी । पूनौ ससी छीन होइ घ
घटतहि घटत अमावस भई । दिनदुइ लाज गाडि भुईं
पुनि जो उठी दुइज होइ नई । निहकलक ससि विधि निरम
पदुमगध वेधा जग वासा । भौर पतग भए चहुँ पास
इते रूप भै कन्या जेहिँ सरि पूज न कोइ ।

धनि सो देस रुपवता जहाँ जनम अस होइ ॥ २७ ॥

भै छठि राति छठीं सुख मानी । रहस कूद सौ रैन विहान
भा विहान पडित सब आए । काडि पुरान जनम अरथा
कन्यारासि उदय जग कीया । पदमावती नाम अस दीय
कहेन्हि जनमपत्रो जो लिखी । देइ असीस वटुरे जातिप
पाँच वरस महँ भै सो वारी । दीन्ह पुरान पढै वैसार
भै पदमावति पडित गुनी । चहुँ सड के राजन्ह सुन
सात दीप के घर जो अनाही । उत्तर पावहि फिरि फिरि जाई
राजा कहै गरब कै अहौ इट सिवलोक ।

को सरवरि है मोरे कासौ करौ बरोक ॥ २८ ॥

बारह बरस माहँ भै रानी । राजँ सुना सँयोग सयानी
सात खंड धोराहर तासू । सो पदमिनि कहँ दीन्ह निवासू
श्री दीन्ही सँग सखी सहेली, जो सँग करँ रहसि रस-केली
सपै नवल पिउ सग न सोई । कवल पास जनु प्रिगसी कोई
सुआ एक पदमावति ठाऊँ । महा पंडित हीरामन नाऊँ
दई दीन्ह परिहि असि जोती । नैन रतन, मुख मानिक मोती
कचन-वरन सुआ अतिलोना । मानहुँ मिला सोहागहि सोना
रहहि एक सँग दोऊ पढहि सासतर वेद ।

वरम्हा सीस डोलावहीं सुनत लाग तस भेद ॥ २६ ॥

भै उन्नत पदमावति बारी । रचि रचि प्रिधि मव कला सँवारी
जग वेधा तेहिँ अग-सुवासा । भँवर आइ लुनुधे चहुँ पासा
वेनी नाग मलयगिरि पैठी । मसि माये होइ दृइज वैठी
भौह धनुक माधे सर फेरै । नयन कुरग भूलि जनु हेरे
नासिक कीर, कवल मुख सोहा । पदमिनि रूप देखि जग मोहा
मानिक अधर, दसन जनु हीरा । हिय हुलसे कुच कनक-जँभीरा
केहरि लक, गवन गज हारे । सुर नर देखि माथ भुइँ धारे
जग कोइ दीठि न आवै आछहि नैन अकास । १९

जोगि जती सन्यासी तप साधहिँ तेहिँ आस ॥ ३० ॥

एक दिवस पदमावति रानी । हीरामनि त्रुँ कहा सयानी
'सुनु, हीरामनि, रुहौं बुभाई । दिन दिन मदन सतावै आई
पिता हमार न चालै वाता । त्रासहि बोलि सकै नहिँ माता
देस देस के बर मोहिँ आवहिँ । पिता हमार न आँसि लगावहि

जाइ परा वनएँड जिउ लीन्हें । मिले परि, बहु आदर कीन्हें
 आनि धरेन्हि आगे फरि साखा । भुगुति भेंट जौ लहि विधि राखा
 पाइ भुगुति सुख तेहि मन भयऊ । दुख जो अहा विसरि सब गयऊ
 ए गुसाई तू ऐस विधाता । जावत जीव सबन्ह भुक्दाता
 पाहन महँ नहि पतंग विसारा । जहँ तोहि सुमिर दीन्ह तुई चारा
 तौ लहि सोग विछोह कर भोजन परा न पेट ।

पुनि विसरन भा सुमिरना जब सपति भै भेंट ॥ ३६ ॥

पदमावति पहुँ आइ भँडारी । कहेसि मँदिर महँ परी भजारी
 सुआ जो उतर देत रह पूछा । उडिगा, पिजर न बोलै छूँछा
 रानी सुना सबहि सुख गयऊ । जनु निसि परी, अल दिन भयऊ
 गहने, गही चोंद कै करी । आँसु गगन जस नखतन्ह भरा
 टूट पाल सरवर बहि लागे । कबँल बूड, मधुकर उडि भागे
 एहि विधि आँसु नखत होइ चूए । गगन छाँडि सरवर महँ ऊए
 चिहुर चुई मोतिन कै माला । अब संकेत^{तै} वाधा चहुँ पाला

‘उडि यह सुअटा कहँ वसा खोजु सखी! सो वासु ।

दूहुँ है धरती की सरग, पौन न पावै तासु’ ॥ ३७ ॥

चहुँ पास समुभावहिं सखी । ‘कहाँ सो अब पाउव, गा पँसी
 जौ लहि पीजर अहा परेवा । रहा बदि महँ कीन्हिसि सेवा
 तेहि बदि हुति छुटै जो पावा । पुनि फिरि बदि होइ कित आवा?

ल। वै उडान-फर तहियै खाए । जब भा पखि, पाँख तन आए
 पीजर जेहि क सौपितेहि गयऊ । जो जाकर सो ताकर भयऊ

दस दुआर जेहि पाँजर माहाँ । कैसे वाँच मँजारी पाहाँ ?
 यह धरती अस केतन लीला । पेट गाढ अस, बहुरि न ढीला
 जहाँ न राति न दिवस है जहाँ न पौन न पानि ।

तेहि घन सुअटा चलि वसा कौन मिलावै आनि ? ॥ ३८ ॥

सुए तहाँ दिन दस कुल काटी । आय वियाध दुका लेइ टाटी
 पैग पैग मुई चापत आवा । परिन्ह देखि हिये डर खावा
 वै तौ उडे और घन ताका । पडित सुआ भूलि मन थाका
 वैधिगा सुआ करत सुख केली । चरि पाँख मेलेसि धरि डेली
 तहवाँ बहुरि परि सरभरहीं । आपु आपु महँ रोदन करहीं
 'जौ न होत चारा कै आसा । कित चिरिहार दुकत लेइ लासा ?
 एहि भूठी माया मन भूला । ज्यों परी तैसे तन फूला
 हम तौ बुद्धि गँवावा तिस-चारा अस राइ ।

तँ सुअटा पडित होइ कैसे वाभा आइ ? ॥ ३९ ॥

सुए कहा 'हमहँ अस भूले । दूट हिंडोल-गरव जेहि भूले

काहेक भोग विरिछ अस फरा । आड लाइ परिन्ह कहँ घरा ?

भूले हमहुँ गरव तेहि माहाँ । सो विसरा पावा जेहि पाहाँ ?

सुनि कै उतर आँसु पुनि पोछे । 'कौन परि वाँधा बुधि-ओछे

ता दिन व्याध भए जिउलेवा । उठे पाँख, भा नावँ परेवा

भै वियाधि तिसना सँग राधू । सूकै भुगुति, न सूक वियाधू

हम निचित वह आव छिपाना । कौन वियाधहि दोष अपना

सो औगुन कित कीजिए जिउ दीजै जेहि काज ।

अव कहना है किछु नहीं मस्ट भली पँडिराज ॥ ४० ॥

(२) रतनसेन खंड

(२५)

चित्रसेन चितउर गढ राजा । कै गढ कोट चित्र सम साजा
 तेहि कुल रतनसेन उजियारा । धनि जननी जनमा अम वारा
 पडित गुनि सामुद्रिक देखा । देखि रूप औ लखन विसेखा
 रतनसेन यह कुल निरमरा । रतन-जोति मनि माथे परा
 पदुम-पदारथ लियो सो जोरी । चांद सुरुज जस होइ अँजोरी
 जस मालति कहँ भौर वियोगी । तस ओहि लागि होइ यह जोगी
 सिंघलदीप जाइ यह पावै । सिद्ध होइ चितउर लेइ आवै
 भोग भोज जस माना, विक्रम साका कोन्ह ।

परसि सो रतन पारसी सवै लखन लिखि दीन्ह ॥ १ ॥

चितउरगढ कर एक वनिजारा । सिंघलदीप चला वैपारा
 वाम्हन हुत एक निपट भिरसारी । सो पुनि चला चलत वैपारी
 रिन काहू कर लीन्हेसि काढी । मकु तहँ गए होइ किछु बाढी
 मारग फठिन बहुत दुर भयऊ । नाँधि समुद्र दीप ओहि गयऊ
 देखि हाट किछु सूझ न ओरा । सवै बहुत, किछु देख न धोरा
 पै सुठि ऊँच वनिज तहँ केरा । धनी पाव, निधनी मुख हेरा
 लाख करोरिन्ह वस्तु विकार्ई । सहसन केरि न कोउ आनाई
 देना सवहीं लीन्ह वेसाहना औ घर कीन्ह बहोर । लौटना
 वाम्हन तहवाँ लेइ का ? गाँठि साँठि सुठि धोर ॥ २ ॥

भूरै ठाड हौं, काहे क आवा ? ननिज न मिला रहा पछितावा
 लाभ जानि आयवँ एहि हाटा । मूर गँवाइ चलैउँ तेहि वाटा ।
 अपने चलत सो कीन्ह कुवानी । लाभ न देख, मूर भै हानी
 तवही व्याध सुआ लेइ आवा । कचन-वरन अनूप सुहावा
 बेचै लाग हाट लै ओही । मोल रतन मानिक जहँ होहां
 वाम्हन आइ सुआ सो पूछा । दुँ गुनवत कि निरगुन छूआ ।
 पडित है तौ सुनावहु वेदू । विनु पूछे पाइय नहि भेदू
 हौं वाम्हन औ पडित कहु आपन गुन सोइ ।

पढे के आगे जो पढे दून लाभ तेहि होइ ॥ ३ ॥

‘तव गुन मोहि अहा, हो देवा । जब पिजर हुतँ छूट परेवा
 अब गुन कौन जो वेद, जजमाना । घालि मँजूसी वेचै आना
 रोवत रक्त भयउ मुर राता । तन भा पियर, कहीं का वाता ?’
 सुनि वाम्हन विनवा चिरिहारू । ‘करि परिन्ह कहँ मया, न मारू
 निठुर होइ जिव वधसि पूरावा । हत्या केरि न तोहि डर आवा’
 कहसि ‘परि का दोस जनावा । निठुर तेइ जे परमस सावा
 जौ न होहि अस परमँस-साधू । कित परिन्ह कहँ धरै वियाधू ?’
 वाम्हन सुआ वेसाहा सुनि मति वेद गरथ ।

मिला आइ कै साधिन्ह भा चितउर के पद्य ॥ ४ ॥

तव लगि चित्रसेन मय साजा । रतनसेन चितउर भा राजा
 आइ वात तेहि आगे चली । ‘राजा, वनिज आए सिघली
 हैं गजमोति भरी सब सीपी । और वस्तु बहु सिघलदीपी
 वाम्हन एक सुआ लेइ आवा । कचन-वरन अनूप सोहावा

राते स्याम कठ दुइ काँठा । राते डहन लिरा सब पाठा
 औ दुइ नयन सुहावत राता । राते ठोर ^{चो} अमीरस वाता
 मस्तक टीका काँध जनेऊ । कवि वियास, पंडित सहदेऊ

बोल अरथ सो बोलै सुनत सीस सब डोल ।

राजमँदिर महँ चाहिय अस वह सुआ अमोल' ॥ ५ ॥

भै रजाइ जन दस दौराए । वाम्हन सुआ वेगि लेइ आए
 विप्र असीसि विनति श्रीधारा । सुआ जीउ नहिं करौ निरारा
 सुआ असीस दीन्ह वड साजू । वड परताप असडित राजू
 भागवत विधि वड औतारा । जहाँ भाग तहँ रूप जोहारा
 कोइ विनु पूछे बोल जो बोला । होइ बोल माँटी के मोला
 गुनी न कोई आपु सराहा । जो विकाइ गुन कहा सो चाहा
 जौ लहि गुन परगट नहिं होई । तौ लहि मरम न जानै कोई

चतुरवेद हौं पंडित हीरामन मोहि नावँ ।

पदमावति सौं मेरवौं सेव करौ तेहि ठावँ' ॥ ६ ॥ ५१७

रतनसेन हीरामन चीन्हा । एक लाख वाम्हन कहँ दीन्हा
 विप्र असीसि जो कीन्ह पयाना । सुआ सो राजमँदिर महँ आना
 वरनीं काह सुआ कै भार्या । धनि सो नावँ हीरामन राखा
 जौ बोलै राजा मुख जोवा । जानौ मोतिन हार परावा
 जौ बोलै तौ मानिक भूंगा । नाहि त मौन बाधि रह गूंगा
 मनहुँ मारि मुख अमृत मेला । गुरु होइ आप, कीन्ह जग चेला
 सुरज चाँद कै कथा जो कहेऊ । पेम क कहनि लाइ चित गहेऊ

जो जो सुनै धुनै सिर राजहि प्रीति अगाहु । अगा ५

अस गुनवता नाहि भल बाउर करिहै काहु ॥ ७ ॥

दिन दस पाँच तहाँ जो भए । राजा कतहुँ अहेरै गए
 नागमती रूपवती रानी । सब रनिवान पाट-परधानी
 कै सिँगार कर दरपन लीन्हा । दरसन देखि गरव जिउ कीन्हा
 बोलहु सुआ 'पियारे-नाहाँ । मेरे रूप कोइ जग माहाँ ?'
 हँसत सुआ पहुँ आइ सो नारी । दान्ह कसौटी ओपनिवारी
 सुआ 'वानि कसि कहु कस मोना । मिंघलदीप तोर कस लोना ?
 कौन रूप तोरी रूपमनी । दूहुँ हो लोनि कि वै पदमिनी ?'

जो न कहसि सत सुआटा तेहि राजा कै आन ।

है कोई एहि जगत महँ मेरे रूप समान' ॥ ८ ॥

सुमिरि रूप पदमावति केरा । हँसा सुआ, रानी मुख हेरा
 'जेहि सरवरमहँ हम न आवा । वगुला तेहि सर हस कहावा
 दई कीन्ह अम जगत अन्रपा । एक एक ते आगरि रूपा
 कै मन गरब न छाजा काहू । चाँद घटा औ लागेउ राहू
 लोनि विलोनि तहाँ को कहै । लोनी सोई फत जेहि चहै
 का पूँछहु मिंघल के नारी । दिनहिं न पूजै, निसि अधियारी
 पुटुप सुवास सो तिन्ह कै काया । जहाँ माथ का वरनाँ पाया ?

गढी सो सोने सोधै भरी सो रूप भाग' । उज्ज्वल नारायण

सुनत रुखि भइ रानी हिये लोन अस लाग ॥ ९ ॥

जो यह सुआ मँदिर महँ अहँडे । कतहुँ वात राजा सौँ कहई
 सुनि राजा पुनि होइ नियोगी । छाँडै राज, चलै होइ जोगी

देनी

विग्र राखिय नहि, होइ अँकूरु । सवद न देइ भोर तमचूरु'^{उर्गा}
 धाय दामिनी-वेग हँकारी । ओहि सौपा हीये रिस भारी
 'देखु, सुआ यह है मँदचाला । भयउ न नाकर जाकर पाला
 मुख कह आन, पेट बस आना । तेहि औगुन दस हाट विकाना
 पखि न राखिय होइ कुभाखी । लेइ तह मारु जहाँ नहि साखी
 जेहि दिन कह मैं डरति हौँ रँनि छपावौ सूर । देना नहि त
 लै चह दीन्ह कवल कहँ मोकहँ होइ मयूर' ॥ १० ॥

'धाय सुआ लेइ मारै गई । समुझि गियान हिये मति भई
 सुआ सो राजा कर विसरामी । मारि न जाइ चहै जेहि स्वामी
 यह पडित खडित वैरागू । दोष ताहि जेहि सूझ न आगू
 जो तिरिया के काज न जाना । परै धोख, पाछे पछिताना
 नागमती नागिनि-गुवि ताऊ । सुआ मयूर होइ नहि काऊ
 जो न कत के आयसु माही । कौन भयेस नारि कै, वाही ?
 मकु यह खोज होइ निसि आए । तुरय-राग-हरि-भाय जाए

दुइ मो छपाए ना छपै एक हत्या, एक पाप ।

अतहि करहि विनास लेइ सेइ साखी देई आप' ॥ ११ ॥

राखा सुआ धाय मति साजा । भयउ खोज निसि आयउ राजा
 रानी उतर मान साँ दीन्हा । 'पडित सुआ मँजारी लीन्हा
 मैं पूछा सिंघल पदमिनी । उतर दीन्ह, तुम्ह को नागिनी ?
 वह जस दिन, तुम निसि अँधियारी । कहौँ बसत करील क वारी
 फा तोर पुरुष रँनि कर राऊ । उलू न जान दिवस कर भाऊ

का वह परि कूट मुँह कूटे । अस बड बोल जीभ मुख छोटे
जहर चुबै जो जां कह वाता । अस हतियार लिए मुख राता

‘माथे नहि वैसारिय जौ सुठि सुआ सलोन ।

कान दुटै जेहि पहिरे का लेड करव सो सोन ?’ ॥ १२ ॥

राजै सुनि वियोग तस माना । जैसे हिय विक्रम पछिताना
वह हीरामन पडित सुआ । जो बोलै मुख अमृत चूआ
‘की परान घट आनहु मती । की चलि होहु सुआ सँग सती’
चाँद जैम धनि उजियरि अही । भा पिउ-रोम, गहन अस गही
परम सोहाग निवाहि न पारी । भा दोहाग सेवा जब हारी
ऐसे गरव न भूलै कोई । जेहि डर बहुत पियारी सोई
रानी आइ धाय के पासा । सुआ भुआ सेवर के आसा
‘मैं पिउ-प्रीति भरोसे गरव कीन्ह जिउ माँह ।

तेहि रिस हैं ^{उन्हे दोहा} परहली, रूसेउ नागर नाहँ’ ॥ १३ ॥

उतर धाय तन दीन्ह रिसाई । ‘रिस आपुहि, बुधि औरहि राई
मैं जो कहा रिस जिनि करु वाला । को न गयउ एहि रिस कर घाला ?’
जुआ-हारि समुझी मन रानी । सुआ दीन्ह राजा कहँ आनी
‘मातु, पीय, हैं गरव न कीन्हा । कत तुम्हार मरम मैं लीन्हा
मिलतहु मँ जनु अहाँ निरारे । तुम्ह सँ अहँ अँदेस, पियारे ।
मैं जानेउँ तुम्ह मोही माहँ । देखौ ताकि तौ है सब पाहँ
का रानी, का चेरी कोई । जा कहँ मया करहु भल सोई
तुम्ह सँ कोई न जीता हारे धररुचि भोज ।

पहिले आपु जो खोवै करै तुम्हार सो खोज’ ॥ १४ ॥

राजै कहा 'सत्य कहु, सूआ । विनु सत जस सँवर कर भूआ-
 होइ मुख रात सत्य के वाता । जहा सत्य तहँ धरम सँघाता'
 'सत्य कहत, राजा, जिउ जाऊ । पै मुग्य असत न भारौ काऊ
 पदमावति राजा कै ^{परमात्म} वारी । पदुम-गध ससि विधि औतारी
 सभि मुख, अग मलयगिरि रानी । कनक सुगध ^{अतिनेवा रूपी} दुआदस वानी
 अहँ जो पदमिनि मिघल माहाँ । सुगँध रूप सब तिन्हकै छाहाँ
 हीरामन हैं तेहि क परेवा । ^{Sweet child born} कठा फूट करत तेहि सेवा
 जौ लहि जिअौ राति दिन सँवरो ओहि कर नावँ ।

मुख राता, तन हरियर दुहँ जगत लेइ जावँ ॥ १५ ॥
 हीरामन जो फवँल वराना । सुनि राजा होइ भँवर भुलाना
 'अहा जो कनक सुवासित ठाऊँ । कस न होइ हीरामन नाऊँ
 को राजा, कस दीप उतगू । जेहि रे सुनत मन भयउ पतगू
 कहु सुगध वनि कस निरमली । भा अलिस्सग कि अवही कली'
 'का राजा हैं वरनौं तासू । सिंघलदीप आहि कैलासू
 गधवसेन तहाँ बड राजा । अछरिन्ह महँ इद्रासन साजा
 सो पदमावति तेहि कर वारी । जो सब दीप माँह उजियारी
 उअत सूर जस देखिय चाँद छपै तेहि धूप ।

ऐसै सबै जाहि छपि पदमावति के रूप' ॥ १६ ॥
 सुनि रवि नावँ रतन भा राता । 'पडित' फेरि उहँ कहु वाता
 तँ सुरग मूरति वह कही । चित महँ लागि चित्र होइ रही'
 'पेम सुनत मन भूल न राजा । कठिन पेम, सिर देइ तौ छाजा
 पेम-फाँद जो परा, न छूटा । जीउ दीन्ह पै फाँद न टटा'

राजै लीन्ह ऊनि कै साँसा । 'ऐस बोल जिनि बोलु निरासा
भलेहि पेम है कठिन दुहेला । दुइ जग तरा पेम जेइ खेला
अन मैं पेम-पथ सिर मैला । पाँव न ठेलु, राखि कै चेला

जस अनूप, तैं धरनेसि, नखसिय वरनु सिंगार ।

है मोहि आस मिलै कै जौ मेरवै करतार' ॥ १७ ॥

'का सिंगार ओहि वरनौ, राजा । ओहि क सिंगार ओही पै छाजा
प्रथम सीस कस्तूरी केसा । बलि वासुकि, का और नरेमा ?
भौर केम, वह मालति रानी । विसहर लुरे लेहि अरधानी
वेनी छोरि भार जौ वारा । मरग पतार होइ अधियारा

कोवर कुटिल केस नग कारे । लहरन्हि भरे भुअंग बैसारे
वेधे जनौ मलयगिरि धामा । सीस चढे लोटहि चहुँ पासा
घुँघुरवार अलकै विपभरो । सँकरै पेम चहँ गिउ परी

अस फँदवार केस वै परा सीस गिउ फाँद ।

अस्टौ कुरी नाग सब अरुभ केस के बाँद ॥ १८ ॥

वरनौ माँग सीस उपरार्हीं । सेंदुर अवहि चढा जेहि नार्हीं
विनु सेंदुर अस जानहु दीआ । उजियर पथ रैनि महँ कीआ
कचन रेख कसौटी कसी । जनु धन महँ दामिनि परगसी
सुरुज-किरिन जनु गगन विसेरी । जमुना माँह सुरसती देखी
साँढै धार रुहिर जनु भरा । करवत लेइ वेनी पर धरा
तेहि पर पूरि धरे जो मोती । जमुना माँभ गग कै सोती
करवत तपा लेहि होइ चूरु । मकु सो रुहिर लेइ देइ सेंदूरु

आरा

। कनक दुवादस वानि होइ चह सोहाग वह मॉंग ।

सेवा करहि नखत सव उवै गगन जस ^{आकाशगंगी} गांग ॥ १६ ॥

कहीं लिलार दुइज कै जोती । दुइजहि जोति कहीं जग ओती ।

सहस किरिन जो सुरुज दिपाई । देखि लिलार सोउ छपि जाई

का सरवरि तेहि देउं मयकू । चाँद कलकी, वह निकलकू

औ चाँदहि पुनि राहु गहासा । वह विनु राहु मदा परगासा

तेहि लिलार पर तिलक वईठा । दुइज-पाट जानहु धुव दीठा ।

कनक-पाट जनु बैठा राजा । ^{सबै} सिंगार अत्र लेइ साजा

ओहि आगे धिर रहा न कोऊ । ^{दिनु} दुहु का कहँ अस जुरै सँजोऊ

ररग, धनुक, ^{ओत} चक, वान दुइ जग-मारन तिहि नाँव ।

सुनि कै परा मुखि कै 'भोकहँ ^{हुए} कुठावँ' ॥ २० ॥

'भौहै स्यामधनुक जनु ताना । जा सहुँ हेर मार विप-वाना

हनै धुनै उन्ह भौहनि चढे । केइ हथियार काल अस गढे ?

नैन बाँक, सरि पूज न कोऊ । मानमरोदक ^{उलथहि} देऊ

राते कँवल करहि अलि ^{भवाँ} । धूमहि माति ^{कूपि} चहहि अपसवाँ

उठहि तुरग लेहि नहि वागा । चाहहि ^{उलथि} गगन कईं लागा

जग डोलै डोलत नैनाहों । उलटि ^{अडार} जाहि पल माहों

समुद-हिलोर फिरहि जनु भूले । रजन लरहि, मिरिग जनु भूले

सुभर सरोवर नयन वै मानिक भरे तरग ।

आवत तीर फिरावहीं काल भौर तेहि सग ॥ २१ ॥

वरुनी का धरनी इमि धनी । साधे वान जानु दुइ ^{अनी}

जुरी राम रावन कै सैना । बीच समुद्र भए दुइ नैना

नासिक खरग देउं कह जोगू । खरग खीन, वह वदन-सँजोगू
 नामिक देरि लजानेउ सूआ । सुक आइ वंसरि होइ ऊआ
 पुहुप सुगध फरहि एहि आसा । मकु हिरकाठ लेइ हम पासा
 अधर दसन पर नासिक सोभा । दारिउं धिब देरि मुक लोभा
 खजन दुहुँ दिसि केलि कराहीं । दुहुँ वह रस कोउ पाव कि नाहीं

देरि अमिय-रस अधरन्ह भयउ नामिका कीर ।

पान वास पहुँचावै अस रस छाँड न तीर ॥ २२ ॥

अधर सुरग अमी-रस-भरे । विर सुरग लाजि वन फरे
 हीरा लेइ सो विद्रुम-धारा । विहँसत जगत होइ उजियारा
 अस कै अधर अमी भरि राये । अवहि अछूत, न काहू चाये
 दसन चौक बैठे जनु हीरा । औ विच विच रँग स्याम गँभीरा
 जस भादौ-निसि दामिनि दोसी । चमकि उठै तस वनी बतीसी
 जेहि दिन दसनजोति निरमई । बहुतै जोति जोति ओहि भई
 जहँ जहँ विहँसि सुभावहि हँसी । तहँ तहँ छिटकि जोति परगसी

हँसत दसन अस चमके पाहन उठे छरकि ।

दारिउं मरि जो न कै सका, फाटेउ हिया दरकि ॥ २३ ॥

रसना कहीं जो कह रस वाता । अमृत-बैन सुनत मन राता
 भरे पेम-रस बोलै बोला । सुनै सो माति घूमि कै डोला
 पुनि वरनौ का सुरँग कपोला । एक नारँग दुइ किए अमोला
 तेहि कपोल बाँध तिल परा । जेइ तिल देख सो तिल तिल जरा
 अग्नि-बान जानाँ तिल सूभा । एक कटाछ लाए दस जूभा

सो तिल गाल मेटि नहि गयऊ । अब वह गाल काल जग भयऊ
 देखत नैन परी परछाहीं । तेहि ते रात साम उपराही
 सो तिल देखि कपोल पर गगन रहा धुव गाडि ।

खिनहिं उठै, रिपन वूडै, डोलै नहिं तिल छाँडि ॥ २४ ॥

स्रवन सीप दुइ दीप सँवारे । कुडल कनक रचे उजियारे
 मनि-कुडल भलकँ अति लोने । जनु कौधा लौकहि दुइ कोने
 दुहुँ दिसि चाँद सुरुज चमकाहीं । नखतन्ह भरे निरखि नहि जाहीं
 वरनों गीउ क्वुँ के रीसी । कचन-तारु लागि जनु सीसी
 कुदै फेरि जानु गिउ काढी । हरी पुछार ठगी जनु ठाढी
 गए मयूर तमचूर जो हारे । उहै पुकारहि सँभ सकारे
 धनि ओहि गीउ दीन्ह विधि भाऊ । दहुँ का सौ लेइ करै मेराऊ
 कठसिरी मुकुतावली सोहै अभरन गीउ ।

लागै कठहार होइ को तप साधा जीउ ? ॥ २५ ॥

कनक-दड दुइ भुजा फलाई । जानौ फेरि कुँदरे भाई
 कदलि-गाँभ कै जानौ जोरी । औ राती ओहि कँवल-हथोरी
 जानौ गति वेड़िन देखराई । बाँह डालाइ जीउ लेइ जाई
 दिया थार, कुच कचन लारु । कनक कचोर उठै जनु चारु
 वेधे भौर कट केतकी । चाहहि वेध कीन्ह कचुकी
 जोवन वान लेहि नहिं वागा । चाहहि हुलसि हिये हठि लागा
 उत्तम जभार होइ रखनारी । छुइ को सकै राजा कै थारी

राजा वनुत मुए तपि लाइ लाइ मुई माथ ।

काहू छुवै न पाए गए मरोरत हाथ ॥ २६ ॥

पेट परत जनु चदन लावा । कुहँकुहँ केसर वरन सुहावा
 साम भुअगिनि रोमावली । नाभी निकसि कँवल कहँ चली
 आड दुआँ नारँग पिच भई । देखि मयूर ठमकि रहि गई ।
 नाभि-कुड विच वारानसी । साँह को होइ, मीचु तहँ वसी ?
 बैरिनि पीठि लीन्ह वह पाछे । जनु फिरि चली अपछरा काछे
 मलयागिरि कै पीठि सँवारी । वंनो नागिनि चढी जो कारी
 लहरै देति पीठि जनु चढी । चीर-ओहार कँचुली मढी
 पन्नग पकज मुख गहे खजन तहाँ बईठ ।

छत्र, सिंघासन, राज, धन ताकहँ होइ जो डीठ ॥ २७ ॥

लक पटुमि अस आदि न काहू । केहरि कहाँ न ओहि सरि ताहू
 बसा लक वरनै जग भीनी । तेहि तें अधिक लक वह खीनी
 नाभिकुड सो मलय-समीरू । समुद-भँवर जस भँवै गँभीरू
 तीवई कवल-सुगध सरीरू । समुद-लहरि सोहै तन चीरू
 वरनों नितँव लक कै सोभा । औ गज-गवन देखि मन लोभा
 जुरं जब सोभा अति पाए । केरा-रुभ फेरि जनु लाए
 माथे भाग कोड अस पावा । चरन-कँवल लेई सीस चढावा
 वरनि सिंगार न जानेउँ नरसिय जैस अमोग ।

तस जग किछुइ न पायउँ उपमा देउँ ओहि जोग' ॥ २८ ॥

सुनतहि राजा गा मुरछाई । जानौं लहरि सुरुज कै आई
 पेम-धाव-दुख जान न कोई । जेहि लागै जानै पै सोई
 परा सो पेम-समुद्र अपारा । लहरहि लहर होइ विसँभारा
 विरह-भौर होइ भँवरि देई । रिन खिन जीव हिलोरा लेई

खिनहि उसास वूडि जिउ जाई । खिनहिं उठै निसरै वौराई
 खिनहि पीत, खिन होइ मुख सेता । खिनहि चेत, खिन होइ अचेता
 कठिन मरन ते प्रेम-वेवस्था^{दुःख} । ना जिउ जियै, न दसवँ अवस्था^{की}

जनु लेनिहार न लेहिं जिउ हरहिं तरासहिं ताहि ।

एतनै बोल आव मुख करै “तराहि तराहि” ॥ २६ ॥

जहँ लागि कुटुंब लोग औ नेगी । राजा राय आय सब वेगी
 जावत गुनी गारुडी आए । ओभा, वैद, सयान बोलाए
 नहिं सो राम, हनिपँत बडि दूरी । को लेइ आव मजीवन-मूरी ?
 जब भा चेत उठा वैरागा । वाउर जनों सोइ उठि जागा
 आवत जग बालक जस रोआ । उठा रोइ ‘हा ग्यान सो रोआ’
 अब जिउ उहाँ, इहाँ तन सूना । कब लागि रहै परान-विहना
 जौ जिउ घटहि काल के हाथा । घट न नीक पै जीउ निसाथा

अहुठ हाथ तन-मरवर, हिया कवल तेहि माहँ^{difficult}
 नैनहिं जानहु नीयरे, कर पहुँचत औगाह ॥ ३० ॥

सवन्ह कहा ‘मन समुझहु राजा । काल भँति कै जूझ न छाजा
 तासौ जूझ जात जो जीता । जानत क्रिस्त तजा गोपीता
 औ न नेह काहू सौं कीजै । नाँव मिटै, काहे जिउ दीजै’
 सुए कहा ‘मन वूझहु राजा । करव पिरीति कठिन है काजा
 तुम राजा जेई घर पोई । कवल न भँटेउ, भँटेउ कोई^{कुछ}
 जानहिं भौर जो तेहि पथ लूटे । जीउ दीन्ह औ दियहु न छूटे
 कठिन आहि सिंघल कर राजू । पाइय नाहि जूझ कर साजू

साधन्ह सिद्धि न पाइय जौ लगि सधै न तप्प ।

सो पै जानै वापुरा करै जो सीस कलप्प ॥ ३१ ॥

का भा जोग-कथनि के कथे । निरुसै धिउ न विना दधि मथे
जौ लहि आप हेराइ न कोई । तौ लहि हेरत पाव न सोई
पेम-पहार कठिन विधि गढा । सो पै चढै जो सिर सौ चढा
तू राजा का पहिरसि कथा । तोरे घरहि माँझ दस पथा
काम, क्रोध, तिस्ना, मद, माया । पाँचौ चोर न छाँडहि काया'
सुनि सो घात राजा मन जागा । पलकन मार, पेम चित लागा
'गुरू विरह-चिनगी जो मेला । जो सुलगाइ लेइ सो चेला
फूल फूल फिरि पूँछै जौ पहुँचै श्रोहि केत ।

तन नेवछावरि कै मिलौ ज्यो मधुकर जिउ देत' ॥ ३२ ॥

वधु मीत बहुतै समुभावा । मान न राजा कोउ भुलावा
उपजी पेम-पीर जेहि आई । परबोधत होइ अधिक सो आई
तजा राज, राजा भा जोगी । औ किंगरी कर गहेउ वियोगी १२२
तन निरसँभर, मन बाउर लटा । अरुभा पेम, परी सिर जटा
चद्र-वदन औ चदन-देहा । भसम चढाइ कीन्ह तन रेहा
कथा पहिरि दड कर गहा । सिद्ध होइ कहँ गोरस कहा
मुद्रा सवन, कठ जपमाला । कर उदपान, काँध वधछाला २२५
चला भुगुति माँगै कहँ साधि कथा तप जोग ।

सिद्ध होइ पदमावति जेहि कर हिये वियोग ॥ ३३ ॥

गनक कहहिं गनि 'गौन न आजू । दिन लेइ चलहु, होइ सिध काजू'
'पेम-पथ दिन घरी न देखा । तन देखै जव होइ सरैया' १३१

चहुँ दिसि आन साँटिया फेरी । भै कटकाई राजा केर
 'राजा चला साजि कै जोगू । साजहु वेगि चलहु सब लोगू
 विनवै रतनसेन कै माया । 'माथे छात, पाट निति पाया
 विलसहु नौ लख लच्छि पियारी । राज छॉडि जिनि होहु भिरारी
 सब दिन रहेहु करत तुम भोगू । सो कैसे साधव तप जोगू ?

राजपाट, दर, परिगह तुम्ह ही सौं उजियार ।

बैठि भोग रस मानहु कै न चलहु अँधियार' ॥ ३४ ॥

'मोहि यह लोभ सुनाव न माया । काकर सुख, काकर यह काया
 जो निआन तन होइहि छारा । भाटिहि पोरि मरै को भारा ?
 का भूलौ एहि चदन चोवा । वैरी जहाँ अग कर रोवा'
 रावहि नागमती रनिवासू । 'केइ तुम्ह कत दोन्ह वनवासू
 अब को हमहि करहि भोगिनी । हमहूँ साथ होव जोगिनी
 तुम्ह अस विछुरै पीउ पिरीता । जहँवाँ राम तहाँ सँग सीता
 जौ लहि जिउ सँग छॉड न काया । करिहौ सेव, पखरिहौ पाया

देहि असीस सबै मिलि तुम्ह माथे निति छात ।

राज करहु चितउरगढ राखहु पिय अहिवात' ॥ ३५ ॥

'तुम्ह तिरिया भति हीन तुम्हारी । मूरख सो जो मतै घर-नारी
 राघव जो सीता सँग लाई । रावन हरी, कौन सिधि पाई ?
 यह ससार सपन कर लेखा । विछुरि गए जानौं नहि देखा'
 रोवत माय, न बहुरत वारा । रतन चला, घर भा अँधियारा
 'दार मोर जो राजहि रता । सो लै, चला, सुआ परवता'

रतनसेन खड

रोवहि रानी, तजहि पराना । नेचहि वार, करहि खरिहाना ।
चूरहि गिड-अभरन, उर-हारा । 'अव का पर हम करव सिंगारा ?'
दूटे मन नौ मोती फूटे मन दस काँच ।

लीन्ह समेटि सब अभरन होइगा दुख करु नाच ॥ ३६ ॥
निकसा राजा सिंगी पुरी । छाँडा नगर मेलि कै धूरी
राय रान सब भए वियोगी । सोरह सहस कुँवर भए जोगी
नगर नगर औ गाँवहि गाँवों । छाँडि चले सब ठाँवहि ठावों
का कर मड, का कर घर माया । ताकर सब जाकर जिउ काया
आगे सगुन सगुनियै ताका । दहिने माछ रूप के टाँका
भरे फलस तरनी जल आई । 'दहिउ लेहु' ग्वालिनि गोहराई
मालिनि आव मौर लिए गाँधे । रजन बैठ नाग के माथे
जा कहँ सगुन होहि अस औ गवनै जेहि आस ।

अस्ट महासिधि तेहि कहँ जम कवि कहा नियाम ॥ ३७ ॥
भयउ पयान चला पुनि राजा । सिंगि-नाद जोगिन कर बाजा
करेन्हि 'आजु किछु थोर पयाना । काल्हि पयान दूरि है जाना
ओहि मिलान जौ पहुँचै कोई । तत्र हम कहव पुरुष भल सोई
है आगे परवत के वाटा । निपम पहार अगम सुठि घाटा
करहु दीठि धिर होइ वटाऊ । आगे देखि धरहु भुई पाऊ
पाँयन पहिरि लेहु सब पौरी । काँट घसैं, न गहै अँकरौरी
परे आइ वन परवत मार्हा । दडाकरन वीभ्रवन जाहाँ
एक वाट गइ सिंगल, दूसरि लक समीप ।
हैं आगे पद्य दूऔ दहुँ गौनत्र केहि दोष ॥ ३८ ॥

ततखन वोला सुआ सरेशो । 'अगुआ सोइ पथ जेइ देखा
 सुनु मत, काज चहसि जौं साजा । पहुँचहु नगर विजयगिरि राजा'
 मासेक लाग चलत तेहि वाटा । उतरे जाइ समुद के घटा
 रतनसेन भा जोगी-जती । सुनि भँटै आवा गजपती
 'आए भलेहि, मया अब कीजै । पहुनाई कहँ आयसु दीजै'
 'सुनहु, गजपती, उतर हमारा । हम तुम्ह एकै, भाव निरारा
 इहै बहुत जौ वोहित पावौ । तुम्ह तै सिघलदीप सिधावौं
 जहाँ मोहिं निजु जाना कटक होउँ लेइ पार ।'

जौ रे जिअौं तौ बहुरौ मरौ त ओहि के वार' ॥ ३६ ॥

गजपति कहा 'सीस पर माँगा । वोहित नाव न होइहि राँगा
 ए सब देउँ आनि नव-गढे । फूल सोइ जो महेसुर चढे
 पै गोसाँई सन एक विनाती । मारग कठिन जाव कोहि भाँती'
 'गजपति, यह मन सकती-सीऊ । पै जेहि पेम कहौं तेहि जीऊ
 जौ पै जीउ बाँध सत बेरा । बरु जिउ जाइ फिरै नहि फेरा
 हौ पदमावति कर भिरमगा । दीठि न आव समुद औ गगा
 जेहि कारन गिउ काथरि कथा । जहाँ सो मिलै जावँ तेहि पथा
 मरग सीस, धर वरती, हिया सो पेम-समुद ।

नैन कौडिया होइ रहे, लेइ लेइ उठहिं सो बुद' ॥ ४० ॥

सो न डोल देखा गजपती । राजा सत्त दत्त दुहुँ सँती
 निहचै चला भरम जिउ रोई । साहस जहाँ सिद्धि तहँ होई
 निहचै चला छाडि कै राजू । वोहित दीन्ह, दीन्ह सब साजू
 चढा वेगि, तत्र वोहित पेले । धनि सो पुरुष पेम जेइ खेले

जस वन रेंगि चलै गज-ठाटी । बोहित चले, समुद गा पाटी
धावहि बोहित मन उपराहीं । सहस कौस एक पल महँ जाहीं
१ समुद अपार सरग जुनु लागा । मरग न घाल गनै वैरागा ।

‘दस महँ एक जाइ कोइ करम, धरम, तप, नेम ।

बोहित पार होइ जव तवहि कुसल औ रेम’ ॥ ४१ ॥

राजै कहा ‘कीन्ह मैं पेमा । जहाँ पेम कहँ कूसल रेमा
नायर तरै हिये सत पूरा । जौ जिउ सत, कायर पुनि सूर
तेड मत बोहित कुरी चलाए । तेड सत पवन पर जनु लाए
सत सार्थी, सत कर ससारु । सत्त रोइ लेइ लावै पारु’
उठै लहरि जनु ठाढ पहारा । चढै सरग औ परै पतारा
डोलहि बोहित लहरै राहीं । खिन तर होहि, खिनहिँ उपराहीं
राजै सो सत हिरदै बाँधा । जेहि सत टेकि करै गिरि काँधा

सार समुद सो नाँवा आए समुद जहँ खीर ।

मिले समुद वै सातौ बेहर बेहर नीर ॥ ४२ ॥

खीर समुद का वरनों नीरु । सेत सरूप, पियत जस खीरु
१ दधि-समुद्र देखत तम दाधा । पेम क लुबुध दगध पै साधा
आए उदधि समुद्र अपारा । धरती सरग जरै तेहि भारा ।
सुरा समुद पुनि राजा आवा । महुआ मद-छावा देखरावा
पुनि किलकिला समुद महँ आए । गा वीरज, देखत डर साए
उठै लहरि परवत कै नाई । फिरि आनै जोजन साँ ताई
५ धरती लेइ सरग लहि बाढा । सकल समुद जानहुँ भा ठाढा ।

गै औसान सबन्ह कर देखि समुद कै वाढि ।

! नियर होत जुनु लीलै रहा नैन अस काढि ॥ ४३ ॥

हीरामन राजा सौ बोला । 'एही समुद आए सत डोला
सिघलदीप जो नाहिं निवाहू । एही ठावँ साँकर सब काहू
एहि किलकिला समुद्र गँभीरु । जेहि गुन होइ सां पावै तोरु
इहै समुद्र-पथ मँभधारा । खाँडे कै असि धार निनारा'
राजै दीन्ह कटक कहँ वीरा । 'सुपुरुष होहु, करहु मन धीरा'
ठाकुर जेहिक सूर भा कोई । कटक सूर पुनि आपुहि होई
जौ लहि सती न जिउ सत बाँधा । तौ लहि देख कहँर न काँधा
कान समुद धँसि लीन्हैसि भा पाछे सब कोइ ।

कोइ काहू न सँभारै आपनि आपनि होइ ॥ ४४ ॥

कोइ बोहित जस पौन उडाही । कोई चमकि वीजु अस जाहीं
कोई जस भल धाव तुरारु । कोई जैसे वैल गरियारु
कोइ जानहुँ हरुआ रथ हाँका । कोई गरुअ भार बहु थाका
कोई रेगहि जानहुँ चाँटी । कोई दृष्टि होहिँ तर माटी
कोई खाहिँ पौन कर भोला । कोई करहिँ पात अस डोला
कोई परहि भौर जल माहाँ । फिरत रहहिँ, कोइ देख न बाहाँ
राजा कर भा अगमन रेवा । रेवक आगे सुआ परेवा
कोइ दिन मिला सवेरे, कोइ आवा पछ-राति ।

जा कर जस जस साजु हुत सो उतरा तेहि भौति ॥ ४५ ॥

सतएँ समुद मानसर आए । मन जो कीन्ह साहम, सिधि पाए
गा अँधियार, रँनि-मसि छूटी । भा भिनसार किरिन-रवि फूटी

'अस्ति अस्ति' सब साथी नेले । अध जो अहे नैन विधि खोले
 कवल पिगस तस पिहँसी देहीं । भौर दसन होइ कै रम लेहीं
 पृछा राजै 'कृत् गुरु सूआ । न जनाँ आजु कहाँ दहुँ ऊआ
 कपहुँ न एम जुडान मरीरु । परा अगिनि भहँ मलय-समीरु ८-
 निकमत आव किरिन-रवि-रेखा । तिमिर गए निरमल जग देगा
 और दरिन दिसि नोयरे कचन-मेरु देखाव ।

जनु वसत रितु आवै तैसि वाम जग आव' ॥ ४६ ॥

'तू राजा जस निररम आदी । तू हरिचद बैन सतपादी
 जीत पेम तुडै भूमि अकासू । दीठि परा सिंघल-कैलासू
 तहाँ देखु पदमावति रामा । भौर न जाइ, न परी नामा
 कचन-मेरु देखाव सो जहाँ । महादेव कर मडप तहाँ
 माग मास, पाछिल पछ लागे । सिरी-पचमी होइहि आगे
 उघरिहि महादेव कर वारु । पूजिहि जाइ सकल ससारु
 पदमावति पुनि पूजै आवा । होइहि एहि मिस दीठ-भेरावा
 तुम्ह गौनहु औहि मडप, हँ पदमावति पास ।

पूजै आइ वसत जत्र तत्र पूजै मन-आस' ॥ ४७ ॥

(३) प्रेम खंड

पदमावति तेहि जोग सँजोगा । परी पेम-वस गहे वियोगा
नाद न परै रैनि जौ आवा । सेज कँवाच जानु कोइ लावा
दहै चद औ चदन चीरू । दगध करै तन विरह गँभीरू
कलप समान रैनि तेहि बाढी । तिल तिल भर जुग जुग जिमि गाढी
गहै वीन मकु रैनि विहाई । ससि-वाहन तहँ रहै ओनाई
पुनि धनि सिध उरेहै लागै । ऐसिहि विधा रैनि सब जागै
कहँ वह भौर कँवल रस-लेवा । आइ परै होइ धिरिनि परेवा
सो वनि विरह-पतग भइ, जरा चहै तेहि दीप ।

कत न आव भिरिग होइ, का चदन तन लीप ? ॥ १ ॥

परी विरह वन जानहुँ घेरी । अगम असूभ जहाँ लागि हेरी
चतुर दिमा चितवै जनु भूली । सो वन कहँ जहँ मालति फूली ?
कँवल भौर ओही वन पावै । को मिलाइ तन-तपनि बुभावै ?
अग अग अस कँवल सरीरा । हिय भा पियर कहै पर-पीरा
चहै दरस, रवि कीन्ह विगासू । भौर-दीठि मनो लागि अकासू
पूँछै धाय, 'वारि, कहु वाता । तुडँ जस कँवल फूल रँग राता
केसर वरन हिया भा तोरा । मानहुँ मनहि भयउ किछु भौरा
पौन न पावै सचरै, भौर न तहाँ वईठ ।

भूलि कुरगिनि कस भई, जानु सिध तुडँ डीठ' ॥ २ ॥

‘धाय, मिह वरु खातेउ मारी । की तमि रहति अही जसि धारी
जोवन सुनेउँ कि नवल बसतू । तेहि वन परउ हस्ति मैमतू
अन जोवन-वारी को राखा । कुजर-विरह विधसै साखा
मैं जानेउँ जोवन रस भोगू । जोवन कठिन सँताप प्रियोगू
‘पदमावति, तुइँ समुद सयानी । तेहि सरि ममुद न पूजै, रानी
नदी ममाहिँ समुद महँ आई । समुद डोलि कहु कहौ समाई ?
अनहीं कवँल-करी हिय तोरा । आइहि भौर जा तो कहँ जोरा
जत्र लगि पीउ मिलै नहि साधु पेम कै पीर ।

जैसे सीप सेवाति कहँ तपै समुद मँभ नीर’ ॥ ३ ॥

‘दहै, धाय, जोवन एहि जीऊ । जानहुँ परा अगिनि महँ धीऊ
करवत सहै होत दुइ आधा । सहि न जाइ जोवन कै दाधा
विरह समुद्र भरा असँभारा । भौर मेलि जिउ लहरिन्ह मारा’
कहेसि ‘पेम जौँ अपना, वारी । बाँधु सत्त, मन डोल न भारी
सती जो जरै पेम सत लागी । जौ सत हिये तौ सीतल आगी
पौन बाँध सो जोगी जती । काम बाँध सो कामिनि सती
आव बसत फूल फुलवारी । देव-वार सब जैहँ वारी
तुम्ह पुनि जाहु बसत लेइ पूजि मनावहु देव ।

जीउ पाइ जग जनम है, पीउ पाइ कै सेव’ ॥ ४ ॥

जत्र लगि अवधि आइ नियराई । दिन जुग जुग विरहिनि कहँ जाई
तेहि वियोग हीरामन आवा । पदमावति जानहुँ जिउ पावा
कठ लाइ सूआ सौ रोई । अधिक मोह जौँ मिलै विछोई
रही रोइ जत्र पदमिनि रानी । हँसि पूछहिँ सब सखी सयानी

‘मिले रहस भा चाहिय दूना । कित रोइय जौ मिलै विछूना’ ?
तेहि क उतर पदमावति कहा । ‘विछुरन-दुख जो हिये भरि रहा
मिलत हिये आयउ सुख भरा । वह दुख नैन-नीर होइ ढरा

विछुरता जब भेटै सो जानै जेहि नेह ।

सुख सुहेला उगवै दु ख भरै जिमि मेह’ ॥ ५ ॥

पुनि रानी हँसि कूसल पूछा । ‘कित गवनेहु पीजर कै छूँछा’ ?
‘रानी, तुम्ह जुग जुग सुखपाट । छाज न परिहि पीजर-ठाट
जब भा पर कहीं थिर रहना । चाहै उडा पखि जौ उहना
पीजर महँ जो परेवा घेरा । आइ मजारि कीन्ह तहँ फेरा
दिन एक आइ हाथ पै मेला । तेहि डर बनोवास कहँ खेला
तहाँ वियाध आइ नर साधा । छूटि न पाव मीचु कर बाँधा
वै धरि वेचा वाम्हन हाथा । जबूदीप गयउँ तेहि साथ

तहाँ चित्र चितउरगढ चित्रसेन कर राज ।

टीका दीन्ह पुत्र कहँ, आपु लीन्ह सिव साज ॥ ६ ॥

बैठ जो राज पिता के ठाऊँ । राजा रतनसेन ओहि नाऊँ
वरनो काह देस मनियारा । जहँ अस नग उपना उँजियारा
धनि माता औ पिता बराना । जेहि के बस अस अस आना
लछन बतीसौ कुल निरमला । वरनि न जाइ रूप औ कला
वै हँ लीन्ह, अहा अस भागू । चाहै सोने मिला सोहागू
सो नग देखि हँछा भइ मोरी । है यह रतन पदारथ जोरी
है ससि जोग इहै पै भानू । तहाँ तुम्हार मैं कीन्ह बरानू

कहाँ रतन रतनागर, कचन कहाँ सुमेरु ।

दैव जो जोरी दुहुँ लिराी मिलै सो कौनेहु फेर ॥ ७ ॥

सुनत पिरह-चिनगी श्रोहि परी । रतन पाव जैँ कचन-करी
कठिन पेम पिरहा दुख भारी । राज छाँडि भा जोगि-भिरारी
कहेसि पतग होइ धनि लेऊँ । सिंघलदीप जाइ जिउ देऊँ
हीरामन जो कही यह वाता । सुनि कै रतन पदारथ राता
जस सूरुज देखे होइ श्रोपा । तस भा विरह, कामदल कोपा
सुनि कै जोगी केर वरानू । पदमावति मन भा अभिमानू
'को अत्र हाथ सिंघमुख घालै । को यह वात पिता सौ चालै
सरग इट डरि कोपै वासुकि डरै पतार ।

कहाँ सो अस वर प्रियिमी मोहि जोग ससार' ॥ ८ ॥

'तू, रानी, ससि कचन-करा । वह नग रतन सूर निरमरा
आगि बुझाइ परे जल गाढै । वह न बुझाइ आपु ही वाढै'
सुनि कै धनि, जारी अस कया । तव भा मयन, हिये भै मया
'देरौं जाइ जरै कस भानू । कचन जरे अधिक होइ वानू
अत्र जौ मरै वह पेम वियोगी । हत्या मोहि जेहि कारन जोगी
जौं वह जोग सँभारै छाला । पाइहि भुगुति, देहुँ जयमाला
आव वसत कुसल जौं पावीं । पूजा मिस मडप कहँ आरौ
कवल-भवर तुम्ह वरना मैं माना पुनि मोइ ।

चाँद सूर कहँ चाहिय जौ रे सूर वह होइ' ॥ ९ ॥

हीरामन जो सुना रस वाता । पावा पान भयउ मुख राता
चला सुआ, रानी तव कहा । 'भा जो परावा कैसे रहा ?'

‘सुनु रानी, है रहतेउँ राधा । कैसे रहाँ वचन कर बाँधा’
 आवा सुआ बैठ जहँ जोगी । मारग नैन, वियोग वियोगी
 आइ पेम-रस कहा सँदेसा । ‘गोरख मिला, मिला उपदेसा
 तुम्ह कहँ गुरुमया बहु कीन्हा । कीन्ह अदेस, आदि कहि दीन्हा
 सबद, एक उन्ह कहा अकेला । गुरुजस भिंग, फनिग जस चेला

आवै रितु वसत जब तव मधुकर, तव वासु ।

जोगी जोग जो इमि करै सिद्धि समापत तासु’ ॥ १० ॥

द्वैड द्वैड कै रितु सो गँवाई । सिरी-पचमी पहुँची आई
 भयउ हुलास नवल रितु माहाँ । खिन न सोहाइ धूप औ छाहाँ
 पदमावति सब सखी हँकारी । जावत सिंघलदीप कै वारी
 आजु वसत नवल रितुराजा । पचमि होइ, जगत सब साजा
 नवल सिंगार बनस्पति कीन्हा । सीस परासहि सँदुर दीन्हा
 विगसि फूल फूले बहु वासा । भौर आइ लुबुधे चहुँ पासा
 पियर-पात-दुख भरे निपाते । सुख-पल्लव उपने होइ राते

अवधि आइ सो पूजी जो हीछा मन कीन्ह ।

१५ ॥ चलहु देवमठ गोहने चहुँ सो पूजा दीन्ह ॥ ११ ॥

फिरी आन, रितु-राजन वाजे । औ सिंगार वारिन्ह सब साजे
 कवल-कली पदमावति रानी । होइ मालति जानीं विगसानी
 तारा-मँडल पहिरि भल चोला । भरे मीस सब नरत अमोला
 सरणी कुमोद सहस दस सगा । सबै सुगध चढाये अगा
 सब राजा रायन्ह कै वारी । वरन वरन पहिरे सब सारी

सवै सुरूप, पदमिनी जाती । पान, फूल, सेंदुर सब राती
करहिं किलोल सुरग-रंगीली । औ चोवा चदन सब गीली
चहुँ दिसि रही सो वासना फुलवारी अस फूलि ।

वै वसत सौं भूली गा वसत उन्ह भूलि ॥ १२ ॥

भै आग्या पदमावति चली । छत्तिस कुरि भँ गोहन भली
कवल सहाय चली फुलवारी । फर फूलन सब करहिं धमारी
आपु आपु महँ करहिं जोहारू । यह वसत सबकर तिवहारू
चहै मनोरा भूमक होई । फर औ फूल लियउ सब कोई
फागु खेलि पुनि दाहव होरी । सँतव स्नेह, उडाउव भोरी
भा आयसु पदमावति नेरा । 'बहुरिन आइ करव हम फेरा
तस हम कहँ होइहि रसवारी । पुनि हम कहॉ, कहॉ यह वारी
पुनि रे चलव घर आपने पूजि त्रिसेसर-देव ।

जेहि काहुहि होइ खेलना आजु खेलि हँसि लेव' ॥ १३ ॥

काहू गही अँव कै डारा । काहू जाँनु निरह अति भारा
पुनि वीनहि सब फूल सहेली । खोजहिं त्रास-पास सब वेली
फर फूलन्ह सब डार ओढाई । भुड वाँधि कै पचम गाई
वाजहि डोल दुदुभी भेरी । मादर, तूर, भौंभ चहुँ फेरी
रथहिं चढी सब रूप सोहाई । लेइ वसत मठ-मँडप मिधाई
नवल वसत, नवल सब वारी । सेंदुर युक्कां होइ धमारी
सिनहि चलहि, गिन चाँचरि होई । नाँच कूद भूला सेव
सेंदुर-स्नेह उडा अस, गगन भयउ सब रात ।
राती सगरिउ धरती, राते विरिछन्ह पात ॥ १४ ॥

जनहुँ लक सव लूटी हनुवँ विधसी वारि ।

जागि उठिउँ अस देखत, सरि, कहु सपन विचारि' ॥ १६ ॥

सरणी सो बोली सपन-विचारु । 'काल्हि जो गइहु देव के वारु
पूजि मनाइहु बहुतै भौंती । परसन आइ भये तुम्ह राती
सूरुज पुरुष चाँद तुम रानी । अस बर दैउ मेरावै आनी
पच्छिउँ सँड कर राजा कोई । सो आवा वर तुम्ह कहँ होई
किछु पुनि जूझलागि तुम्ह रामा । रावन सौँ होइहि सँगरामा
चाँद सुरुज सौँ होइ वियाहू । वारि विधसव वेधव राहू ।
जस ऊपा कहँ अनिरुध मिला । मेटि न जाइ लिखा पुरविला
सुरा सोहाग जो तुम्ह कहँ पान फूल रस भोग ।

आजु काल्हि भा चाहै अस सपने क सँजोग' ॥ २० ॥

कै बसत पदमावति गई । राजहि तब बसत सुधि भई
जो जागा न बसत न वारी । ना वह खेल, न खेलनहारी
ना वह ओहि कर रूप सुहाई । गै हेराइ, पुनि दिस्टि न आई
केइ यह बसत बसत उजारा ? । गा सो चाँद, अथवा लेइ तारा
विरह-दवा को जरत सिरावा ? । को पीतम सौँ करै मेरावा ?
जस विछोह जल मीन दुहेला । जल हुँत काढि अभिनि महुँ मेला
चदन-आँक दाग हिय परे । बुझहि न ते आरतर परजरे
आइ बसत जो छपि रहा होइ फूलन्ह के भेस ।

केहि विधि पावौँ भौर होइ कौन गुरू-उपदेस ॥ २१ ॥

रोवै रतन-माल जनु चूरा । जहँ होइ ठाढ, होइ तहँ कूरा
'कहाँ सो मूरति परी जो डोठी । काढि लिहेसि जिउ हिये पईठी

अरे मलिछ तिसुवासी देवा । कित मैं आइ कीन्ह तोरि सेवा
 सुफल लागि पग टेकेउँ तोरा । सुआ क सेंवर तू भा मोरा
 पाहन चढि जो चहै भा पारा । सो ऐसे वूडै मँझधारा
 पाहन सेवा कहा पसीजा ? । जनम न श्रोद होइ जौ भौँजा गोर
 वाउर साँइ जो पाहन पूजा । सकत को भार लेइ सिर दूजा ?

सिंध तरेंदा जेइ गहा पार भए तेहि साथ ।

तं पै वूडे वाउरे भेंड-पूछि जिन्ह हाथ ॥ २२ ॥

आनहि दोस देहुँ का काहू । सगी कया मया नहिं ताहू
 हता पियारा भीत विछोई । साथ न लाग आपु गै सोई
 का मैं कीन्ह जो काया पोपी । दृपन मोहि, आप निरदोपी
 फागु वसत खेलि गई गोरी । मोहि तन लाइ विरह कै होरी
 अब अस कहाँ छार सिर मेलौं ? । छार जो होहुँ फाग तन खेलौं
 कित तप कीन्ह छाँडि कै राजू । गयउ अहार न भा सिंध काजू
 पायउँ नहि होइ जोगी जती । अब सर चढौं जराँ जस सती

आइ जो पीतम फिरि गा मिला न आइ वसत ।

अब तन होरी घालि कै जारि करौं भसमत' ॥ २३ ॥

हुनुवँत वीर लक जेहि जारी । परवत उहै अहा रसवारी
 वैठि तहाँ होइ लका ताका । छठँ मास देइ उठि हाँका
 जाइ तहाँ वै कहा मँदेसू । पारवती औ जहाँ महेसू
 ततरपन पहुँचे आइ महेसू । वाहन बैल, कुस्टि फर भेसू
 सेसनाग जाके कँठमाला । तनु भभूति, हस्ती कर छाला

चँवर, घट औ डँवरु हाथा । गौरा पारवती धनि साधा
 अवतहि कहेन्हि 'न लावहु आगी । तेहि कै सपथ जरहु जेहि लागी
 की तप करै न पारेहु, की रे नसाएहु जोग ? ।

जियत जीउ कस काढहु ? कहहु सो मोहिं वियोग' ॥२४॥
 कहेसि 'मोहि वातन्ह विलँमँवा । हत्या केरि न डर तोहि आवा
 जरै देहु, दुख जराँ अपारा । निस्तर पाइ जाउँ एक धारा
 जस भरथरी लागि पिंगला । मो कहँ पदमावति सिबला
 मैं पुनि तजा राज औ भोगू । सुनि सो नाव लीन्ह तप जोगू
 एहि मढ सेएउँ आइ निरासा । गइ सो पूजि, मन पूजि न आसा
 तँ यह जिउ डाढे पर दाधा । आधा निकसि रहा, घट आधा
 जो अधजर सो विलँव न लावा । करत विलव बहुत दुख पावा'
 एतना बोल कहत मुल उठी विरह कै आगि ।

जाँ महेस न बुभावत जाति सकल जग लागि ॥ २५ ॥

पारवती मन उपना धाऊ । देखीं कुँवर केर सत भाऊ
 ओहि एहि बीच, कि पेमहि पूजा । तन मन एक, कि भारग दूजा
 भइ मुरूप जानहुँ अपछरा । विहँसि कुँवर कर आँचर धरा
 'सुनहु, कुँवर, मो सौँ एक वाता । जस मोहिं रग न औरहिं राता
 औ विधि रूप दीन्ह है तोका । उठा सो सचद जाइ सिब-लोका
 तप हीं तोपहँ इद्र पठाई । गइ पदमिनि, तँ अछरी पाई
 अब तजु जरन, मरन, तप, जोगू । मो सौँ मानु जनम भरि भोगू
 हीं अछरी कैलास कै जहि सरि पूज न कोइ ।

मोहिं तजि सँवरि जो ओहि मरसि, कौन लाभ तोहि होइ ? २६

‘भलेहिं रग अछरी तोर राता । मोहि दुसरे सौं भाव न बाता
 मोहि ओहि सँवरि मुए तस लाहा । नैन जो देखसि पूछसि काहा ?
 अत्रहिं ताहि जिउ देइ न पावा । तोहि असि अत्ररी ठाढ़ि मनावा
 जाँ जिउ देइहाँ ओहि कै आसा । न जनाँ काह होइ कैलासा’
 गौरइ हँसि महेस सों कहा । ‘निहचै एहि विरहानल दहा
 वदन पियर जल डभकहिं नैना । परगट दुवौ पेम के वैना
 एहू कहँ सत मया करेहू । पुरखहु आस, कि हत्या लेहू’

तम रोवै जस जिउ जरै गिरै रकत औ माँसु ।

रोवँ रोवँ सब रोवहिं सूत सूत भरि आँसु ॥ २७ ॥

रोवत वूडि उठा समारू । महादेव तव भयउ मयारू
 कहेन्हि ‘न रोव, बहुत तैं रोवा । अब ईसर भा, दारिद रोवा
 जो दुख महै हांड सुख ओका । दुख बिनु सुख न जाइ सिवलोका
 अब तैं सिद्ध भयसि सिधि पाई । दरपन-कथा छूटि गइ काई
 गढ तस बाँक जैसि तोरि काया । पुरुष देखु ओही कै छाया
 नौ पौरी तेहि गुढ मभियारा । औ तहँ फिरहिं पाँच कोटवारा
 दसवँ दुवार गुपुत एक ताका । अगम चढाव, बाट सुठि बाँका

जस मरजिया समुद धँस हाथ आव तव सीप ।

हूँडि लेइ जो सरग-दुआरी चढै सो सिंघलदीप ॥ २८ ॥

दसवँ दुआर ताल कै लेसा । उलटि दिस्टि जो लाव सो देसा
 परगट लोकचार कहु वाता । गुपुत लाउ मन जासौ राता
 “हैं हैं” कहत सबै मति रोई । जाँ तू नाहिं आहि मब कोई’

सिधि-गुटिका राजै जब पावा । पुनि भइ सिद्धि गनेस मनाव
जब सकर सिधि दीन्ह गुटिका । परी हूल, जोगिन्ह गढ छँका
पौरि पौरि गढ लाग केवारा । औ राजा सौं भई पुकार
'जोगी आइ छँकि गढ मेला । न जनौ कौन देस ते खेला'

भयेउ रजायसु 'देरौ को भिखारि अस ढीठ ।

वेगि वरजि तेहि आवहु जन दुइ पठै वसीठ' ॥ २६ ॥ ५

उतरि वसीठन्ह आइ जोहारे । 'का तुम जोगी, की वनिजारे
भयेउ रजायसु आग खेलहिं । गढ तर छाँडि अनत होइ मेलहि
है जोगी तौ जुगुति सौ माँगौ । भुगुति लेहु, लै मारग लागौ'
'आनु जो भीरि हँ आयँ लेई । कस न लेउँ जौ राजा देई
पदमावति राजा कै वारी । है जोगी ओहि लागि भिखारी
सोई भुगुति-परापति भूजा । कहाँ जाउँ अस वार न दूजा
तुम्ह वसीठ राजा के ओरा । साखि होहु एहि भीर निहोरा
जोगी वार आव सो जेहि, भिच्छा कै आस ।

जो निरास दिह आसन कित गौनै केहु पास ?' ॥ ३० ॥

सुनि वसीठ मन उपनी रीसा । जौ पीसत घुन जाइहि पीसा
'जोगी अस कहँ कहै न कोई । सो कहु बात जोग जो हैई
वह वड राज इद्र कर पाटा । धरती परा सरग को चाटा ?
जौ यह बात जाड तहँ चली । छूटहिं अवहि हस्ति सिंघली'
'तुम्हरे जोर सिंघलु के हार्थी । हमरे हस्ति गुरु हैं साथी
अस्ति नास्ति ओहि करत न वारा । परवत करै पाव कै छारा
जोर गिरे गढ जावत भए । जे गढ गरब करहिं ते नए

जोगिन्हि कोह न चाहिय, तम न मोहि रिम लागि ।

जोग तत ज्यों पानी, काह करं तेहि आगि ?' ॥३१॥

घमिठन्ह जाइ कही अस वाता । राजा सुनत कोह भा राता

ठावहि ठाँव कुँवर मघ भोगे । 'केइ अत्र लीन्ह जोग, केइ राखे ?

अनहीं वेगिन्हि करै सँजोऊ । तस मारहु हत्या नहि होऊ'

मत्रिन्ह कहा 'रही मन बूझे । पति न होइ जोगिन्ह सौं जूझ

श्रोहि मारे तै काह भिरारी । लाज होइ जौ माना हारी

ना भल सुए, न मारे मोख । दुवौ वात लागै सम देखू

रहै देहु जौ गढ तर मेले । जोगी कित आछै विनु खेले ?

आछै देहु जौ गड तरे, जनि चालहु यह वात ।

तहँ जो पाहन भय करहि अस केहिके मुख दाँत' ॥ ३२ ॥

गए बसोठ पुनि वहरि न आए । राजै कहा वहुत दिन लाए

न जनौ सुरग रात देहुँ काहा । काहु न आइ कही फिरि चाहा

पय न काया, पौन न पाया । केहि विधि मिलौ होइ कै छाया

सँबरि रक्त नैनहि भरि चूआ । रोइ हँकारेसि माँझी सूआ

परौ जो आँसु रक्त कै टटो । रोगि चलीं जस धीर-बहुटी

आही रक्त लिखि दीन्ही पाती । सुआ जो लीन्ह चोच भड राती

वाँधी कठ परा जरि काँठा । निरह क जरा जाइ कित नाठा ?

मसि नैना, लिखनी बरुनि, रोइ रोइ लिखा अकथ ।

आखर दहै, न कोइ छुवै, दीन्ह परवा हत्य ॥३३॥

कचन-वार बाधि गिड पाती । लेइ गा सुआ जहा धनि राती

जैसे कवँल सूर के आसा । नीर कठ लहि मरत पियासा

विसरा भोग सेज सुख-वासा । जहाँ भौर सब तहाँ हुलासा
 तौ लागि धीर सुना नहि पीऊ । सुना त घरी रहै नहि जीऊ
 तौ लागि सुख हिय पेम न जाना । जहाँ पेम कत सुख विसरामा
 अगर चदन सुठि दहै सरीरु । श्री भा अगिनिकया कर चीरु
 कथा कहानी सुनि जिउ जरा । जानहुँ घीउ वसदुर परा

विरह न आपु सँभारै, मैल चीर, सिर रूख ।

पिउ पिउ करत राति दिन जम पपिहा मुख सूर्य ॥ ३४ ॥

ततखन गा हीरामन आई । भरत पियास छाह जुनु पाई
 'भल तुम्ह, सुआ, कीन्ह है फेरा । कहहुकुसल अब पीतम केरा
 वाट न जानौ, अगम पहारा । हिरदय मिला न होइ निनारा
 मरम पानि कर जान पियासा । जो जल महुँ ता कहँ का आसा?'
 का रानी यह पूछहु वाता । जिनि कोई होइ पेम कर राता
 'तुम्हरे दरसन लागि वियोगी । अहा सो महादेव मठ जोगी
 तुम्ह बसत लंइ तहा सिधाई । देव पूजि पुनि ओहि पहुँ आई

दिस्टि वान तस मारेहु घायल भा तेहि ठाव ।

दसरि वात न बोलेँ लेइ पदमावति नाँव ॥ ३५ ॥

तुम्ह तौ खेलि मँदिर महुँ आई । ओहिक मरम पै जान गोसाई
 कहेसि जरै को वारहि वारा । एकहि वार होहुँ जरि छारा
 अब धँसि लीन्ह चहै तेहि आसा । पावै साँस कि मरै निरामा'
 कहि कै सुआ जो छोडेसि पाती । जानहु दीप छुवत तस ताती
 गीउ जो बाँधा कचन-तागा । राता साँव कठ जरि लागा

रोड रोड सुआ कहै सो घाता । रक्त कै आंसु भयउ मुख राता
 'वह तोहि लागि क्या मव जारी । तपत मान, जल देहि पवारी
 तोहि कारन वह जोगी भसम कीन्ह तन दाहि ।

तू असि निठुर निछोही वात न पूछै ताहि' ॥ ३६ ॥

रुहोसि 'सुआ, मो सां सुनु वाता । चहै ता आज मिलौ जस राता
 हैं जानति हैं अघही काचा । ना जेइ प्रीति रग थिर रौचा'
 पुनि धनि रुनक पानि मसि माँगी । उतर लिखत भीजी तन आँगी
 'हैं जो गडं सिव-मडप भोरी । तहँवाँ कस न गाँठि तै जोरी ?
 भा विसँभार देखि कै नैना । सगिन्ह लाज का बोलो वैना ?
 खेलहि मिस मैं चदन घाला । मरु जागसि तौ देउँ जयमाला
 तवहुँ न जागा, गा तू सोई । जागे भेट, न सोए होई
 तौ लागि सुगुति न लेड सका रावन सिय जय साथ ।

कौन भरोसे अब कहीं जीउ पराए हाथ ॥ ३७ ॥

अब जौ सूर गगन चढि आत्रै । राहु होइ तौ ससि रुहँ पावै
 बहुतन्ह ऐस जीउ पर गेला । तू जाँगी कित आहि अकेला
 हैं पुनि इहाँ ऐस तोहि राती । आधी भेंट पिरोतम-पाती
 तहुँ जौ प्रीति निनाहँ आँटा । भौर न देख केत कर काँटा
 होइ पतग अधरन्ह गहु दीया । लेसि समुद धँसि होइ मरजीया
 चातक होइ पुकारु पियासा । पीउ न पानि सेवाति कै आसा
 होहि चकोर दिस्टि ससि पाहाँ । श्री रवि होहि रुवलदल माहाँ
 महुँ ऐसै होउँ तोहि कहँ, सकहि तौ और निनाहु ।

राहु बेधि अरजुन होइ जीउ दुरपदी व्याहु' ॥ ३८ ॥

राजा इहाँ ऐस तप भूरा । भा जरि विरह छार कर कूरा
 नैन लाइ सो गयउ विमोही । भा विनु जिउ, जिउ दीन्हैसि ओही
 सुऐ जाइ जव देखा तासू । नैन रक्त भरि आए आसू
 सदा पिरीतम गाढ करेई । ओहि न भुलाइ, भूलि जिउ देई
 मुआ जिया अस वाम जो पावा । पाती देइ मुख वचन सुनावा
 गुरु क वचन म्रवत दुइ मेला । 'कीन्हि सुदिस्टि, वेगि चलु चेला
 तोहि अलि कीन्ह आप भइ केवा । हँ पठवा गुरु बीच परेवा
 आवहु सामि सुलच्छना जीउ वसै तुम्ह नावँ ।

नैनहि भीतर पथ है हिरदय भीतर ठावँ ॥ ३६ ॥

सुनि पदमावति कै असि मया । भा वसत, उपनी नइ कया
 सुआ क बोल पौन होइ लागा । उठा सोइ, हनुवँत अस जागा
 चाँद मिलै कै दीन्हैसि आसा । सहसौ कला सूर परगासा
 पाति लीन्हि, लँइ सीस चढावा । दीठि चकोर चद जस पावा
 उठा फूलि हिरदय न समाना । कथा टुक टुक बँहराना
 लीन्है सिधि साँसा मन मारा । गुरु मछदरनाथ सँभारा
 सोजि लीन्ह सो सरग-दुवारा । बज्र जो मूँदे जाइ उघारा
 वॉरु चढाव सरग-गढ चढत गयउ होइ भोर ।

भइ पुकार गढ ऊपर चढे सेंधि देइ चोर ॥ ४० ॥

राजै सुनि जोगी गढ चढे । पूछै पास जो पडित पढे
 'जोगी गढ जो सेंधि दे आवहि । बोलहु सवद सिद्धि जस पावहि'
 कहहि वेद पढि पडित वेदी । 'जोगि भौर जस मालति-भेदी'
 राँध जो मत्रो बोले सोई । 'ऐस जो चोर सिद्ध पै कोई

सिद्ध निसक रनि दिन भव्हैं। ताका जहाँ तहाँ अपसवहैं
सिद्ध निडर अस अपने जीवा। खडग देखि कैं नावहिं गोवा
सिद्ध भमर, फाया जस पारा। छरहिं मरहिं नर जाइ न मारा
छरहीं फाज ^{कर} कर राजा चटैं रिसाइ।

मिथ गिध दिस्टि गगन पर, प्रिनु नर किछु न उमाइ ॥४१॥

अपहैं करहु गुदर मिस माजू। चढहिं बजाइ जहाँ लगी राजू'
चौपिस लाग्य छत्रपति साजं। छपन कोटि दर बाजन बाजं
देगि फटक श्री मँत हाथी। पाले रतनसेन कर साथी
'होत आव दल धनुत बसूभा। अस जानिय किछु होइहि जूभा
राजा तू जोगी होइ खेला। एही दिवस कहैं हम भण खेला
जहाँ गाढ ठाकुर कहैं होइ। सग न छाँडै सेवक मोई
गुरु कोर जाँ आयसु पावहि। सँह होहिं श्री चक्र चलावहि।

आजु करहि रन भारत मत वाचा देइ राखि।

सत्य देख मय फौतुक, सत्य भरै पुनि सारि ॥ ४२ ॥

गुरु कहा 'खेला सिध होहू। पेम-वार होइ करहु न कोहू
एहि सेंति बहुरि जूभ नहिं करिए। खडग देखि पानी होइ ढरिए
पानिहि काह गडग कैं धारा। लौटि पानि होइ सोइ जो मारा'
राजै ^{१५२} छेंकि धरे मय जोगी। दुख ऊपर दुख सहै वियोगी
नाग-फाँस उ-ह मेला गीवा। हरप न बिसमौ एकौ जीवा
भलेहि अनि गिड मेली फाँसी। है न सोच हिय, रिस अस नासी
'मैं गिड फाँद ओहि दिन मेला। जेहि दिन पेम-पथ होइ खेला

परगट गुपुत सकल महँ पूरि रहा सो नावँ ।

जहँ देखौ तहँ ओही, दूसर नहिं जहँ जावँ ॥ ४३ ॥

जब लगि गुरु हँ अहा न चीन्हा । कोटि अंतरपट बीचहि दीन्हा

जब चीन्हा तब और न कोई । तन मन जिउ जीवन सब सोई

‘हँ हँ’ करत धोरत इतराहीं । जब भा सिद्ध कहौ परछाहीं ?

मारै गुरु, कि गुरु जियावै । और को मार ? मरै सब आवै

सो पदमावति गुरु, हँ चेला । जोग-तत जेहि कारण खेला

माँगै सीस देउँ सह गीवा । अधिक तरौ जौ मारै जीवा

अपने जिउ कर लोभ न मोहौ । पेम-वार होइ माँगौ ओही

दरसन ओहि कर दिया^{दी} जस हँ सो भिखारि पतग ।

जौ करवत सिर सारै मरत न मोरौ अग' ॥४४॥

पदमावति कँवला ससि-जोती । हँसै फूल, रोवै सब मोती

जबहिं सुरुज कहँ लागा राहू । तबहिं कँवल मन भयउ अगाहू ॥

परगट ढारि सकै नहिं आँसू । घटि घटि माँसु गुपुत होइ नासू

पदमावति सँग सरणी सयानी । गनत नरत सब रैनि विहानी

जानहिं मरम कँवल फर कोई । देखि विधा विरहिनि कै रोई

विरहा कठिन काल कै कलौ^{ऊँ} । विरह न सहै, काल बरु भला

काल काढि जिउ लेइ सिधारा । विरह-काल मारे पर मारा

तन रावन होइ सुर^{उर} चढा विरह भयउ हनुवत ।

जारे ऊपर जारै चित मन करि भसमत ॥ ४५ ॥

घरी चारि इमि गहन गरासी । पुनि विधि हिये जोति परगासी

निमँस ऊभि भरि लीन्हेसि साँसा । भा अधार, जीवन कै आसा

विनवदि मन्त्री 'दूद मनि राह । तुम्हरी जाति जोति सब फाह
 तू मनि-बदन जगत उजियारी । फेड हरि लीन्ह, कोन्ह अंधियारी
 तू गजगामिनि गरज-गोहनी । अथ फन आम छांडु तू, बेली
 तू हरि लफ हराण फेदरि । अथ फित हारि करति है निय हरि ।
 तू कोफित-रथनी जग मंछा । फेड न्याधा होइ गहा निहोहा ?

कँवल-रुली तू पदमिनि, गड निमि, भयउ विहान ।

अथ न सपुट खाननि जय रे उआ जग भानु' ॥ ४६ ॥

भानु-नाथे मुनि कँवल विगामा । फिरि कै भौर लीन्ह मधु वासा
 मग्द-बद सुख जयहि उजेली । गजन-नैन उठे फरि फेला
 विरह न बोल आव सुख ताई । मरि मरि बाल जाँउ धरियाई
 दय विरह दारुन, हिय काँपा । गोलि न जाइ विरह दुख भाँपा
 उदधि-ममुद जम तरंग देखावा । चख वृमाहिं, मुख धात न आवा
 यह सुनि लहरि लहरि पर धारा । भँवर परा, जिउ आह न पावा
 'मन्त्री, आनि विप देहु तौ मरऊँ । जिउ न पियार, मरै का डरऊँ ?

गिनहि उठै, गिन बूढै अम हिय कँवल मँकेत ।

हीरामनहि बुतावदि, मन्त्री, गहन जिउ लेत' ॥ ४७ ॥

चंदी धाय सुनत गिन आई । हीरामन लेइ आइ बोलार्ड ।
 जनहु बँद ओपद लेइ आवा । रोगिया रोग भरत जिउ पावा
 सुनत अर्साम नैन धनि चोले । विरह-रैन कोफित जिमि बोलो
 कँवलहि विरह-विधा जम बाढी । फेसर परन पीर हिय गाढी
 और दगध का कहौ अपारा । मती सो जरे कठिन अस भारा

परगट गुपुत सकल महँ पूरि रहा सो नावँ ।

जहँ देखौ तहँ ओही, दूसर नहिँ जहँ जावँ ॥ ४३ ॥

जब लगि गुरु हौं अहा न चीन्हा । कोटि अंतरपट बीचहिँ दीन्हा
जब चीन्हा तब और न कोई । तन मन जिउ जीवन सब सोई
'हौं हौं' करत धोरत इतराहीं । जब भा सिद्ध कहों परछाहीं ?
मारै गुरु, कि गुरु जियावै । और को मार ? मरै सब आवै
सो पदमावति गुरु, हौं चेला । जोग-तत जेहि कारण खेला
माँगै सीस देउँ सह गोवा । अधिक तरौ जौ मारै जीवा
अपने जिउ कर लोभ न मोही । पेम-वार होइ माँगौ ओहीँ
दरमन ओहि कर दिया जस हौं सो भिरारि पतग ।

जौ करवत सिर सारै मरत न मोरौ अग' ॥४४॥

पदमावति कँवला ससि-जोती । हँसै फूल, रोवै सब मोती
जबहिँ सुरुज कहँ लागा राहू । तनहिँ कँवल मन भयउ अगाहू
परगट टारि सकै नहिँ आँसू । घटि घटि माँसु गुपुत होइ नासू
पदमावति सँग सखी सयानी । गनत नखत सब रँनि विहानी
जानहिँ मरम कँवल कर कोई । देखि विद्या विरहिनि कै रोई
विरहा कठिन काल कै कलौ । विरह न सहै, काल बरु भला
काल काढि जिउ लेइ सिधारा । विरह-काल मारै पर मारा
तन रावन होइ सुर चढा विरह भयउ हनुवत ।

जारै ऊपर जारै चित मन करि भसमत ॥ ४५ ॥

घरी धारि इमि गहन गरासी । पुनि विधि हिये जोति परगासी
निमँस ऊभि भरि लीन्हेसि साँसा । भा अधार, जीवन कै आसा

हीरामन जो बात यह कही । सुर के गहन चोंद तव गही
 'अप जौं जांगि मरै मोहि नेहा । मोहि ओहि साथ धरति गगनेहा
 रहै त करौं जनम भरि सेवा । चलै त यह जिउ साथ परेवा
 कहौ जाइ अप मोर सँदेसु । तजौ जोग, अब हाँहु नरेसु
 जिनि जानहु हँ तुम्ह सौ दूरी । नैनन्ह माँभ गडी वह सूरी
 तुम्ह परसद घटे घट केरा । मोहिं घट जीउ घटत नहि बेरा
 तुम्ह कहँ पाट हिय मँहँ साजा । अब तुम्ह मोर दुँहँ जग राजा ५१

जौ रे जियहि मिलि गर रहहिं मरहि तो एऊँ दोउ ।

तुम्ह जिउ कहँ जिनि होइ किछु, मोहिं जि होउ सो होउ' ५१



होइ हनुवत पैठ है कोई । लकादाहु लागु करै सोई
 लका बुझी आगि जौ लागी । यह न बुझाइ आँच बज्जागी
 जहँ लगि चदन मलयगिरि औ सायर सब नीर ।

। सब मिलि आइ बुझावहिं बुझै न आगि सरीर ॥ ४८ ॥
 हीरामन जौ देखेसि नारी । प्रीति-बेल उपनी छिय-नारी
 कहेसि 'कस न तुम्ह होहु दुहेली । अरुभी पेम जो पीतम बेली
 प्रीति-बेलि जिनि अरुभी कोई । अरुभी, मुए न छूटै सोई'
 पदमावति उठि टेकै पाया । 'तुम्ह हूँत देरौ पीतम छाया
 कहत लाज औ रहै न जोऊ । एक दिसि आगि दुसर दिसि पीऊ
 तुम्ह सो मोर खेवक गुरु देवा । उतरौ पार तेही बिधि सेवा
 दमनहि नलहि जो हस मेरावा । तुम्ह हीरामन नावँ कहावा
 मूरि सजीवन दूरि है सालि ^{भायरे} सकती वानु । ११२० ॥ ४९ ॥

प्राण मुकुत अब होत है वेगि देखावहु भानु' ॥ ४९ ॥
 हीरामन भुँई धरा लिलाट । 'तुम्ह रानी जुग-जुग सुख-पाट
 जेहि के हाथ सजीवन मूरी । सो जानिय अब नाहीं दूरी
 पिता तुम्हार राज करै भोगी । पूजै विप्र, मरावै जांगी
 पौरि पौरि कोतवार जो बैठा । पेम क लुबुध सुरँग होइ पैठा
 चढत रैनि गढ होइगा भोरु । आवत बार ^{पुकार} धरा कै चोरु
 अब लेइ गए देइ ओहि सूरी । तेहि सौ अगाह विधा तुम्ह पूरी
 अब तुम्ह जिउ, काया वह जागी । क्या क रोग जानु पै जांगी
 रूप तुम्हार जोउ कै पिंड कमावा फेरि ।

आपु हेराइ रहा, तेहि काल न पावै हेरि' ॥ ५० ॥

जोगिहि जगहि गाढ अस परा । महादेव कर आसन टरा
 वै हँसि पारवती सौँ कहा । जानहुँ सूर गहन अस गहा
 आजु चढे गढ ऊपर तपा । राजै गहा सूर तन छपा
 जग देखै गा कौतुक आजू । कीन्ह तपा मारै कहँ साजू
 पारवती सुनि पाँयन्ह गरी । 'चलि, महेस, देखै णहि घरी'
 भेस भौंट भौंदिनि कर कीन्हा । ओ ठनुवत वीर मँग लीन्हा
 आइ गुपुत होइ देखन लागी । वह मूरति कस सती मभागी
 कटक असूभ देखि कै राजा गरव करेइ ।

दौड क दसा न देखै दहुँ का कहँ जय देइ ॥ ३ ॥

लेइ सँदेस सुअटा गा तहाँ । सूरि देखि रतन कहँ जहा
 देखि रतन हीरामन रोवा । राजा जिउ लोगन्ह हठि रोवा हे राजा
 देखि रुदन हीरामन केरा । रोवहि सब, राजा मुख हेरा
 मँगहि मव विधिना सौँ रोई । कै उपकार छोडावै कोई
 कहि सँदेस सब विपति सुनाई । विकल बहुत, किछु कहान जाई
 काढि प्रान वैठी लेइ हाथा । मरैतौ मरौँ, जिअौँ एकमाथा
 सुनि सँदेस राजा तन हँसा । प्रान प्रान घट घट महँ वमा
 सुअटा भौंट दसौँधी भए जिउ पर एक ठाँव । प्रानदेने दो ५५१ हो
 ५५१

चलि सो जाइ अब देख तहँ जहँ वैठा रह राव ॥ ४ ॥

राजा रहा दिस्टि कै औँधी । रहि नमका तन भौंट दसौँधी
 रुहेसि मेलि कै हाथ कटारी । पुरुष न आछ वैठ पेटारी
 गध्रवसेन जहाँ रिस-वाढा । जाइ भौंट आगे भा ठाढा
 बेला गध्रवसेन रिसाई । 'कस जोगी, कस भौंट असाई'

(४) भेंट खंड

बाँधि तपा^{नपत्नी} आने जहँ सूरी । जुरे आइ सब सिचलपूरी
 पहिले गुरुहि देख कहँ आना । देखि रूप सब कोइ पछिताना
 लोग कहहि यह होइ न जोगी । राजकुँवर कोइ अहँ बियोगी
 काहुहि लागि भयउ है तपा । हिये सो माल, करहु मुख जपा
 जस मारै कहँ वाजा तूरु । सूरी देखि हँसा मसूरु^{मसूरु} ॥ १ ॥
 चमके दसन भयउ उजियारा । जो जहँ तहाँ बीजु अस मारा
 जोगी करै करहु पै रोजू । मकु यह होइ न राजा भोजू
 सब पूछहि 'कहु जोगी जाति जनम औ नाँव ।

जहाँ ठाँव रोवै करै हँसा सो कहु केहि भाव' ॥ १ ॥

'का पूछहु अब जाति हमारी । हम जोगी औ तपा भिसारी
 जोगिहि कौन जाति, हो राजा । गारि न कोह, मारि नहि लाजा
 निलज भिसारि लाज जेइ रोई । तेहि के रोज परै जिनि कोई
 जाकर जीउ मरै परै वसा । सूरी देखि सो कस नहि हँसा ?
 आजु नेह सौ होइ निवेरा । आजु पुहुमि तजि गगन बसेरा
 आजु कया-पौंजर-बँदि दूटा । आजुहि प्राण-परेवा छूटा
 आजु नेह सौ होइ निनारा । आजु पेम सँग चला पियारा
 आजु अबधि सिर पहुँची किए जाहुँ मुख रात ।

बेगि होहु मोहि मारहु, जिनि चालहु यह वात' ॥ २ ॥

जोगिहि जवहि गाढ अस परा । महादेव कर आसन टरा
 वै हँसि पारवती साँ कहा । जानहुँ सूर गहन अस गहा
 आजु चढे गढ ऊपर तपा । राजै गहा सूर तव छपा
 जग देखै गा कौतुक आजू । कीन्ह तपा मारै कहँ साजू
 पारवती सुनि पाँयन्ह परी । 'चलि, महेस, देखँ एहि घरी'
 भेस भाँट भाँटिनि कर कीन्हा । औ ठनुवत वीर सँग लीन्हा
 आइ गुप्त होइ देखन लागी । वह मूरति कम मती मभागी
 कटक असूझ देखि कै राजा गरन करइ ।

दैउ क दसान देखै दहुँ का कहँ जय देइ ॥ ३ ॥

लेइ सँदेस सुअटा गा तहाँ । सूरी देहि रतन कहँ जहाँ
 देखि रतन हीरामन रोवा । राजा जिउ लोगन्ह हठि रोवा है राज
 देखि रुदन हीरामन मेरा । रोवहि सब, राजा मुख हेरा
 माँगहि सब विधिना माँ रोई । कौ उपकार छोटावै कोई
 कहि सँदेस सब विपति सुनाई । विकल बहव, किछु कहान जाई
 काढि प्रान बैठी लेइ हाथा । मरैतौ मरौं, जिअौ एक साथ
 मुनि सँदेस राजा तव हँसा । प्रान प्रान घट घट महँ बसा
 सुअटा भाँट दसौंधी भए जिउ पर एक ठाँव । प्रान देने दो ५५१ ६०
 ५५१ ६०

चलि सो जाइ अब देख तहँ जहँ बैठा रह राव ॥ ४ ॥

राजा रहा दिस्टि कै औंधी । रहि न सका तव भाँट दसौंधी
 कहेसि मेलि कै हाथ कटारी । पुरुष न आछे बैठ पेटारी
 गध्रवसेन जहाँ रिस-वाढा । जाइ भाँट आगे भा ठाढा
 बोला गध्रवसेन रिसाई । 'कस जोगी, कस भाँट अमाई'

महादेव रनवट वजावा । सुनि कै सवद वरम्हा चलि आवा
फनिपति फन पतार सौं काढा । अस्टौ कुरी नाग भए ठाढा
तैंतिस कोटि देवता साजा । औ छानवै मेघदल गाजा

नवो नाथ चलि आवहि औ चौरासी सिद्ध ।

आजु महाभारत, चले गगन गरुड औ गिद्ध ॥ ५ ॥

भइ अग्या 'को भॉट अभाऊ । वाएँ हाथ देइ वरम्हाऊ
को जोगी अस नगरी मोरी । जो देइ सेधि चढै गढ चोरी
भॉट नावै का मारौं जीवा । अबहूँ वोलु नाइ कै गीवा'
'जौ सत पूछसि गध्रव राजा । सत पै कहौं परै नहि गाजा
भाटहिं काह मीचु सौं डरना । हाथ कटार, पेट हनि मरना
जवूदीप चित्तउर देसा । चित्रसेन वड तहाँ नरेसा
रतनसेन यह ताकर वेटा । कुल चौहान जाइ नहि मेटा

नाँव महापातर मोहि, तेहिक भिर्यारी ढोठ ।

जौं सरि बात कहे रिस लागै, कहै वसीठ' ॥ ६ ॥

ततरन पुनि महेस मन लाजा । भॉट करा होइ विनवा राजा
'गध्रवसेन, तूँ राजा महा । हौं महेस-मूरति, सुनु कहा
जौ पै बात होइ भलि आगे । कहा चाहिय, का भारिस लागे
राजकुँवर यह, होहि न जोगी । सुनि पदमावति भयउ वियोगी
जवूदीप राजघर वेटा । जो है लिखा सो जाइ न मेटा
तुम्हरहि सुआ जाइ ओहि आना । औ जेहि कर वर कै तेइ माना
पुनि यह बात सुनी सिव-लोका । करसि वियाह धरम है तोका

नांगे भांगे स्वर लेंड गुण न टाँटे पार ।

धूम्रु, फनफ फनेरी भाँखि देहु, नहि मार' ॥ ७ ॥

'ध्रादट होहु रे भाँट भिर्यारी । फा तू मोहि देहि अमि गारी
को मोहि जोग जगत होइ पारा । जा महुँ हरेँ जाइ पवारा
जोगी जती आव जो कोई । मुनवहि राममान भा सोई
भीषि लेहि फिरि मोगहि आग । ए मत्र रनि रहे गड लागे
जस हींछा चाँहा तिन्ह दान्हा । नाहि वेधि सूरी जिउ लीन्हा
जहि अम माध होइ जिउ गोवा । सो पतग दीपक तस रोवा
सुर, नर, मुनि सब गध्रन देवा । तेहि को गर्न ? करहि निति सेवा
मो नै को नखरि कर मुनु, रे भूठे भाँट, ।

छार हाँट जौ चाली निज हस्तिन कर ठाट' ॥ ८ ॥

जोगी धिरि मेले मत्र पाछे । उरए माल आए रन काछ
मत्रिन्ह कहा, 'मुनहु हा राजा । देखहु अत्र जोगिन्ह कर काजा
हम जो कहा तुम्ह करु नजूक । होत आन दर जगत असूभू
कहहि घात, जोगी अत्र आए । खिनक माहुँ चाहत हँ धाए
पुनि आ । फा देगै राजा । ईसर कर घट रन बाजा
जेहि कर गरव करत हुत राजा । सो सब फिरि वैरी होइ साजा
जहवाँ महादेव रन खडा । सोस नाइ नृप पायँन्ह परा
'नेहि कारन रिस कीजिए हँ सेवक औ चेर ।

जंहि चाहिय तेहि दीजिय बारि गीसाई करे' ॥ ९ ॥

'तू गध्रन राजा जग पूजा । गुन चौदह, सिस देइ को दूजा ?
हीरामन जो तुम्हार परेवा । गा चितउर औ कीन्हेसि सेवा

तेहि बोलाइ पूछहु वह देसू । दहुँ जोगी, की तहाँ नरेसू'
 राजै जब हीरामन सुना । गयउ रोस, हिरदय महुँ गुना
 अग्या भई 'बोलावहु सोई । पडित हुते धोर नहि होई'
 एकहि कहत सहस्रक धाए । हीरामनहि बेगि लेइ आए
 राजै तेहि पूछी हँसि वाता । 'कस तन पियर, भयउ मुख राता

चतुर वेद तुम्ह पडित पढे माख औ वेद ।

कहाँ चढाएहु जोगिन्ह, आइ कीन्ह गढभेद' ॥ १० ॥

हीरामन रसना रम रोला । दै असीस, कै अस्तुति बोला
 'है सेवक तुम्ह आदि गांसाई । सेवा करौ जिअौँ जब ताई
 तेहि सेवक के करमहि दोपू । सेवा करत करै पति रोपू
 औ जेहि दोष निदोपहि लागा । सेवक डरा, जीउ लेइ भागा
 सप्त दीप फिरि देखेउँ, राजा । जवूदीप जाइ तव वाजा
 तहँ चितउरगढ देखेउँ ऊँचा । ऊँच राज सरि तोहि पहुँचा
 रतनसेन यह तहाँ नरेसू । एहि आनेउँ जोगी के भेसू

सुआ सुफल लेइ आयउँ तेहि गुन ते मुख रात ।

कया पीत सो तेहि डर मँवरौ विक्रम वात' ॥ ११ ॥

पहिले भयउ भौंट सत भाखी । पुनि बोला हीरामन साखी
 राजहि भा निसचय, मन माना । बाँधा रतन छोदि कै आना
 कुल पूछा, चौहान कुलीना । रतन न बाँधे होइ मलीना
 देगि कुँवर धर कचन जोगू । 'अस्ति अस्ति' बोला सब लोगू
 मिला सो बस अन्न उजियारा । भा बरोक तव तिलक मँवारा

पच्छिउँ कर वर, पुरुष क धारी । जोरी लिंगी न होइ निनारी
मानुष साज लाय मन साजा । होइ सोइ जो विधि उंपराजा
गए जो धाजन वाजत जिउ मारन रन माहँ ।

फिरि धाजन तेइ धाजे मगलचार ओनाहँ ॥ १२ ॥ सुनारि पत्रे

लगन धरा श्री रचा वियाहू । सिंघल नेवत फिरा सब काहू
धाजन धाजे कोटि पचासा । भा अनद सगरीं कैलासां
रतनसेन कहँ कापड आण । हीरा मोति पदारथ लाए
साजा राजा, धाजन धाजे । मदन सहाय दुवौ दर गाजे
श्री राता सोने रथ साजा । भए वरात गोहूने सब राजा
धाजत गाजत भा असवारा । सब सिंघल नइ कौन्ह जोहारा
चहुँ दिसि मसियर नरत तराई । सुरुज चढा चाँद के ताई
धरती सरग चहुँ दिसि पूरि रहे मसियार ।

वाजत आवै मँदिर कहँ होइ मगलाचार ॥ १३ ॥

जहँ सोने कर चित्तर-सारी । लेइ वरात सब तहाँ उँतारी
माँभ सिंघासन पाट सँवारा । दूलह आनि तहाँ वैसारा
होइ लाग जेवनार-पसारा । कनक पत्र पंसर पनवारा
सोन-थार मनि मानिक जरें । राय रक के आगे धरे
भई जेवनार, फिरा खँडवानी । फिरा अरगजा कुँहँकुँहे-पानी
फिरा पान, बहुरा सब कोई । लाग वियाह-चार सब होई
गाँठि दुलह दुलहिनि कै जोरी । दुम्री जगत जो जाइ न छोरी
चाँद सुरुज दुम्री निरमल, दुम्री सँजोग अनूप ।

सुरुज चाँद सौ भूला, चाँद सुरुज के रूप ॥ १४ ॥

दुऔ नाव लै गावहिं धारा । करहिं सो पदमिनि मगलचारा
 चाँद के हाथ दीन्ह जयमाला । चाँद आनि सूरुज गिउ घाला
 सूरुज लीन्ह, चाँद पहिराई । हार नखत तरइन्ह सो पाई
 पुनि धनि भरि अजुलि जल लीन्हा । जोवन जनम कत कहँ दीन्हा
 कत लीन्ह, दोन्हा धनि हाथा । जारी गाँठि दुऔ एक साथ
 चाँद सुरुज सत भावरि लेहीं । नखत मोति नेवछावरि देहीं
 फिरहि दुऔ सत फेर, घुटै रूँ । सातहु फेर गाँठि सो एरुं
 भइ भाँवरि, नेवछावरि, राज चार सब कीन्ह ।

दायज कहौं कहौं लागि, लिखि न जाइ जत दोन्ह ॥१५॥

रतनसेन जब दायज पावा । गध्रवसेन आइ सिर नावा
 'मानुस चित्त आन किछु कोई । करै गोसाईं सोइ पै होई
 अब तुम्ह सिंगलदीप-गोसाईं । हम सेवक अहहीं सेवकाई
 जस तुम्हार चितउरगढ देसू । तस तुम्ह इहाँ हमार नरेसू
 जबूदीप दूरि का काजू ? । सिंगलदीप करहु अब राजू'
 रतनसेन बिनवा कर जोरी । 'अस्तुति-जोग जीभ कहँ मोरी
 तुम्ह गोसाईं जेइ छार छुडाई । कै मानुस अब दीन्हि बडाई
 जौ तुम्ह दोन्ह तौ पावा जिवन जनम सुख-भोग ।

नातरु खेह पायँ कै, हौं जोगी केहि जोग ? ॥१६॥

धौराहर पर दीन्हा वासू । सात खड जहवाँ कैलास
 सखी सहमदस सेवा पाई । जनहु चाँद सँग नखत तराई
 होइ मडल ससि के चहुँ पासा । ससि सुरहि लेइ चढीं अकासा
 'चलु सूरुज दिन अथवै जहाँ । ससि निरमल तू पावसि तहाँ'

पदमावति जो सँवारै लीन्हा । पृनिउँ राति दैउ ससि कीन्हा
करि मज्जन तन कीन्ह नहानू । पहिरे चीर, गयउ छपि भानू
रचि पत्रावलि, माँग सेंदूरू । भरे मोति और मानिक चूरू

पहिरि जराऊ ठाढि भइ, कहि न जाइ तस भाव ।

मानहुँ दरपन गगन भा तेहि ससि तार देखाव ॥१७॥

पदमिनि-गवन हम गए दूरी । कुजर लाज मेल सिर धूरी
वदन देखि घटि चद छपाना । दसन देखि कै बीजु लजाना
रजन छपे देखि कै नैना । कोकिल छपी सुनत मधु वैना
गोव देखि कै छपा मयूरू । लक देखि कै छपा सद्गुरू ॥१८॥
भौहन धनुक छपा आकारा । बेनी वासुकि छपा पतारा
रडग छपा नासिका विसेली । अमृत छपा अधर-रस देखी
पटुचहि छपी फव्वल पौनारी । जय छपा कदनी होइ बारी ॥१९॥

अछरी रूप छपानीं जबहिं चली धनि साजि ।

जावत गरव-गहेली सवै छपीं मन लाजि ॥ १८ ॥

मिलीं गोहने मरती तराई । लेइ चाँद सूरज पहुँ आई ॥२०॥
पारस रूप चाँद देखराई । देखत सूरज गा मुरछाई
सोरह कला दिस्टि समि कीन्ही । सहसौ कला सुरज कै लीन्ही
भा रवि अस्त, तराई हँसी । सूर न रहा, चाँद परगसी
जोगी आहि, न भोगी होई । खाइ कुरकुटा गा पै सोई
पदमावति जसि निरमल गगा । तू जो कत जोगी भिरमगा
आइ जगावहि 'चेला जागै । आवा गुरु, पायँ उठि लागै'

भोग विलास सबै किछु पावा । कहों जीभ जेहि अस्तुति आवा?
अब तुम आइ अंतरपट साजा । दरसन कहें न तपावहु राजा
नैन सेराने, भूरि गइ देखे दरस तुम्हार ।

नव अवतार आजु भा जीवन सफल हमार' ॥ २४ ॥

हँसि कै राज रजायसु दीन्हा । 'मैं दरसन कारन एत कीन्हा
अपने जोग लागि अस खेला । गुरु भयउँ आपु, कीन्ह तुम्ह चेला
अहक मोरि पुरुपारथ देखेहु । गुरु चीन्हि कै जोग बिसेखेहु
जौ तुम्ह तप साधा मोहि लागी । अब जिनि हिये होहु बैरागी
जो जेहि लागि सहै तप जोगू । सो तेहि के मँग मानै भोगू
सोरह सहस पदमिनी मँगी । सबै दीन्हि, नहिं काहुहि खांगी
सब कर मदिर सोने साजा । सब अपने अपने घर राजा
हस्ति घोर औ कापर सबहि दीन्ह नव साज ।

भए गृही औ लखपती घर घर मानहुँ राज ॥ २५ ॥

पदमावति सब सखी बोलाई । चीर पटोर हार पहिराई
सीस भवन्ह के सेंदुर पूरा । औ राते सब अग सेंदूरा
चदन अग चित्र सब भरीं । नए धार जानहु अवतरीं
जनहुँ केवल संग फूलीं कूई । जनहुँ चाँद संग तरई ऊई
'धनि पदमावति, धनि तौर नाहू । जेहि अमरन पहिरा सब काहू
वारह अमरन, सोरह सिंगारा । तोहि साँह नहि ससि उजियारा
मसि सकलक रहै नहिं पूजा । तू निरुलक, न सरि कोइ दूजा'
काहू बीन गहा कर, काहू नाद मृदग ।

भवन्ह अनद मनावा रहसि कूदि एक सग ॥ २६ ॥

पदमावति कह 'सुनहु, सहेली । है सो कँवल, तुम कुमुदिनि-बेली
 कलस मानि है तेहि दिन आई । पूजा चलहु चढावहि जाई'
 मँझ पदमावति कर जो नेवानु । जनु परभात परै लखि भानु
 आस पास वाजत चौडोला । दुदुभि, भाँझ, तूर, डफ, ढोला
 एक सग मव सोंवे-भरों । देव-दुवार उतरि भई ररी
 अपने हाथ देव नहवावा । कलस सहस इक धिरित भरावा
 पोता मँडप अगर औ चदन । देव भरा अरगज औ वदन
 कै प्रनाम आगे भई, विनय कीन्हि बहु भाँति ।

रानी कहा 'चलहु घर, सगी, होति है राति' ॥ २७ ॥
 भई निसि, धनि जस मसि परगसी । राजें देखि भूमि फिर बसी
 भइ कटकई सरद-ससि आवा । फेरि गगन रवि चाहै छावा
 सुनि धनि भौंह-वनुक फिर फेरा । काम कटाछन्ह कोरहि हेरा
 'जानहु नाहि पैज, पिय, राचौ । पिता सपथ है आजु न बाँचौ
 काल्हि न होइ, रही महि रामा । आजु करहु रावन सग्रामा
 सेन सिंगार महुँ है सजा । गज-गति चाल, अँचल-गति धजा
 नैन समुद औ रडग नासिका । सरवरि जूझ को मो सहुँ टिका ?
 हां रानी पदमावति मैं जीता रस भोग ।

तू सरवरि करु ता सौँ जो जोगी तोहि जोग' ॥ २८ ॥
 'हौँ अस जोगि जान सब कौऊ । वीर सिंगार जिते मैं दोऊ
 उहाँ सामुहें रिपु दल माहों । इहाँ त काम-कटक तुम्ह पाहाँ
 उहाँ त हय चढि नै दल मडौँ । इहाँ त अधर अमिय-रस गडौँ
 उहाँ त रडग नरिदहि मारौँ । इहाँ त निरह तुम्हार सँघारौँ

उहाँ त गज पेलों होइ केहरि । इहवाँ काम कामिनी-हिय हरि
 उहाँ त लूटों कटक रँधारू । इहाँ त जीतों तेर सिंगारू
 उहाँ त कुभस्थल गज नावौ । इहाँ त कचन-कलसहि पावौ
 परै वीच धरहरिया, पेम-राज को टेक ? ।

मानहि भोग छवौ रितु मिलि दूत्रौ होइ एक ॥ २९ ॥

प्रथम वसत नवल रितु आई । सुरितु चैत वैसाय सोहाई
 चदन चीर पहिरि धनि अगा । सेंदुर दीन्ह विहँसि भरि मगा
 कुसुम हार औ परिमल वासू । मलयागिरि छिरका कैलासू
 सौर सुपेती फूलन डासी । धनि औ कत मिले सुरवासी
 पिउ सँजोग धनि जोवन वारी । भौर पुहुप सँग करहि धमारी
 होइ फाग भलि चॉचरि जोरी । विरह जराइ दीन्ह जस होरी
 धनि ससि मरिस, तपै पिय सूरू । नखत सिंगार होहि सब चूरू
 जिन्ह घर कता रितु भली, आव वसत जो नित्त ।

सुख भरि आवहिं देवहरै, दु ख न जानै कित्त ॥ ३० ॥

रितु ग्रीषम कै तपनि न तहाँ । जेठ असाढ़ कत घर जहाँ
 पहिरि सुरग चीर धनि भीना । परिमल भेद रहा तन भीना
 पदमावति तन सिअर सुवासा । नैहर राज, कत-घर पासा
 औ वड जूड़ तहाँ सोवनारा । अगार पोति, सुख तने ओहारा
 सेज विछावन सौर सुपेती । भोग विलास करहि सुख सेंती
 अधर तमोर कपुर भिमसेना । चदन चरचि लाव तत बेना
 भा अनद सिंचल सब कहँ । भातावत कहँ सुख रितु छहँ

दारिउँ दारु लेहि ग्स, आम सदाफर डार ।

हरियर वन सुअटा ऊर जो अस चापनहार ॥ ३१ ॥

रितु पावस बरसै, पिउ पावा । सावन भादौ अधिक सोहावा
पदमावति चाहति रितु पाई । गगन सोहावन, भूमि सोहाई
कोकिल धैन, पाँति बग छूटी । धनि निसरीं जनु वीरवहटी
चमक वोजु, बरसै जल सोना । दादुर मोर सबद सुठि लाना
रँग-राती पीतम मँग जागो । गरजे गगन चाँकि गर लागी
साँतल वूँद, ऊँच चौपारा । हरियर सब देखाइ समाग
हरियर भूमि, कुसुमाँ चोला । औ धनि पिउसँग रचा हिंडाला
पवन भक्कोरे होइ हरप, लागे साँतल वास ।

धनि जानै यह पवन है, पवन सो अपने पास ॥ ३२ ॥

आइ सरद रितु अधिक पियारी । आसिन कातिक रितु उजियारी
पदमावति भइ पूनिउँ कला । चौदसि चाँद उई सिधला
सोरह कला सिँगार बनावा । नखत-भरा सूरुज ससि पावा
भा निरमल सब धरति अकासु । सेज सँवारि कोन्ह फुल-वासु
सेत पिछावन औ उजियारी । हँसि हँसि मिलहि पुरुष औ नारी
सोन-फूल भइ पुहुमाँ फूलो । पिय धनि साँ, धनि पिय साँ भूली
चरु अजन देइ खँजन देखावा । होइ सारस जोरी रस पावा
गहि रितु कता पास जेहि, सुख तेहि के हिय माहँ ।

धनि हँसि लागै पिउ गरै, धनि-गर पिउ कै बाहँ ॥ ३३ ॥

रितु हेमत मँग पिण्ड पियाला । अगहन पूस सीत सुख काला
धनि औ पिउ महँ सीउ सोहागा । दुहुँन्ह अग एकँ मिलि लागे

मन सौँ मन, तन सा तन गहा । हिय सौँ हिय, विच हार न रहा
 जानहु चदन लागेउ अगा । चदन रहै न पावै सगा
 भोग करहि सुख राजा रानी । उन्ह लेखे सब सिस्टि जुडानी
 जूझ दुवौ जोवन सौँ लागा । विच हुँत सीउ जीउ लेइ भागा
 दुइ घट मिलि एकै होइ जाही । ऐस मिलहि तबहुँ न अघाहीं
 हसा केलि करहि जिमि, खँदहिँ कुरलहिँ दोउ ।

सीउ पुकारि कै पार भा, जस चकई क विछोउ ॥ ३४ ॥

आइ सिसर रितु, तहाँ न सीऊ । जहाँ माघ फागुन घर पीऊ
 सौँर सुपेती मदिर राती । दगल चीर पहिरहि बहु भाँती
 घर घर सिंघल होइ सुख भोजू । रहा न कतहुँ दु ख कर खोजू
 जहँ धनि पुरुष सीउ नहिँ लागा । जानहुँ काग देखि सर भागा
 जाइ इद्र सौँ कीन्ह पुकारा । हौँ पदमावति देस निसारा
 एहि रितु सदा सग महेँ सोवा । अब दरसन तें मोर विछोवा
 अब हँसि कै ससि सूरहि भेटा । रहा जो सीउ बीच सो मेटा
 भएउ इद्र कर आयसु, बड सताव यह सोइ ।

कवहुँ काहु के पीर भइ, कवहुँ काहु के होइ ॥ ३५ ॥

(५) नागमती खड

नागमती चितउर-पथ हेरा । पिउ जो गए पुनि मोन्ह न फेरा
 नागर काटु नारि बस परा । तेइ मोहि पिय मो सौं हरा
 सुआ काल होइ लेइगा पीऊ । पिउ नहि जात, जात बरु जीऊ
 भयउ नरायन बावँन करा । राज करत राजा बलि छरा
 करन पाम ली-हेउ कै छदू । विप्र रूप धरि भिलमिल इदू
 मानत भोग गोपिचंद भोगी । लेइ अपमवा जलधर जोगी
 लेइगा कृस्ति गरुड अलीपी । कठिन विछोह, जिअहिं किमि गापी ?

मारस जोरी कौन हरि, मारि वियाधा लीन्ह ?

भुरि भुरि पाँजर हँ भई, विरह-काल मोहि दीन्ह ॥ १ ॥

पिउ-वियाग अस वाउर जीऊ । पपिहा निति बोलै 'पिउ पीऊ'
 अधिक काम दाधै सो रामा । हरि लेइ सुवा गयउ पिउ नामा
 विरह बान तस लाग न डोली । रक्त पसीज, भीजि गड चोली
 सूखा हिया, हार भा भारी । हरि हरि प्रान तजहिं सब नारी
 रन एक आव पेट मँ साँसा । रनहि जाइ जिउ, होइ निरासा
 पवन डोलावहिं, साँचहिं चोला । पहर एक समुझहिं मुख बोला
 प्रान पयान होत को राखा ? को मुनाव पीतम कै भाखा ?

आहि जां मारै विरह कै, आगि उठै तेहि लागि ।

हस जो रहा सरीर मँ, पाँस जरा, गा भागि ॥ २ ॥

मन साँ मन, तन साँ तन गहा । हिय साँ हिय, विच हार न रदा
 जानहु चदन लागेउ अगा । चदन रहै न पावै सगा
 भोग करहि सुख राजा रानी । उन्ह लेखे मव सिस्टि जुडानी
 जूझ दुवौ जोवन साँ लागा । विच छुँत सीउ जीउ लेड भागा
 दुइ घट मिलि एकै होइ जाहीं । ऐम मिलहि तवहुँ न अघाहीं
 हसा केलि करहि जिमि, खँदहिं कुरलहिं दोउ ।

सीउ पुकारि कै पार भा, जस चकई क विछोउ ॥ ३४ ॥

आइ सिसर रितु, तहाँ न सीऊ । जहाँ माघ फागुन घर पीऊ
 साँर सुपेती मदिर राती । दगल चीर पहिरहि बहु भाँती
 घर घर सिंघल होइ सुख भोजू । रहा न कतहुँ दु ख कर साँजू
 जहँ धनि पुरुष सीउ नहि लागा । जानहुँ काग देखि सर भागा
 जाइ इद्र साँ कीन्ह पुकारा । हौँ पदमावति देस निसारा
 एहि रितु सदा संग महँ सोवा । अब दरसन तें मोर विछोवा
 अब हँसि कै नसि सूरहि भेटा । रहा जो सीउ बीच सो मेटा
 भएउ इद्र कर आयसु, बड सताव यह सोइ ।

कवहुँ काहु के पीर भड, कवहुँ काहु के होइ ॥ ३५ ॥

दिय हिंडान अम डोलै मोरा । विरह भुलाइ देइ भँभोरा
 घाट असूभ अघाह गँभीरी । जिउ धाउर भा फिरँ भँभीरी
 जग जल घूढ जहाँ लगि ताकी । मोरि नाव सेवक विनु धाकी
 परवत समुद अगम विच, वीहड घन घनढोर ।

किमि कै भँटी कत तुम्ह ? ना मोहि पाँव, न पाँख ॥ ५ ॥

भा भादों दूभर अति भारी । कैसे भुराँ रँनि अंधियारी ^{10 100}
 मँदिर सून पिउ अनतै वसा । सेज नागिनी फिरि फिरि डसा
 रँहँ अकेलि गहे ^{धिन ५२२०५५} एक पाटी ^{नैन पसारि मरौ हिय फाटी} । नैन पसारि मरौ हिय फाटी
 चमक वीजु, घन गरजि तरासी ^{नैन पसारि मरौ हिय फाटी} । विरह काल होइ जीउ गरासा
 वरसै मया भँभोरि भँभोरी । मारि दुइ नैन चुवै जस ओरी ^{अने ५२}
 धनि सूरै भरे भादौ माहौ । अबहुँ न आएन्हि सँचेन्हि नाहा
 पुरवा लाग भूमि जल पूरी । आक जवास भई तम भूरी
 थल जल भरे अपूर सब, धरति गगन मिलि एक ।

वनि जोवन अवगाह मँहँ दे वूडत पिउ, टेक ॥ ६ ॥

लाग कुवार, नीर ^{पहरावत ५२०५} जग घटा । अबहुँ आउ, कत, ^{५२०५ ५२०५} तन लटा
 तोहि देखे, पिउ, ^{पहरावत ५२०५} पलुहे कया । उतरा चित्त, बहुरि करु मया
 चित्रा मित्र मीन कर आवा । पपिहा पीउ पुकारत पावा
 उआ अगस्त, हस्ति-घन गाजा । तुरय पलानि चढे रन राजा
 स्वाति वूँद चातक मुख परे । समुद सीप मोती सब भरे
 सरवर सँवरि हस चलि आए । सारस कुरलहिँ, खँजन देखाए
 मा परगास, काँस वन फूले । कत न ^{५२०५} ^{५२०५} न ^{५२०५}

‘पाट-महादेइ, हिये न हारू । समुभि जीव चित चेतु मँभारू
 भौर कँवल सँग होइ मेरावा । सँवरि नेह मालति पहुँ आवा
 पपिहै खाती सौ जस प्रांती । टकु पियास, बाँधु मन घांती
 वरतिहि जैस गगन सौं नेहा । पलटि आव वरपा रितु मेहा
 पुनि वसत रितु आव नवेली । सो रस, सो मधुकर, सो बेली
 जिनि अस जीव करसि, तूवारी । यह तरिवर पुनि उठिहि सँवारी
 दिन दस विनु जल सूरि विधसा । पुनि सोइ सरवर, सोई हसा
 मिलहि जो विछुरे साजत, अकम भेंटि गहत ।

तपनि मृगसिरा जे सहँ, ते अद्रा पलुहव’ ॥ ३ ॥

चढा असाढ, गगन घन गाजा । साजा विरह दुद दल वाजा
 धूम, साम, धौरे घन धाए । सेत धजा बग-पाँति देखाए
 खडग-बीजु चमकै चहुँ ओरा । बुद-वान वरसहि घन घेरा
 ओनई घटा आइ चहुँ फेरी । कत, उवारु मदन हँ घेरी
 दादुर मोर कोकिला, पीऊ । गिरै बीजु, घट रहै न जीऊ
 पुप्य नखत सिर ऊपर आवा । हँ विनु नाह, मँदिर को छावा?
 अद्रा लाग, लागि भुँडे लेई । मोहिं विनु पिउ को आदर देई?
 जिन्ह घर कता ते सुरी, तिन्ह गारौ औ गर्व ।

कत पियारा वाहिरै, हम सुख भूला सर्व ॥ ४ ॥

सावन वरस मेह अति पानी । भरनि परी, हँ विरह भुरानी
 लाग पुनरवसु पीउ न देखा । भइ वाउरि, कहँ कत सरेखा ?
 रक्त कै आँसु परहिं भुँडे टटी । रेंगि चलीं जस वीरवहूटी
 सखिन्ह रचा पिउ सग हिंडोला । हरियरि भूमि, कुसुभी चोला

द्विय द्विंडाल अम डालै मारा । विरह कुलाइ देइ भक्तभोरा
 घाट असूभ अघाह गँभीरी । जिउ घाउर भा फिरै भँभीरी
 जग जल बूड जहाँ लगी ताकी । मोरि नाव खेवक विनु घाकी
 परवत समुद अगम विच, वीहड घन वनढोर ।

किमि कै भँटी कत तुम्ह ? ना मोहि पाँव, न पाँख ॥ ५ ॥

भा भादौ दूभर अति भारी । कैसे भूराँ रँनि अंधियारी ^{in 103}
 मँदिर सून पिउ अनतै वसा । सेज नागिनी फिरि फिरि डसा
 रँदा अकेलि गहे ^{बिना करुण} एक पाटी । नैन पसारि मरौ हिय फाटी
 चमक घोजु, घन गरजित रासा ^{नतल देन} । विरह काल होइ जोड गरासा
 वरसै मघा भक्तोरि भक्तोरी । मोरि दुड नैन चुवै जस ^{अनेल} श्रीरी ^{एक}
 धनि सुरै भरे भादौ माहाँ । अवहुँ न आएन्हि साँचेन्हि नाहा
 पुरवा लाग भूमि जल पूरी । आफ जवास भई तस भूरी
 धल जल भरे अपूर सब, धरति गगन मिलि एक ।

धनि जोवन अवगाह महँ दे बूडत पिउ, टेक ॥ ६ ॥

लाग कुवार, नीर ^{पदवित} जग घटा । अवहुँ आउ, कत, ^{शरीर कशरी} तन लटा
 तोहि देखे, पिउ, ^{होरे} पलुहे कया । उत्तरा चित्त, बहुरि करु मया
 चित्रा मित्र मीन कर आवा । पंषिहा पीउ पुकारत पावा
 उआ अगस्त, हस्ति-घन गाजा । तुरय पलानि चढे रन राजा
 स्वाति बूँद चातक मुख परे । समुद सीप मोती सब भरे
 सरवर सँवरि हस चलि आए । सारस कुरलहिँ, खँजन देखाए
 भा परगास, काँस वन फूले । कत न फिरे, विदेसहि-भूले

विरह-हस्ति तन सालै, घाय करै चित चूर ।

वेगि आइ, पिउ, वाजट्टु, गाजट्टु होइ सदूर ॥ ७ ॥ ॥

कातिक सरद-चद उजियारी । जग सीतल, हौं विरहै जारी
चौदह करा चाँद परगासा । जनहुँ जरै सब धरति अकासा
तन मन सेज करै अगिदाहू । सब कहँ चद भयउ मोहिं राहू
चहँ खड लागै अंधियारा । जौ घर नाहीं कत पियारा
अवहँ, निठुर, आउ एहि वारा । परव देवारी होइ ससारा
सखि भूमक गावँ अँग मोरी । हौं भुरावँ, विछुरी मोरि जोरी
जेहि घर पिउ सो मनोरथ पृजा । मो कहँ विरह, सबति-दुख दूजा
सखि मानै तिउहार सब गाइ, देवारी खेलि ।

हौं का गावौ कत विनु, रही छार सिर मेलि ॥ ८ ॥

अगहन दिवस घटा, निसि बाढी । दूभर रैनि, जाइ किमि गाढी ?
अव-धनि विरह दिवस भा राती । जरौं विरह जस दीपक-बाती
काँपै हिया जनावै मीऊ । तौ पै जाइ होइ मँग पीऊ ।
घर घर चोर रचे सब काहू । मोर रूप-रँग लेइगा नाहू
पलटि न बहुरा गा जो विछोइ । अवहँ फिरै, फिरै रँग सोइ
वज्र अग्नि विरहिनि हिय जारा । सुलुगि सुलुगि दगधै होइ छारा
यह दुरस दगध न जानै कतू । जोवन जनम करै भसमतू
पिउ सौ कहेउ सँदेसडा, हे भौरा, हे काग ।

सो धनि विरहै जरि मुई, तेहि क धुअँ हम लाग ॥ ९ ॥

पूस जाट धर धर तन काँपा । सुरज जाइ लका-दिसि चाँपा
विरह वाढ, दारुन भा सीऊ । कँपि कँपि मरौं, लंड हरि जीऊ
प्राण हरे जेताई

कत कहाँ, लागों ओहि हियरे । पथ अपार, सूझ नहि नियरे
 साँ सपेती आवै जूडी । जानहु सेज हिवचल बूडी
 चकई निसि विछुरै, दिन मिला । हाँ दिन राति विरह कोकिला
 रैनि अकेलि माथ नहि सर्या । कैसें जियै विछोही पर्या
 निरहमचान भयउ तन जाडा । जियत खाइ औ मुए न छाँडा
 रकत ^{जयप्रकाश}दुरा माँसू गरा, हाड भयउ सब सरा ।

धनि सारस होइ ररि मुई, पीउ समेटहि परा ॥ १० ॥

ला^{१३}इ माथ, परै अथ पाला । विरहा काल भयउ जडकाला
 पहल पहल तन रुई भाँपै । हहरि हहरि अधिकौ हिय काँपै
 आइ सूर होइ तपु, रे नाहा । तोहि त्रिनु जाड न छूटै माहा
 एहि माहँ उपजै रसमूलू । तूँ सो भौर, मोर जोवन फूलू
 नैन चुवहि जस महवट नीरू । तोहि विनु अग लाग सर-चाँरू
 टप टप बूँद परहि जस ओला । विरह पवन होइ मारै भोला
 कोहि क सिंगार, के पहिरु पटोरा ? । गीउ न हार, रही होइ डोरा

तुम विनु काँपै धनि हिया, तन ^{दुःख}तिनउर भा डोल

तेहि पर विरह जराइ कै चहै उडावा भोल ॥ ११ ॥ राख

फागुन पवन भकोरा वहा । चाँगुन सीउ जाइ नहिं सहा
 तन जस पियर पात भा मोरा । तेहि पर विरह देइ भकभोरा
 तरिवर भरहिं, भरहिं बन ढाखा । भई ओनत फूलि फरि सारया
 करहिं बनसपति हिये दुलासू । मो कहँ भा जग दून उदासू
 फागु करहिं सब चाँचरि जौरी । मोहि तन लाइ दीन्हि जस होरी

जौ पै पीउ जरत अस पावा । जरत मरत मोहि रोप न आं
 राति दिवम वस यह जिउ मोरे ^{पुच्छु ५१२२ ३१ ३१५} लगौ निहार कत अब तो
 यह तन जाँ छार कै, कहीं कि 'पवन, उडाव' ।

मकु तेहि मारग उडि परै कत धरै जहँ पाव ॥ १२ ॥

चैत बसता होइ ^{मान १०२२ ०००} धमारी । मोहि लेखे ससार उजोर
 पचम विरह पंच सर मारै । रक्त रोइ संगरौ वन दा
 बूडि उठे सब तरिवर-पाता । भोजि मजीठ, टेसु वन रात
 बैरे आम फरै अब लागे । अबहुँ आउ घर, कत सभा
 सहस ^{प्रकर ५१} भावे फूली वनसपती । मधुकर बूमहिँ सँवरि मालती
 मोकहँ फूल भए सब काँटे । दिस्टि परत जम लागहिँ चूँटे

। फरि जोवन भए नारंग सारग । सुआ-विरह अब जाइ न राग
 धिरनि परेवा होइ, पिउ, आउ वेगि, परु दृष्टि ।

^{१०३} नारि पराए हाथ है ताहि विनु पाव न छूटि ॥ १३ ॥

^{६२} भा वैसार तपनि अति लागी । चोआ चीर ^{वजागने करी आर} चँदुन भा आगी
 सूरुज जरत हिवचल ताका । विरह ^{२२५ ५१} बजागि साँह रथ हाँका
 जरत बजागिनि करु, पिउ, छाहाँ । आइ बुझाउ, अँगारन्ह माहाँ
 तोहि दरसन होइ सीतल नारी । आइ आगि तें करु फुलवारी
 लागिउँ जरै, जेरै जस भारु । फिरि फिरि भूँजेसि, तजिउँ न ^{बाए} वारु
 सरवर-हिया घटतें निति जाई । टुक टुक होइ कै विहराई

^{६३} विहरत हिया करहु, पिउ टेका । दौठि-दवंगरी ^{५१२} मेरवहु एका
 कँवल जो विगसा मानसर विनु जल गयउ सुखाइ ।

अवहँ बेलि फिरि पलुहै जौ पिउ सींचै आइ ॥ १४ ॥

जेठ जरे जग, चलै लुवारा । उठहि बबुडर, परहि अँगारा
 विरह गाजि हनुवैत होइ जागा । लका-दाह करै तनु लागा
 चारिटु पवन भुकोरै आगी । लका दाहि पलका लागी
 दाहि भई साम नदी कालिदी । विरह क आगि कठिन अति मदी
 उठै आगि औ आवै आवी । नैन न सूक, मरौ दुख-बाधी
 अधजर भइउँ, माँसु तन सूखा । लागेउ विरह काल होइ भूखा
 माँसु खाइ अब हाडन्ह लागै । अबहुँ आउ, आवत सुनि भागै
 गिरि, समुद्र, ससि, मेघ, रवि सहि न सकहिं वह आगि ।

मुहमद सती सराहिए, जरे जो अस पिउ लागि ॥१५॥

तपै लागि अब जेठ-असाढी । मोहि पिउ विनु छाजनि भइ गाढी
 तन तिनउर भा, भूरो खरी । भइ वरखा, दुख आगरि जरी दुख
 बव नाहिं औ कध न कोड । वात न आव, कहाँ का रोई ?

पूजा साँठि नाठि, जग वात को पूजा ? । विनु जिउ फिरै मूँज-तनु छूँछा
 विनु भई दुहेली टेक विहनी । थौंभ नाहि उठि सकै न थूनी
 वरसै मेह, चुवहिं नैनाहा । छपर छपर होइ रहि विनु नाहा
 कोरौ कहा ठाट नव साजा । तुम विनु कत न छाजनि छाजा
 अबहुँ मया-दिस्टि करि, नाह निठुर, घर आउ ।

मँदिर उजार हात है, नव कै आइ बसाउ ॥ १६ ॥

राइ गँवाए बारह मासा । सहस सहस दुख एक एक साँसा
 तिल तिल बरख बरख परि जाई । पहर पहर जुग जुग न सेराई
 सो नहिं आवै रूप सुरारी । जासौ पाव सोहाग सुनारी
 माँभ भए भुरि भुरि पथ हेरा । कौनि सो घरी करै पिउ फेरा ?

दहि फोइला भइ रत सनेहा । तोला मॉसु रही नहि देहा
रकत न रहा, विरह तन गरा । रती रती होइ नैनन्ह डरा
पायँ लागि जोरँ धनि हाथा । जारो नेह, जुडावहु, नाथा

वरम दिवस वनि रोइ कै, हारि परी चित भसि । ^{भीम}
मानुष घर घर वृष्णि कै, वृष्णि ^{प्रखर} निसरी परि ॥ १७ ॥

^{नया} मई पुछार, लीन्ह बनवासू । वैरिनि ^{प्रखर} सवति दीन्ह चिलवांसू
होइ सर बान विरह तनु लागा । जौ पिउ आवै उडहि तौ कागा
हारिल भई पथ में सेवा । अब तहँ पठवौ कौन परेवा ?
धौरी पडुक कहु पिउ नाऊँ । जौ चित रोख न दूसर ठाऊँ
जाहि वया होइ पिउ कँठ लवा । करै मेराव सोइ गौरवा
कोइल भई पुकारति रही । महरि पुकारै 'लेइ लेइ दही'

^{केल} पेड तिलोरी श्रौ जल हसा । हिरदय पैठि विरह ^{कटनसा} कटनसा
जेहि पखी के निअर होइ कहै विरह कै बात ।

सोई परी जाइ जरि, तरिवर होइ निपात ॥ १८ ॥

✓ कुहुकि कुहुकि जस कोइल रोई । रकत-आंसु ¹¹⁰²¹⁶² घुँघुची वन बोई
भइ करमुखी नैन तन राती । को ¹¹⁰²¹⁶² सेराव ? विरहा-दुख ताती
जहँ जहँ ठाढि होइ बनवासी । तहँ तहँ होइ घुँघुचि कै रासी
बूद बूद महँ जानहुँ जीऊ । गुजा गूँजि करै 'पिउ पीऊ'
तेहि दुख भए परास निपाते । लोहू वृडि उठे होई राते
राते विव भीजि तेहि लोहू । परवर पाक, फाट हिय गोहूँ
देखौ जहाँ होइ सोइ राता । जहाँ सो रतन कहै को बाता ?

नहि पावम आहि देमरा, नहिं हेवत वसत ।

ना कोकिल न पपीहरा, जेहि सुनि आवै कत ॥ १६ ॥

फिरि फिरि रोव, कोइ नहि डोला । आधी राति विहगम बोला
 'तू फिरि फिरि दाहै मय पॉखी । कोहि दुख रैन न लावसि आँखी'
 नागमती ^{जोगी ४३} कारन के राई । 'का सोवै जो कत-विछाई
 मनचित हुँते न उतरै मोरे । नैन क जल चुकि रहा न मोरे
 कोइ न जाइ ओहि सिंघलदीपा । जेहि सेवाति कहँ नैना सीपा
 जोगी होइ निसरा सो नाहू । तव हुँत कहा सँदेम न काहू ^{तव}
 निति पूछै ^{सिंघल} सुव जोगी जगम । कोइ न कहै निज वात, विहगम ।
 चारिउ चक्र उजार भए, कोइ न सँदेसा टेक ।

रुहौ विरह दुख आपन, वैठि सुनहु दँड एक ॥ २० ॥

तासौ दुख कहिए हो, वीरा । जेहि सुनि कै लागै पर-पीरा
 को होइ ^{भौद} भिउँ ^{अन} अगवै पर दाहा । को सिंघल पहुँचावै चाहा ? ^{वन}
 जहँवाँ कत गए होइ जोगी । हौं किंगरी भइ भूरि त्रियोगी ^{दिन}
 वै सिंगी पूरी, गुरु भेंटा । हौं भइ भसम, न आइ समेटा
 कथा जो कहै आइ ओहि करी । पाँवरि होउँ, जनम भरि चेरि ^{पत ११}
 ओहि के गुन मँवरत भइ माला । अबहुँ न ^{वै} वेहुरा उडिगा झाला ^{५१ म ३}
 विरह गुरू, सप्पर के होया । पवन अघार रहै सो जाँया
 हाड भए मय किंगरी, नसँ भई मव ताँति

रोवँ रोवँ तें धुनि उठै, कहाँ त्रिया कोहि भाँति ? ॥ २१ ॥

पदमावति सौ कहेंहु, विहगम । कत लोभाइ रहौं करि सगम ^{प्रेम १}
 तू घर घरनि भई पिउ हरता । मोहि वन दी हेमि जप ओ बरता
^{दाय}
^{वाजे}

जन्म निमित्त १२५

रावट कनक सो तो कहँ भयऊ । रावट लक मोहि कै गयऊ
तोहि चैन सुर मिलै मरीरा । मो कहँ हिये दुद दुख पूरा
हमहुँ बियाही सँग ओहि पीऊ । आपुहि पाइ, जानु पर जीऊ
अवहुँ मया करु, करु जिउ फेरा । मोहिं जियाउ कृत देइ मेरा
मोहि भोग सौं काज न, वारी । सौह दीठि कै चाहनहारी
इ ^{सोह} सवाते न होसि तू वैरिनि, मोर कत जेहि हाथ ।

आनि मिलाव एक बेर, तेर पांय मोर माथ' ॥ २२ ॥

रतनसेन कै माइ सुरसती । गापीचंद जसि मैनावती
अंधरि बूढ़ि होइ दुख रोवा । जीवन रतन कहौं दहुँ सोवा
जीवन अहा लीन्ह सो काढी । भइ विनु टेक करै को ठाढी ?
नैन दीठ नहि दिया वराहीं । घर अधियार पूत जौ नाहीं
को रे चलै सरवन के ठाऊँ । टेक देह औ टेकै पाऊँ
लेइ सो सँदेस विहंगम चला । उठी आगि सगरौ सिंगला
जाइ विहगम समुद डफारा । जरे मच्छ, पानी भा खारा
समुद तीर एक तरिवर जाइ बैठ तेहि रूप ।

जौ लागि कहा सँदेस नहिं, नहि पियास नहि भूख ॥ २३ ॥

रतनसेन वन करत अहेरा । कीन्ह ओही तरिवर तर फेरा
सीतल विरिछ समुद के तीरा । अति उतग औ छाँह गँभीरा
तुरय बाँधि कै बैठ अकेला । साथी और करहिँ सब खेला
देखत फिरै सो तरिवर-साखा । लाग सुनै परिन्ह कै भारा
परिन्ह महँ सो विहगम अहा । नागमती जासौ दुख कहा

पूछहि सर्व विहगम नामा । अहो मीत, काहे तुम सामा २५
 कहेसि 'मीत, मासक दुइ भए । जवूदीप तहाँ हम गए
 नगर एक हम देखा गढ चितउर ओहि नावँ ।

सो दुख कहीं कहीं लागि, हम दाटे तेहि ठावँ ॥ २४ ॥

जोगी होइ निसरा सो राजा । सुन नगर जानहु धुँध बाजा ५५
 नागमती है ताकरि रानी । जरी विरह, भइ कोइल-धानी' कोइय
 सुनि चितउर-राजा मन गुना । 'विधि-सँदेस मैं कासौ सुना
 को तरिवर पर परी-येसा । नागमती कर कहै मँदेसा ?
 कहाँ सो नागमती तँ देखी । कहेसि विरह जस मनहि विसेरी
 हाँ सोई राजा भा जोगी । जोहि कारन वह ऐसि वियोगी
 जम तूँ परि महुँ दिन भरी । चाहौ कजहि जाइ उडि परी
 परि, अँरि तेहि मारग, लागी सदा रहाहि ।

कोइ न सँदेसी आवहि, तेहि क सँदेस कहाहि' ॥ २५ ॥

'पूछसि कहा सँदेस-प्रियोगू । जोगी नए न जानसि भोगू
 देखेउँ तोरे मँदिर ^{स माकपूगी} घमोई । मातु तोरि अँधरि भइ रोई
 जस सरवन विनु अधी अथा । तस ररि मुई, तोहि चित वँवा
 कहेसि मरौ, को काँवरि लेई ? पूत नाहिं, पानी को देई ?
 नागमती दुख विरह अपारा । धरती सरग जरै तेहि भारा
 वह तोहि कारन मरि भइ छारा । रही नाग होइ पवन अधारा
 माँसु गिरा पाँजर होइ परी । जोगी, अरवहुँ पहुँचु लेइ जरी ५३
 देखि विरह-दुख ताकर मैं सो तजा बनवास ।

आयउँ भागि समुद्रतट तरुँ न छाँडै पाम' ॥ २६ ॥

वर्णन निमित्त पर्य

रावट कनक सो तो कहँ भयऊ । रावट लक मोहि कै गयऊ
 तोहि चैन सुर मिलै सरीरा । मो कहँ हिये दुद दुख पूरा
 हमहुँ वियाही संग ओहि पीऊ । आपुहि पाइ जानु पर जीऊ
 अवहुँ मया करु, करु जिउ फेरा । मोहिं जियाउ कत देइ मेरा
 मोहि भोग सौ काज न, वारी । सौह दीठि कै चाहनहारी
 ६ ^{सो} सवति न होसि तू वैरिनि, मोर कत जेहि हाथ ।

आनि मिलाव एक बेर, तोर पाँय मोर माथ' ॥ २२ ॥

रतनसेन कै माइ सुरसती । गार्पाचंद जसि मैनावती
 आंधरि वूढि होइ दुख रोवा । जीवन रतन कहाँ दहुँ सोवा
 जीवन अहा लीन्ह सो काढी । भइ बिनु टेक करै को ठाढी ?
 नैन दीठ नहिं दिया वराही । घर अधियार पूत जौ नार्ही
 को रे चलै सरवन के ठाऊँ । टेक देह औ टेकै पाऊँ
 लेइ सो सँदेस विहंगम चला । उठी आगि सगरौ सिधला
 जाइ विहगम समुद डफारा । जरे मच्छ, पानी भा सारा
 समुद तीर एक तरिवर जाइ बैठ तेहि रूख ।

जौ लगि कहा सँदेस नहिं, नहि पियास नहिं भूख ॥ २३ ॥

रतनसेन बन करत अहेरा । कीन्ह ओही तरिवर तर फेरा
 मीतल विरिछ समुद के तीरा । अति उतग औ छौह गँभीरा
 तुरय धाँधि कै बैठ अकेला । साथी और करहिँ सब खेला
 देखत फिरै सो तरिवर-साखा । लाग सुनै परियन्ह कै भाखा
 परियन्ह महँ सो विहगम अहा । नागमती जासौं दुख कहा

पूछहि सबै विहगम नामा । अहो मीत, काहे तुम सामा १५
 कहेसि 'मीत, मासक दुइ भए । जयूदीप तहाँ हम गए
 नगर एक दम देखा गढ चितउर ओहि नावँ ।

सो दुख कहीं कहीं लागि, हम दाटे तेहि ठावँ ॥ २४ ॥

जोगी होइ निसरा सो राजा । सुन नगर जानहु धुँध बाजा १५
 नागमती है ताकरि रानी । जरी विरह, भइ कोइल-वानी' कोइय
 सुनि चितउर-राजा मन गुना । 'विधि-सँदेस मैं कासौ सुना
 को तरिवर पर परी-येसा । नागमती कर कहै मँदेसा ?
 कहाँ सो नागमती तैं देखी । कहेसि विरह जस मनहिं विसेखा
 है सोई राजा भा जोगी । जेहि कारन वह ऐसि वियोगी
 जस तूँ परि मँदूँ दिन भरा । चाहौं कवहिं जाइ उटि परौ
 परिय, आँसि तेहि मारग, लागी सदा रहाहि ।

कोइ न सँदेसी आवहि, तेहि क मँदेस कहाहि' ॥ २५ ॥

'पूछसि कहा सँदेस-वियोग । जोगी भए न जानसि भोगू
 देखेउँ तोरे मँदिर ^{मन्नालपुरी} घमोइ । मातु तोरि आँधरि भइ रोई
 जस मरवन त्रिनु अधी अधा । तस ररि मुई, तोहि चित बँधा
 कहेसि मरौं, को काँवरि लेई ? पूत नाहि, पानी को देई ?
 नागमती दुख विरह अपारा । धरती सरग जरै तेहि भारा
 वह तोहि कारन मरिभइ छारा । रही नाग होइ पवन अघारा
 मांसु गिरा पाँजर होइ परी । जोगी, अबहुँ पहुँचु लेइ जरी ५३
 देखि विरह-दुख ताकर मैं सो तजा बनवास ।

आयउँ भागि समुद्रतट तपुँ न छाँडै पाम' ॥ २६ ॥

अनपि निमित्तं प्रथ

रावट कनक सो तो कहँ भयऊ । रावट लक मोहि कै गयऊ
तोहि चैन सुख मिलै सरीरा । मो कहँ हिये दुद दुख पूरा
हमहुँ विधाही मँग ओहि पीऊ । आपुहि पाइ, जानु पर जीऊ
अवहुँ मया करु, करु जिउ फेरा । मोहि जियाउ कत देइ मेरा
मोहिं भोग सौं काज न, वारी । सौह दीठि कै चाहनहारी
सवति न हांसि तू बैरिनि, मार कत जेहि हाथ ।

आनि मिलाव एक वेर, तोर पाँय मार माथ' ॥ २२ ॥

रतनसेन कै माइ सुरसती । गार्पीचंद जसि मैनावती
आंधरि बूढि होइ दुख रोवा । जीवन रतन कहाँ दहुँ रोवा
जीवन अहा लीन्ह सो काढी । भइ विनु टेक करै को ठाढी ?
नैन दीठ नहि दिया बराही । घर अंधियार पृत जौ नार्ही
को रे चलै सरवन के ठाऊँ । टेक देह औ टेकै पाऊँ
लेइ सो सँदेस बिहंगम चला । उठी आगि सगरौ सिधला
जाइ विहगम समुद डफाटा । जरे मच्छ, पानी भा सारा
समुद तीर एक तरिवर जाइ बैठ तेहि रूख ।

जौ लगि कहा सँदेस नहिं, नहि पियास नहि भूख ॥ २३ ॥

रतनसेन वन करत अहेरा । कीन्ह ओही तरिवर तर फेरा
सीतल विरिछ समुद के तीरा । अति उतग औ छौह गँभौरा
तुरय धाँधि कै बैठ अकेला । साथी और करहिं सब खंला
देखत फिरै सो तरिवर-साखा । लाग सुनै परिन्ह कै भाखा
पखिन्ह महँ सो विहगम अहा । नागमती जासौं दुख कहा

पूछहि सबै विहगम नामा । अहो मीत, काहे तुम सामा २
कहेसि 'मीत, मामक दुइ भए । जजूदीप तहाँ हम गए
नगर एक हम देखा गढ चितउर ओहि नावँ ।

सो दुग कहौ कहौ लागि, हम दाढे तेहि ठावँ ॥ २४ ॥

जोगी होइ निमरा सो राजा । सून नगर जानहु धुँध बाजा ५५
नागमती है ताकरि रानी । जरी विरह, भइ कोइल-बानी ५०४
मुनि चितउर-राजा मन गुना । 'विधि-सँदेस मैं कासौं सुना
को तरिवर पर पखी-बंसा । नागमती कए कहै सँदेसा ?
कहाँ सो नागमती तैं देगी । कहेसि विरह जस मनहि विसेली
हैं सोई राजा भा जोगी । जेहि कारन बढ ऐसि बियोगी
जस तूँ पखि महुँ दिन भरौ । चाहौं कबहि जाइ उडि परौ
पखि, आयि तेहि मारग, लागी सदा रहाहि ।

कोइ न सँदेसी आवहि, तेहि क सँदेस कहाहि' ॥ २५ ॥

'पूछसि कहा सँदेस-वियोगी । जोगी नए न जानसि भोगी
देखेउँ तोरे मँदिर घमोइ । मातु तोरि आँधरि भइ रोई
जस मरवन निनु अधी अधा । तस ररि मुई, तेहि चित बैधा
कहेसि मरौं, को काँवरि लेई ? पूत नाहि, पानी को देई ?
नागमती दुए विरह अपारा । धरती सरग जरै तेहि भारा
वह तेहि कारन मरि भइ छारा । रही नाग होइ पवन अधारा
मासु गिरा पाँजर होइ परी । जोगी, अवहुँ पँचु लेइ जरी ५३१
देसि विरह-दुग्न वाकर मैं मो तजा बनवास ।

आयउँ भागि समुद्रतट तत्र न छोडै पाम' ॥ २६ ॥

कहि सदेस विहगम चला । आगि लागि मगरा सिघला
 घरी एक राजा गोहरावा । भा अलोप, पुनि दिस्टि न आवा
 परी नावँ न देखा पाँसा । राजा रोड फिरा कै सासा ^{शब्द}
 तन सिघल, मन चितउर बसा । जिउ विसभर नागिनि जिमि डसा
 वरिस एक तेहि सिघल भयऊ । भोग विलास करत दिन गयऊ
 कँवल उदास जा देखा भँवरा । थिर न रहै अब मालति सँवरा ^{शब्द}
 गधबसेन आव सुनि वारा । 'कस जिउ भयउ उदास तुम्हारा
 मैं तुम्हरी जिउ लावा, दीन्ह नैन महुँ वास ।

जौ तुम होहु उदास तौ यह काकर कैलास' ॥ २७ ॥

रतनसेन विनवा कर जोरी । 'अस्तुति जोग जीभ नहि मोरी
 सहस जीभ जौ होहि गोसाई । कहि न जाइ अस्तुति जहँ ताई
 काच रहा तुम कचन कीन्हा । तव भा रतन जोति तुम दीन्हा
 अब विनती एक करौ, गोसाई । तौ लागि कया जीउ जव ताई
 आवा आजु हमार परेवा । पाती आनि दीन्ह मोहि, देवा
 राज हमार जहाँ चलि आवा । लिखि पठइन अब होइ परावा ^{शब्द}
 उहाँ नियर दिखी सुलतानू । होइ जो भोर उठै जिमि भानू
 रहहु अमर महि गगन लागि तुम महि लेइ हम्ह आउ ।

सीम हमार तहाँ निति जहाँ तुम्हारा पाउ' ॥ २८ ॥

राज सभा पुनि उठी सँवारी । 'अनु विनती, राखिय पति भारी
 राजन्ह माहुँ हाँइ जिनि फूटी । घर के भद लरु अस टूटी
 विरवा लाड न सग्ये दीजै । पावै पानि दिस्टि सो कीजै
 आनि रग्या तुम्ह दीपक लेसौ । पै न रहै पाहुन परदेसी

जाकर राज जहाँ चलि आवा । उहं देस पै ताकहँ भावा
हम्ह तुम्ह नैन घालि कै राखे । ऐसि भास्य एहि जीभ न भाखे
दिवस देहु सह कुमल मिधावहि । दीरघ आउ होइ, पुनि आवहि'
सवहि विचार परा अस, ^{निश्चय} भा गवने कर माज ।

सिद्धि गनेस मनावहि, विधि पुरवहु सव काज ॥ २६ ॥

विनय करै पदभावति वारी । 'हीं पिउ, जैसी कुद नवारी
नागसेर जो है मन तोर । पूजि न सकै बोल मरि मेरे
होइ सद्वरग लीन्ह मैं सरना । आगे करु जो कत, तोहि करना'
गवन चार पदभावति सुना । उठाधसकि जिउ श्री सिरधुना
राखत वारि सो पिता निछोहा । कित बियाहि अस दीन्ह विछोहा
पुनि पदभावति सखी वालाई । सुनि कै गवन मिलै सव आई
'मिलहु, मर्या, हम तहँवा जाहीं । जहाँ जाइ पुनि आवव नाहीं
कत चलाई का करौ आयसु जाइ न मेटि ।

पुनि हम मिलहि कि ना मिलहि, लेहु सहेली भेंटि' ॥ ३० ॥

धनि रोवत रोवहि सव सर्या । 'हम तुम्ह देखि आपु कहँ भँर्या
तुम्ह ऐसी जौ रहै न पाई । पुनि हम काइ जो आवहि पराई
तव तेइ नैहर नाहीं चाहा । जौ ससुरारि होइ अति लाहा
तुम वारी पिउ दुहुँ जग राजा । गरब किरोध ओहि पै द्याजा
मच फरफूल ओहि के साखा । चहै सो तूरै, चाहै राखा
आयसु लिहे रहिहु निति हाथा । सेवा करिहु लाइ भुईं माथा
सोइ पियारी पियहि पिरौती । रहै जो आयसु सेवा जीती'

पत्रा काढि गवन-दिन देखहि, कौन दिवस दहुँ चाल ।

दिसासूल, चक जोगिनी सौह न चलिए, काल ॥ ३१ ॥

‘चलहु चलहु’ भा पिउ कर चालु । घरी न देख लेत जिउ कालु
रोवहिं मातु पिता औ भाई । कोउ न टेक जौ रुत चलाई
रोवहि सब नैहर सिधला । लेइ वजाइ कै राजा चला
भरौ सरणी सब भेंटत फेरा । अत कन सौ भयउ गुरेरा ^{पुत्र}
जव पहुँचाइ फिरा सब कोऊ । चला साथ गुन अवगुन दोऊ
औ संग चला गवन सब साजा । उहै देइ ^{जिसे को ली राजा के, फरमाव} ^{अस} पारै राजा ^{ने मारा}
रतन पदारथ मानिक मोती । काढि भंडार दीन्ह रथ जाती ^{दिशि}

लिरानी लागि जौ लेखै कहै न पारै जोरि ।

अरव, सरव, दस, नील, सँस औ अरबुद पदुम करोरि ॥ ३२ ॥

बोहित भरे चला लेइ रानी । दिस्ट माहँ कोइ और न आनी
आधे समुद ते आये नाही । उठी वाडु, ^{फरमाव} आँवी उतराहीं
लहरें उठी समुद उलथाना । भूला पथ, सरग नियराना
बोहित चले जो चितउर ताके । भए कुपथ, लक दिसि हाँके
बोहित बहे, न मानहि खेवा । पारि लगावै को करि सेवा
बोहित टुक टुक सब भए । एहु न जाना कहँ चलि गए
भए राजा रानी दुइ पाटा । दूनौ बहे, चले दुइ वाटा
काया जीउ मिलाइ कै मारि किण दुइ खड ।

तन रोवै धरती परा, जीउ चला वरम्हड ॥ ३३ ॥

मुरुछि परी पदमावति रागी । कहाँ जीउ, कहँ पीउ, न जानी
जानहु चित्र-भूर्ति गहि लाई । पाटा परी बही तस जाई

जनम न सछा पवन सुकुवारा । तेड सो परी दुख-समुद अपारा
 लछिमी नावँ समुद कै घेटी । तेहि कहँ लच्छि होइ जेहि भेंटी
 खेलति अही सहेली सेंती । पाटा जाइ लाग तेहि रेती
 कहेसि नहेली, ^{देखत} पाटा । मूरति एक लागि वहि घाटा'
 जौ देखा, ^{नै देखा} तीवड़ है माँमा । फूल मुवा, पै मुई न बासा
 रग जो राती प्रेम के, जानहु वीरवहृटि ।

आइ वही दधि-समुद महँ, पै रँग गयउ न छूटि ॥ ३४ ॥

लछिमी लखन बतीसौ लग्यो । कहेसि 'न मरै, सँभारहु, सर्गो
 कागर पतरा ऐस मरीरा । पवन उडाइ परा मँक नीरा
 लहरि नकोर उदधि-जल भीजा । तत्रहँ रूप रग नहिं छीजा
 आपु सीस लेड वैठी कोरे । पवन उलावै मखि चहुँ श्रौर
 वहुरि जो समुभि परा तन जीऊ । माँगिसि पानि बोलि कै पीऊ
 पानि पियाइ मर्यो मुख धाई । पदमिनि जनहुँ कँवल सँग कोर्ड ^{उपरी}
 तव लछिमी दुख पूछा आही । 'तिरिया, समुभि वात कहु मोही
 देखि रूप तोर ^{आगर} आगर, लागि रहा चित मोर ।

केहि नगरी के नागरी, काह नावँ, धनि तोर ?' ॥ ३४ ॥

नैन पसारि देख ^{नै} धन चेंती । दगै काह, समुद कै रती
 आपन कोट न देखेसि तहाँ । पूछेसि, 'तुम्ह हो को? हौं कहाँ?
 कहाँ जगत महँ पीउ पियारा । जो मुमेरु, विधि गरुअ सँवारा'
 कहेन्हि 'न जानहिं हम तोर पीऊ । हम तोहिं पाव, रहा नहिं जीऊ
 पाट परी आई तुम्ह वही । ऐस न जानहिं दहुँ कहँ अही

तव सुधि पदमावति मन भई । सँवरि विछोह मुरुछि मरि गई
 वाउरि होइ परी पुनि पाटा । 'देहु वहाड कत जेहि घाटा
 जेहि सिर परा विछोहा, देहु ओहि सिर आगि ।

५१ लोग कहैं यह सरु चढी, हँ सो जरौं पिउ लागि' ॥ ३६ ॥

मती होइ कहँ सीस उधारा । घन महँ बीजु घाव जिमि मारा
 सँदुर जरै आगि जनु लार्ड । सिर कै आगि सँभारि न जाई
 छूटि माँग अस मोति-पिरोई । वारहिं वार जरै जौ रोई
 दूटहि मोति विछोह जो भरे । मावन-बूद गिरहि जनु भरे
 भहर भहर कै जोवन वरा । जानहुँ कनक अगिनि महँ परा
 अगिनि माँग, पै देइ न कोई । पाहुन पवन पानि सब कोई
 पान लक दूटी दुरभरी । विनु रावन केहि वर होइ खरी

रोवत पयि विमोहे जस कोकिला-अरुभ । ५२

५३ जाकरि कनकलता सो बिछुरा पीतम खभ ॥ ३७ ॥

५४ लछिमी लागि बुभावै जीऊ । 'ना मरु वहिन, मिलिहि तौर पीऊ
 पीउ पानि, होइ पवन-अधारी । जसि हँ तहँ समुद कै बारी
 मै तोहि लागि लेवँ सटवाट । खोजिहि पिता जहाँ लगे घाट
 हँ जेहि मिलौ ताहि बड भागू । राजपाट औ देवँ सोहागू
 कहि बुभाइ लेइ मँदिर सिधारी । भइ जेवनाग न जेवै वारी
 जेहि रे कत कर होइ विछोवा । कहँ तेहि भूख, कहा सुग-सोवा
 कहाँ सुमंरु, कहाँ वह सेमा । को अस तेहि सौ कहै मँदेसा
 लछिमी जाइ समुद पहुँ रोइ वात यह चालि ।

कहा समुद 'वह घट मोरे, आनि मिलावौं कालि' ॥ ३८ ॥

राजा जाइ तहाँ बहि लाग़ा । जहाँ न कोइ सँदेसी कागा
 'काहि पुकारौ, का पहुँ जाऊँ । गाढे भीत होइ एहि ठाऊँ
 ए गोमाइँ, तू सिरजनहारा । तुँ सिरजा यह समुद अपारा
 सो मूरुख औ बाउर अधा । तेहि छाँडि चित औरहि बधा
 तुँ जिउ तन मेरवसि देइ आऊ । तुही विछाँवसि, करमि मेराऊँ मिति
 जानसि सबै अवस्था मोरी । जस विछुरी सारस कै जोरी
 एक मुए ररि मुवै जो दूजी । रहा न जाइ, आउ अब पूजी
 दुख सौँ पाँतम भेंटि के सुख सौँ सोव न कोइ ।

एही ठावँ मन डरपै, मिलि न विछोहा होइ' ॥ ३६ ॥

रुहि कै उठा समुद महेँ आवा । काढि कटार गोड महेँ लावा
 कहा समुद, 'पाप अब घटा' । वाम्हन रूप आइ परगटा
 तिलक दुवादस मस्तक कौन्हे । हाथ कनक-^{नै}साग्या लीन्हे
^{३७}मुद्रा सवन, जनेऊ काँधे । कनक-पत्र धोती तर बाँध
 पाँवरि कनक जराऊ पाऊँ । दोन्हि असीस आइ तेहि ठाऊँ
 'रुहसि कुँवर, मो साँ सतवाता । काढे लागि करसि अपघाता
^{वि}परिहँस मरमि कि कौनिउ लाजा । आपन जीउ देसि केहि काजा?

५२ जिनि कटार गर लावसि, समुक्ति देरु मन आप ।

मकति जीउ जाँ काढै, महा दोष औ पाप' ॥ ४० ॥

'को तुम्ह उतर देइ, हो पाड । सो चोल जाकर जिउ भाडे
 जबूदीप केर हैं राजा । सो मैं कौन्हे जो करत न छाजा
 सिघलदोप राजघर-बारी । सो मैं जाइ बियाही नारी

बहु बोहित दायज उन दीन्हा । नग अमोल निरमर भरि लीन्हा
 रतन पदारथ मानिक मोती । हुती न काहु के सपति ओती ५७
 यहल, घोड, हस्ती मिघली । औ सँग कुँवरि लारु दुई चलीं
 ते गोहने मिघल पदमिनी । एक सों एक चाहि रूपमनी
 पदमावति जग रूपमनि कहँ लगि कहौं दुहेल । ५८

तेहि समुद्र महँ खोएँ, हाँ का जिअौ अकेल ? ॥ ४१ ॥

१ हँसा समुद्र, होइ उठा अँजोरा । 'जग बूडा सब कहि कहि मोरा
 तोर होइ तोहि पर न वेरा । वूझि विचारि तहँ कोहि केरा'
 'अनु, पाँडे, पुरुपहि का हानी । जौ पावीं पदमावति रानी
 कहँ अस रहस भोग अब करना । ऐसे जिए चाहि मल मरना
 जस यह समुद्र दीन्ह दुरा मोनाँ । देइ हत्या भगरौ सिवलोका'
 'तुही एक में वाउर भेंटा । जैस राम, दसरथ कर वेटा
 तोहि बल नाहि, मूँदु अब आँगी । लावीं तीर, टेकु बैसाखी'
 वाउर अध प्रेम कर सुनत लुगुधि भा वाट । ५९

निमिप एक महँ लेइगा पदमावति जेहि घाट ॥ ४२ ॥

लछिमी चचल नारि परेवा । जेहि सन होइ छरै कै सेवा ६०
 रतनसेन आवै जेहि घाटा । अगमन होइ बैठि तेहि वाटा
 औ भइ पदमावति के रूपा । कीन्हेसि छाहँ जरै जहँ धूपा
 देखि सो कँवल भँवर होइ धावा । साँस लीन्ह, वह बास न पावा
 निरसत आइ लच्छिमी दीठी । रतनसेन तब दीन्ही पीठी
 जौ भलि होति लच्छिमी नारी । तजि महेस कित होत भिखारी ?
 पुनि धनि फिरि आगे होइ रोई । 'पुरुप पीठि कस दीन्हि निछोई ?

हैं रानी पदमावति, रतनसेन तू पीउ ।

आनि समुद महँ छाँडेहु, अब रोवौ देख जीउ' ॥ ४३ ॥

मैं हौ सोइ भँवर श्री भोजु । लेत फिरौ मालति कर खोजु
का तुँ नारि बैठि अस रोई । फूल सोइ पै वास न सोई
है ओहि वास जीउ बलि देऊँ । और फूल कै वास न लेऊँ
ता हँसि कह राजा 'ओहि ठाऊँ । जहाँ सो मालति लेइ चलु, जाऊँ'
लेइ सो आइ पदमावति पास । पानि पियावा मरत पियासा
कँवल जो बिहँसि सूर-मुख दरसा । सूरज कँवल दिस्टि सौँ परसा
देसा दरस, भए एक पास । वह ओहि के, वह ओहि के आसा
पायँ परी धनि पीउ के, नैनन्ह सौँ रज भेट । ५६ ५७

अचरज भयउ सवन्ह कहँ, भइ ससि कँवलहि भेट ॥ ४४ ॥

लछिमी सौँ पदमावति कहा । 'तुम्ह प्रसाद पाइऊँ जो चहा
जौ मव रोइ जाहिँ हम दोऊ । जो देखै भल कहै न कोऊ
जे मव कुँवर आए हम साथी । श्री जत हस्ति, घोड श्री आधी
जौ पावै, सुख जीवन भोगू । नाहित मरन, भ्रुन दुख रोगू'
तव लछिमी गइ पिता के ठाऊँ । 'जो एहि कर सब बूड सो पाऊँ'
तव मो जरी अमृत लेइ आवा । जो मरे हुत तिन्ह छिरिकि जियावा
एक एक कै दान्ह सो आनी । भा सँतोप मन राजा रानी
आइ मिले सब साथी, हिलि मिलि नरहि अनद ।

भई प्राप्त सुख-सपति, गयउ छूटि दुख-दुद ॥ ४५ ॥

दिन दस रहे तहाँ पहुनाई । पुनि भए निदा समुद सौँ जाई
लछिमी पदमावति सौँ भेंटौ । ओतेहि कहा 'मारितू घेटी'

दीन्ह समुद्र पान कर वीरा । भरि कै रतन पदारथ हीरा
 और पाँच नग दीन्ह विसेखे । सरवन सुता, नैन नहिं देखे
 एक तौ अमृत, दूसर हसू । औ तीसर पंखी कर वसू
 चौथ दीन्ह सावक-मादूरु । पाँचवँ परस, जो कचन-मूरु
 तरुन तुरगम आनि चढाए । जल-मानुष अगुवा संग लाए

जोरि कटक पुनि राजा घर कहँ कीन्ह पयान ।

दिवसहि भानु अलोप भा, वासुकि इद्र नकान ॥ ४६ ॥ ^{१३५} ^{१३६}

चितउर आइ नियर भा राजा । बहुरा जीति, इद्र अस गाजा
 वाजन वाजहि, होइ प्रदेरा । आवहि बहल हस्ति औ घोरा
 नागमती कहँ अगम जनावा । गई तपनि वरपा जनु आवा

रही जो मुइ नागिनि जसि तुचा । जिउ पाँँ तन कै भइ सुचा ^{१३५}

नव दुग्न जस केचुरि गा छूटी । होइ निसरी जनु वीरवहूटी

हुलसि गग जिमि वाढिहि लेई । जोवन लाग हिलोरै देई

काम-वनुक सर लेइ भइ ठाढी । भागेउ विरह रहा जो डाढी ^{१३५}

पूछहि सखी सहेलरी, हिरदय देखि अनद ।

'आजु बदन तोर निरमल, अहै उवा जम चद' ॥ ४७ ॥

'अब लागि रहा पवन, सखि, ताता । आजु लाग मोहि सोअर गाता

महि हुलसै जम पावस-छाहँ । तम उपना हुलास मन माहँ

अब जोवन गगा होइ वाढा । औदन कठिन मारि मव काढा

हरियर सब देखँ ससारा । नण चार जनु भा अवतारा'

सुनि तेहि गन राजा कर नाऊँ । भा हुलाम मव डावहिं ठाऊँ

पलटा जनु वरपा-रितु राजा । जस अमाट आवै ^{दे} दर ^{कामनी} साजा
 देखि सो छत्र भई जग छाहा । हस्ति-मेघ श्रोत्र ^{जग} माहा उडे
 होइ असवार जो प्रथमै मिलै चले सब भाइ ।

५३ ^१ नदी अठारहु गडा मिली समुद्र कहँ जाइ ॥ ४८ ॥

वाजत गाजत राजा आवा । नगर चहुँ दिसि वाज वधावा
 विहँमि आइ माता सौँ मिला । राम जाइ भेंटी कौसिला
 नाजें मंदिर बदनवारा । होइ लाग ^{जो} बहु ^{उत्तरे} मंगलचारा
 पदभावति कर आव वेवानु । नागमती ^{जिउ} महँ ^{भा} आनु
 जनहुँ छाँह महँ धूप देखाई । तैसइ ^{भार} नागि ^{जौ} आई ५३
 मही न जाइ ^{सो} मवाति ^{कै} भारा । दुसरे मंदिर दान्ह उतारा
 भई उहाँ चहुँ रस बसानी । रवनसेन पदभावति आनी

पुहुप गव सनार महँ, रूप बसानी न जाइ ।

५३ ^१ हेम सत जनु उघरि गा, जगत पात फहराइ ॥ ४९ ॥

बैठ सिंघासन, लोग ^{जो} हारा । निधनी ^{निरगुन} देरव ^{वो} हारा ५३
 अगनित दान निझारि कीन्हा । मँगतन्ह दान ^{पहुत} कै ^{दीन्हा} कीन्हा
 सब कै दमा फिरी पुनि दुनी । दान-डाँग सबही जग सुनी ५३
 सब दिन राजा दान दिआवा । भइ निसि, नागमती पहुँ आवा
 नागमती मुख फेरि बईठी । सौँह न करै पुरुष सौँ दाँठा ५३

५३ ^१ प्रोपम जरत छाँडि जो जाई । सो मुख कौन देखावै आई ?

'तू जोगी होइगा बैरागी । हीं जरि त्रार भइउँ तोहि लागी
 काहँ हँसौ तुम मोसौं, किएउ ओर सौँ नेइ ।

तुम्ह मुख चमकै बीजुरी, मोहिँ मुख बरिसै मेह' ॥ ५० ॥

'नागमती तू पहिलि वियाही । कठिन प्रीति दाहै जस दाही
 बहुतै दिनन आव जो पीऊ । वनि न मिलै धनि पाहन जीऊ
 पाहन लोह पोढ जग दोऊ । तेउ मिलहिं जौ होइ विछोऊ
 कोड केहु पास आस कै हेरा । धनि ओहि दरस निरास न फेरा'

कठ लाइ कै नारि मनाई । जरी जो वेलि साँचि पलुहाई
 जौ भा मेर भयउ रँग राता । नागमती हँसि पूछी वाता
 'कहहु, कत, ओहि देस लोभाने । कस धनि मिली, भोग कस माने'
 'काह कहौं हौं तोसाँ, किछु न हिये तोहि भाव ।

इहाँ वात मुख मोसाँ, उहाँ जीउ ओहि ठावँ' ॥ ५१ ॥

कहि दुख-कथा जौ रैन विहानी । भयउ भोर जहँ पदमिनि रानी
 भानु देख मसि-बदन मलोना । कँवल-नैन राते, तनु खाना
 रैन नखत गनि कोन्ह विहान । विकल भई देखा जव भानू

रोसूँ हँसै, ससि रोइ डफारा । दूट आँसु जनु नखतन्ह-मारा
 रहै न राखी होइ निसाँसी । 'तहँवा जाहु जहाँ निसि बासी
 हौं कै नेह कुआँ महँ मेली । साँचै लाग भुरानी बेली
 नैन रहे होइ रहँट क धरी । भरी ते ढारी, छूछी भरी
 सुभर सरोवर हस चल, घटतहि गए विछोइ ।

कँवल न प्रीतम परिहरै, सूखि पक बरु होइ' ॥ ५२ ॥

'पदमावति तुँ जौ पराना । जिउ ते जगत पियार न आना
 तुँ जिमि कँवल बसी हिय माहाँ । हौं होइ अलि वेधा तोहि पाहाँ
 मालति-कली भँवर जौ पावा । सो तजि ग्रान फूल कित भावा ?
 मैं हौं सिंघल कै पदमिनी । सरि न पूज जवु-नागिनी

हैं सुगंध निरमल उजियारी । वह त्रिप-भरी डेरावनि कारी
 मोरी वाम भँवर मँग लागहिं । ओहि देगवत मानुष डरि नागहि
 हैं पुन्पन्ह के चितवन दीठी । जेहि के जिउ अस अही पईठी

ऊँच ठाँव जो बैठे, करै न नाचहि सग ।

जहाँ माँ नागिनि हिरकै करिया करै सो अग ॥ ५३ ॥ ५७

पलुही नागमती के वारी । सोने फूल फूलि फुलवारी
 जावत परि रहे सब दहे । सबै परि बालत गहगहे ^{परम गुरे}
 सारिउँ सुना महारि कोकिला । रहसत आइ परीहा मिला ^{रहे}
 हारिल मनद, महारा सोहावा । काग कुराहर करि सुग्य पावा ^{के लखे}
 भोग विनाम कीन्ह कै फेरा । विहँसहि, रहसहिं, फरहिं वसेरा
 नाचहिं पडुरु मोर परवा । विफल न जाइ काहु के सेवा
 हाइ उजियार, सूर जस तपे । खुसट मुख न देखावै छपै ^{उत्त}

मग सहेली नागमति आपनि वारी माहँ ।

फूल चुनहि, फल तूरहिं, रहसि कृदि सुर-छाहँ ॥ ५४ ॥ ^{अनन्य मन}

जाही जूही तेहि फुलवारी । देखि रहस रहि सकी न वारी
 दूतिन्ह वात न हिचे समानी । पदभावति पहुँ कहा सो आनी
 'नागमती है आपनि वारी । भँवर मिला रस करै धमारी
 सग्यो माय सब रहसहिं कूदहिं । औ सिंगार-हार सब गूँथहिं
 तुम जो वकावरि तुम्ह सौं भर ना । वकुचन गहै चहै जो करना
 नागमती नागेसरी नारी । कँवल न आछै आपनि वारी
 जम सेरती गुलाल चमेली । तैसि एक जनि वहू अकेली

‘नागमती तू पहिलि वियाही । कठिन प्रीति दाहै जस दाही
 वहुतै दिनन आव जो पीऊ । धनि न मिलै धनि पाहन जीऊ
 पाहन लोह पोढ जग दोऊ । तेउ मिलहि जौ होइ विछोऊ
 कोइ केहु पास आस कै हेरा । धनि ओहि दरस निरास न फेरा’
 कठ लाइ कै नारि मनाई । जरी जो वेलि सींचि ^{पलुहाई} पलुहाई
 जो भा मेर भयउ रँग राता । नागमती हँसि पृथ्वी वाता
 ‘कहहु, कत, ओहि देस लोभाने । कस धनि मिली, भोग कस माने’
 ‘काह कहौ हौं तोसो, किछु न हिये तोहि भाव ।

इहाँ वान मुख मोसौं, उहाँ जीउ ओहि ठाँव’ ॥ ५१ ॥

कहि दुख-कथा जौ रैन विहानी । भयउ भोर जहँ पदमिनि रानी
 भानु देख ससि-बदन मलीना । कँवल-नैन राते, तनु खीना
 रैन नखत गनि कीन्ह विहान् । विकल भई देखा जब भानू
 मूर हँसै, ससि रोड डफारा । टूट आँसु जनु नखतन्ह-भारा
 रहै न राखी होइ निसाँसी । ‘तहँवा जाहु जहाँ निसि वासी
 हौं कै नेह कुआँ महँ मेली । सींचै लाग भुरानी वेली
 नैन रहे होइ रहँट क घरी । भरी ते ढारी, छूँछी भरी
 सुभर सरोवर हस चल, घटतहि गए विछोइ ।

कँवल न प्रीतम परिहर, ^{सूरि}सूरि पक वरु होइ’ ॥ ५२ ॥

‘पदमावति तुई जीउ पराना । जिउ ते जगत पियार न आना
 तुँ जिमि कँवल वसी हिय माहाँ । हौं होइ अलि वेधा तोहि पाहाँ
 मालति-कली भँवर जौ पावा । सो तजि आन फूल कित भावा ?
 मैं हौं सिंघल कै पदमिनी । सरि न पूज जंबू-नागिनी

दरिँ दारु न तोरि फुलवारी । देगि मरहि का सूआ सारी ?
 तो न सदाफर तुरँज जँभीरा । लागे कटहर वडहर खीरा
 बिल के हिरदय भीतर केसर । तेहि न सरि पूजै नागेसर
 हँ कटहर ऊमर को पूछै ? । घर पीपर का बोलहिँ छूँछै
 । फल देखा सोई फीका । गरव न करहि जानि मन नीका
 रहु आपनि तू बारी, मो सौ जूझु, न बाजु ।
 मालति उपम न पूजै वन कर खूभा राजु' ॥ ५८ ॥

तो कटहर वडहर वडवेरी । तोहि असि नाही, कोकाबेरी
 तम जाँवु मोर तुरँज जँभीरा । करुई नीम तौ छॉह गँभीरा
 रियर दाख ओहि कहँ राखौ । गलगल जाउँ सबति नहि भाखौ
 रे कहे होइ मोर काहा ? । फरे विरिछ कोइ डेल न बाहा
 वै सदाफर सदा जो फरई । दारिँ देखि फाटि हिय मरई
 यफर लौंग सोपारि छाहारा । मिरिच होइ जो सहै न भारा
 । सो पान रँग पूज न कोई । पिरह जो जरे चून जरि होई
 लाजहि वूडि मरसि नहि, ऊभि उठावसि बाँह ।
 हँ रानी, पिय राजा, तो कहँ जोगी नाह' ॥ ५९ ॥

। पदमिनी मानसर केवा । भँवर मराल करहि मारिसेवा
 ता-जोग दई हम्ह गढी । ओ महेस के माथे चढी
 नै जगत ऊँवल कँ करी । तोहि असि नहिँ नागिनि विप-भरी
 हँ सब लिए जगत के नागा । कोइल भेस न छाँडेसि फागा
 भुजडल, हँ रसिनि भोरी । मोहि तोहि मोति पोत कै जोरी

अब जो सुदरसन कूजा, कित सदवरगै जोग ?

मिजा भँवर नागेसरिहि, दीन्ह ओहि सुख-भोग' ॥ ५५ ॥

सुनि पदमावति रिस न सँभारी । सखिन्ह साथ आई फुलवारी
दुवौ सवति मिलि पाट बईठी । हिय विरोध, मुग्न बातै मीठी
वारी दिस्टि सुरँग सो आई । पदमावति हँसि वात चलाई
'वारी सुफल अहै तुम्ह रानी । है लाई, पै लाइ न जानी
नागेसर औ मालति जहाँ । मँगतराव नहिं चाही तहाँ
रहा जो मधुकर कँवल-पिरीता । लाइउ आनि करीलहि रीता
जहँ अमिली पाकै हिय माहाँ । तहँ न भाव नौरँग कै छाहाँ
फूल फूल जस फर जहाँ देखट्टु हिये विचारि ।

आँव लाग जेहि वारी जाँवु काह तेहि वारि' ॥ ५६ ॥

'अनु, तुम कही नीक यह सोभा । पै फल सोइ भँवर जेहि लोभा
साम जाँवु कस्तूरी चोवा । आँव ऊँच, हिरदय तेहि रोवाँ
तेहि गुन अस भइ जाँवु पियारी । लाई आनि मॉँक कै वारी
जल बाढे वहि इहाँ जो आई । है पाकी अमिली जेहि ठाई
तुँ रुस पराई वारी दूखी । तजा पानि, धाई मुँट सूखी
उठो आगि दुइ डार अमेरा । कौन साथ तहँ बैरी करा
जो देखी नागेसर वारी । लागे मरै सब सूआ सारी
जो सरवर-जल बाढै रहै सो अपने ठाँव ।

तजि कै सर औ कुडहि जाइ न पर-अँवराव' ॥ ५७ ॥

'तुई अँवराव लीन्ह का जूरी ? । काहे भई नीम बिप-भूरी
भई वैरि कित कुटिल कटैली । तेंदू टेंटी चाहि कसैली

दारिउँ दास न तोरि फुलवारी । देखि मरहि का सूआ सारी ?
 श्री न सदाफर तुरँज जँभीरा । लागे कटहर बडहर गीरा
 कँवल के हिरदय भीतर केसर । तेहि न मरि पूजै नागेसर
 जहँ कटहर ऊमर को पूछै ? । वर पीपर का बोलहि छूँछै
 जो फल देसा सोई फीका । गरव न करहि जानि मननीका
 रहु आपनि तू वारी, मो मों जूझु, न बाजु ।

मालति उपम न पूजै बन कर खूआ राजु' ॥ ५८ ॥

'जो कटहर बडहर बडवेरी । तोहि असि नाहीं, कोकाबेरो
 साम जाँशु मोर तुरँज जँभीरा । करुई नीम तौ छॉह गँभीरा
 नरियर दास ओहि कहँ रासौ । गलगल जाउँ सवति नहि भारसौ
 तेरे कहे होइ मोर काहा ? । फरे विरिछ कोइ डेल न बाहा
 नवै सदाफर सदा जो फरई । दारिउँ देखि फाटि हिय मरई
 जयफर लींग सोपारि छेहारा । मिरिच होइ जो सहै न भारा
 हँ सो पान रँग पूज न कोई । विरह जो जरै चून जरि होई
 लाजहि बूडि मरसि नहि, ऊभि उठावसि वाँह ।

हँ रानी, पिय राजा, तो कहँ जागी नाह' ॥ ५९ ॥

'हँ पदमिनी मानमर केवा । भँवर मराल करहि मोरि सेवा
 पूजा-जोग दई हन्ह गढी । श्री महेस के माथे चढी
 जानै जगत कँवल कै करी । तोहि असि नहि नागिनि विष-भरी
 तुई सब लिए जगत के नागा । कोइल भेस न छॉडेमि कागा
 तू भुजडल, हँ हसिनि भोरी । मोहि तोहि मोति पोत कै जोरी

कचन-करी रतन नग धाना । जहाँ पदारथ सोह न आना
तू तौ राहु, हैं ससि उजियारी । दिनहि न पूजै निसि अंधियारी
ठाढि होसि जेहि ठाई मसि लागै तेहि ठावँ ।

तेहि डर रॉध न वैठाँ मकु माँवरि होइ जावँ' ॥ ६० ॥
'कँवल सो कौन सोपारी रोठा । जेहि के हिये सहस दस कोठा
रहै न भाँपे आपन गटा । सो कित उधेलि चहै परगटा ?
कँवल-पत्र तर दारिउँ, चोली । देखे सूर देसि है खोलो
ऊपर राता, भीतर पियरा । जारौ ओहि हरदि अम हियरा
इहाँ भँवर मुख वातन्ह लावसि । उहाँ सुरुज कहँ हँसि बहरावसि
मव निसि तपि तपि मरसि पियामी । मोर भए पावसि पिय वासी
सेजवाँ रोइ रोइ निसि भरमी । तू मोसौ का सरवरि करसी ?
सुरुज-किरिन बहरावै, सरवरि लहरि न पूज ।

भँवर हिया तोर पावै, धूप देह तोरि भूँज' ॥ ६१ ॥
'मैं है कँवल सुरुज कै जोरी । जौ पिय आपन तौ का चोरी
हैं ओहि आपन दरपन लेखौ । करौ सिंगार, भार मुख देखौँ
मोर विगास ओहिक परगासू । तूँ जरि मरसि निहारि अकार
हैं ओहि सौ, वह मोसौ राता । तिमिर विलाइ होत परभावा
कँवल के हिरदय भहँ जो गटा । हरि हर हारकीन्ह, का घटा ?
जा कर दिवस तेहि पहँ आवा । कारि रैन कित देखै पावा ?
तू ऊमर जेहि भीतर मार्यी । चाहहिँ उडै मरन के पाँगी
धूप न देराहि, विपभरी, अमृत सो सर पाव ।

जेहिँ नागिनि डस सो मरै, लहरि सुरुज कै आव' ॥ ६२ ॥

‘फूल न कवैल भानु विनु ऊए । पानी मैल होइ जरि छूए
फिरहि भँवर तोरे नयनाहाँ । नीर विसाँध होइ तोहि पाहाँ
मन्छ कच्छ दादुर कर वासा । वग अस परि वसहि तोहि पासा
जे जे परि पास तोहि गए । पानी महुँ सो विसाँध भए
जौ उजियार चाद होइ ऊआ । वदन फलक डोम लेइ छूआ
मोहि तोहि निसि दिन कर वीचू । राहु के हाथ चाँद के मीचू
सहस वार जौ वेवै कोई । तौहु विसाँध जाइ न धोई

काह कहौ ओहि पिय कहँ, मोहि सिर धरेसि अँगारि ।

तेहि के खेल भरोसे तुइ जीती, मैं हारि’ ॥ ६३ ॥

‘तार अकेल का जीतिउँ हारू । मैं जीतिउँ जग कर सिगारू
वदन जितिउँ जो ससि उजियारी । वेनी जितिउँ भुअगिनि कारी
नैनन्ह जितिउँ मिरिग के नैना । कठ जितिउँ कोकिल के बैना
मौह जितिउँ अरजुन धनुधारी । गीउ जितिउँ तमचूर, पुछारी
नासिक जितिउँ पुहुप-तिल, सूआ । सूक जितिउँ वेसरि होइ ऊआ
दामिनि जितिउँ दसन दमकाहीं । अधर-रग जीतिउँ विनाहीं
केहरि जितिउँ, लक मैं लीन्ही । जितिउँ मराल, चाल वै दीन्ही
पुहुप-वाम, मलयागिरि निरमल अग वसाइ ।

तू नागिनि आसा-लुबुध डससि काहु कहँ जाइ’ ॥ ६४ ॥

‘का तोहि गरव मिँगार पराए । अरवहीं लेहि लूटि मव टाएँ
है साँवरि, सलोन मोर नैना । सेत चींग, मुख चातक बैना
साँवरि जहाँ लोनि सुठि नीकी । का मरवरि तू करसि जो फीकी’
पदमावति सुनि उतर न सही । नागमती नागिनि जिमि गही

वह ओहि कहँ, वह ओहि कहँ गहा । काह कहौ तस जाइ न कहा
 दुवौ नवल भरि जोवन गाजँ । अछरी जनहुँ अखारे बाजँ
 भा वाहुँन वाहुँन साँ जोरा । हिय साँ हिय, कोइ बाग न मोरा

जनहुँ दीन्ह ठगलाइ देखि आइ तस मीचु ।

रहा न कोइ धरहरिया करै दुहुन्ह महँ बीचु ॥ ६५ ॥

पवन सवन राजा के लागा । कहेसिलडहि पदमिनि औ नागा
 दूनौ सवति साम औ गोरी । मरहिँ तौ कहँ पावसि असि जोरी
 चलि राजा आवा तेहि वारी । जरत बुभाई दूनौ नारी
 'एक वार जेड पिय मन बूभा । सो दुसरं साँ काहे क जूभा ?
 धूप छाँह दोउ पिय के रगा । दूनौ मिली रहहि एक सगा'
 अस कहि दूनौ नारि मनाई । विहँसि दोउ तब कठ लगाई
 लेइ दोउ सग मँदिर महँ आए । साँन-पलँग जहँ रहे बिछाए

वहु सुगध, बहु भोग सुख, कुरलहि केलि कराहि ।

दुहुँ माँ केलि नित मानै, रहस अनँद दिन जाहिँ ॥ ६६ ॥

(६) राघव चेतन खड

राघव चेतन चेतन महा । आज सरि राजा पहुँ रहा
 होइ अचेत घरी जौ आई । चेतन कै सब चेत भुलाई
 भा दिन एक अमावस सोई । राजै कहा 'दुइज कब होई ?'
 राघव के मुख निकसा 'आजू' । पंडितन्ह कहा 'काल्हि, महाराजू'
 राजै दुवौ दिसा फिरि देखा । इनमहँ को वाउर, को सरेखा ?
 भुजा टेकि पडित तय बोला । 'छाँडहि देस वचन जौ बोला'
 राघव करै जाखिनी-पूजा । चहै सो भाव देखावै दूजा
 राघव पूजि जाखिनी, दुइज देखाणसि साँभ ।

वेद-पथ जे नहि चलहि ते भूलहि बन माँभ ॥ १ ॥

पंडितन्ह कहा परा नहि धोखा । कौन अगस्त समुद जेइ सोखा ?
 सो दिन गयउ साँभ भइ दूजी । देखी दुइज घरी वह पूजी
 पंडितन्ह राजहि दीन्ह असीसा । 'अरु कम यह कचन औ मीसा
 जौ यह दुइज काल्हि कै होती । आजु तेज देखत ससि जोती
 राघव दिस्टिवध कलिह खेला । सभा माँभ चेटक अस मेला
 गहि कर गुरू चमारिनि लोना । सिया काँवरु पादन टोना
 दुइज अमावस कहँ जो देखावै । एरु दिन राहु चाँद कहँ लावै
 राज-वार अस गुनी न चाहिय जेहि टोना कै ग्योज ।

गहि चेटक औ विद्या छला सो राजा भोज ॥ २ ॥

राघव-वैन जो कचन-रेखा । कसे वानि पीतर अस देखा
 अग्या भई, रिसान नरेसू । मारहु नाहिं, निसारहु देसू
 भूठ बोलि थिर रहै न राँचा । पडित सोइ वेद-मत-साँचा
 एहि रे वात पदमावति मुनी । देस निसारा राघव गुनी
 ग्यान-दिस्टि धनि अगम विचारा । भल न कीन्ह अस गुनी निसारा
 रानी राघव वेगि हँकारा । सूर-गहन भा लेहु उतारा
 वाम्हन जहाँ दच्छिना पावा । सरग जाइ जौ होइ बोलावा
 आवा राघव चेतन, वौराहर के पास ।

ऐस न जाना ते हिचै, विजुरी वसै अकास ॥ ३ ॥

पदमावति जो भरोखे आई । निहकलक ससि दीन्ह दिखाई
 ततखन राघव दीन्ह असीसा । भयउ चकोर चदमुख दीमा
 कँकन एक कर काढि पवारा । काढत हार टूट औ मारा
 पदमावति हँसि दीन्ह भरोखा । जौ यह गुनी भरै, मोहिं दोखा
 सबै सहेली देखै धाई । 'चेतन चेतु' जगावहि आई
 चेतन परा, न आवै चेतू । सबै कहा 'एहि लाग परेतू'
 कोई कहै आहि मनिपातू । कोई कहै कि मिरगी वातू

'को तोहि दीन्ह काहु किछु, की रे डसा तोहि साँप ? ।

कहु सचेत होइ चेतन, देह तोरि कम काँप ॥ ४ ॥

भयउ चेत, चेतन चित चेत । नैन भरोखे, जीउ मँकेता
 पुनि जो बोला मति बुधि रोवा । नैन भरोखा लाग रोवा
 वाउर वदिर सीस पै धुना । आपनि कहै, पराड न सुना
 जानहु लाई काहु ठगोरी । सन पुकार, सन वार्त वौरी

‘हों रे ठगा एहि चितउर माहाँ । का सीँ कहीं, जाँ केहि पाहाँ ?
 यह राजा मठ बड ह्यारा । जेइ राखा अस ठग उटपारा
 ना कोड वरज, न लाग गोहारी । अस एहि नगर होइ बटपारी
 दिन्दि दीन्ह ठगलाइ, अलक-फोस परे गीउ ।

जहा भिरगारि न वाचै, तहाँ वाच को जीउ ? ॥ ५ ॥

कित धाराहर आइ भरोसे ? लेइ गड जीउ दन्दिना धोसे
 तेइ हँकारि मोहि करुन दीन्हा । दिस्ति जो परी जीउ हरि लीन्हा ?
 मखिन्ह कहा ‘चेतसि तिसँभारा । हिये चेतु जेहि जासि न मारा
 जौ कोड पावै आपन माँगा । ना कोड मरै, न काहु ग्याँगा
 वह पदमावति आहि अनपा । वरनि न जाइ काहु के रूपा
 तुम्ह अम बहुत विमोहित भए । धुनि धुनि सीस जीउ देइ गए
 बहुतन्ह दीन्ह नाइ ऊँ गीवा । उतर देइ नहि, मारै जीवा
 कोड माँगै नहि पावै, कोड माँगै विनु पाव ।

तू चेतन औरहि ममुभावै, तो कहुँ को समुभाव ? ॥ ६ ॥

भयउ चेत, चित चेतन चेता । ‘बहुरि न आइ सहीं दुख एता
 रोवत आइ परे हम जहाँ । रोवत चले, कौन सुख तहाँ ?
 जहाँ रहे ससो जिउ केरा । कौन रहनि ? चलि चलै मवेरा
 अब यह भीख तहाँ होइ माँगौं । देइ एत जेहि जनम न खाँगौं
 अस करुन जौ पावौं दूजा । दारिद हरै, आस मन पूजा
 दिखी नगर आदि तुरकानू । जहाँ अलाउदीन सुलतानू
 सोन डरै जेहि के टकसारा । धारह वानी चलै दिनारा

जो जो मंदिर पदमिनि लेखी । सुना जौ कँवल कुमुद अस देखी
तत्र कह अलाउदीं जग-सूरु । 'लेउँ नारि चितउर कै चूरु
जौ वह पदमिनि मानसर, अलि न मलिन होइ जात ।

चितउर महुँ जो पदमिनी फेरि उहै कहु वात' ॥ १२ ॥

'ए जगसूर, कहीं तुम्ह पाहा । और पाँच नग चितउर माहाँ
एक हस है परि अमोला । मोती चुनै, पदारथ धोला
दूसर नग जो अमृत वसा । सो विष हरै नाग कर डसा
तीसर पाहन परम पखाना । लोह छुए होइ कचन-वाना
चौथ अहै सादर अहेरी । जो वन हस्ति धरै सब घेरी
पाँचवँ नग सो तहाँ लागना । राजपरि पेसा गरजना
हरिन रोभकोड भागि न वाँचा । देखत उडे मचान होइ नाचा
नग अमोल अस पाँचौ भेट समुद ग्रेहि दीन्ह ।

इसकदर जो न पावा सो सायर धँसि लीन्ह' ॥ १३ ॥

पान दीन्ह राघव पहिरावा । दस गज हस्ति घोड सो पावा
औ दूसर ककन कै जोरी । रतन लाग ग्रेहि बत्तिम कौरी
लास दिनार देवाई जेंवा । दारिद हरा समुद कै सेवा
'हैं जेहि दिवस पदमिनी पावौं । तोहि राघव, चितउर वैठावौं
पहिले करि पाँचौ नग मूठी । सो नग लेउँ जो कनक-अँगूठी
सरजा वीर पुरुष बरियारु । ताजन नाग, सिंह अमवारु'
दीन्ह पत्र लिखि, बेगि चलावा । चितउर-नाड राजा पहुँ आवा
राजै पत्रि वँचावा, लिगी जौ करा अनेग ।

निघल कै जो पदमिनी, पठै देहु तेहि बेग ॥ १४ ॥

सुनि अस लिखा उठा जरि राजा । जानौ दैउ तडपि धन गाजा
 'का मोहि सिद्ध देखावसि आई । कहौ तौ सारदूल धरि साई
 भलेहि साह पुटुमीपति भारी । मॉग न कोइ पुरुष कै नारी
 जो सो चक्कवै ताकहँ राजू । मँदिर एक कहँ आपन साजू'
 'राजा, अस न होहु रिस-राता । सुनु होइ जूड, न जरि कहु वाता
 बादसाह कहँ ऐस न वोलू । चढै तौ परै जगत महँ डोलू
 सूरहि चढत न लागहि वारा । तपै आगि जेहि सरग पतारा
 तासौं कौन लडाई ? वैठहु चितउर खास ।

उपर लेहु चँदेरी, का पदमिनि एक दासि ? ॥ १५ ॥

'जौ पै घरनि जाड घर केरी । का चितउर, का राज चँदेरी ?
 जिउ न लेइ घर कारन कोई । सो घर देइ जो जोगी होई
 ही रनयँभउर-नाह हमीरू । कलपि माथ जेइ दीन्ह सरीरू
 है सो रतनसेन मक-बधी । राहु वेधि जीता सैरधी
 हनुवँत सरिम भार जेइ कौंधा । राघव सरिस समुद जो बाँधा
 प्रिक्रम सरिस कीन्ह जेइ साका । सिंघलदीप लीन्ह जौ तामा
 जौ अस लिखा भयउँ नहि ओछा । जियत सिंघ कँ गह को मोछा ?
 दरव लेइ तौ मानाँ, सेव करौ गहि पाउ ।

चाहे जौ सो पदमिनी सिंघलदीपहि जाउ ॥ १६ ॥

'वोलु न, राजा, आपु जनाई । लीन्ह देवगिरि और छिताई
 मातौ दीप राज मिर नावहि । औ सँग चली पदमिनी आवहि
 जंदि कै सेव करै ससारा । सिंघलदीप लेत कित वारा ?
 जिनि जानसि यह गड तोहि पाहीं । ताकर सबै, तोर किछु नाहीं

गढ तस सजा जौ चाहै कोई । वरिम्न वीस लागि राँग न होई
 बाँके चाहि बाँक गढ कीन्हा । औ सब कोट चित्र कै लीन्हा
 बैठे धानुक कँगुरन कँगुरा । भूमि न आँटी अँगुरन अँगुरा
 औ बाँधे गढ गज मतवारे । फाटै भूमि होहिं जौ ठारे
 विच विच वुर्ज वने चहुँ फेरी । बाजहिं तबल, ढोल औ भेरी
 भा गढ राज सुमेरु जस, सरग छुवै पै चाह ।

समुद्र न लेखे लावै, गग सहसमुख काह ? ॥ २२ ॥

बादमाह हठि कीन्ह पयाना । इद्र-भँडार डोल, भय माना
 होत पयान कटक सो आवा । आइ साह चितउर नियरावा
 राजा राव देख सब चढा । आव कटक सब लोहे-मढा
 चहुँ दिसि दिस्टि परा गजजूहा । साम-घटा मेघन्ह अस रूहा
 चढि वौराहर देखहि रानी । धनि तुई अस जाकर सुलतानी
 की धनि रतनसेन तुई राजा । जा कहँ तुरुक कटक अस साजा
 वैरख ढाल केरि परछाहा । रैनि होति आवै दिन माहीं

अधकूप भा आवै, उडत आव तस छार ।

ताल तलावा पोखर धूरि भरी जेवनार ॥ २३ ॥

राजै कहा 'करहु जो करना । भयउ असूभ, सूभ अरु मरना'
 जहँ लागि राज साजसब होऊ । ततएन भयउ मँजोउ सँजोऊ
 वाजे तबल अकूत जुभाऊ । चढे कोपि सब राजा राऊ
 असु-दल गज-दल दूना साजे । औ धन तबल जुभाऊ वाजे
 माघे मुकुट, उत्र सिर साजा । घडा वजाइ इद्र अम राजा

आगं रथ सेना सब ठाढो । पाछे धुजा मरन कै काढी
चढा वजाड चढा जस इदू । देवलोक गोहने भए हिदू
देखि अनी राजा कै जग होइ गयउ असूभ ।

देहुँ कस होमै चाहै चाँद सूर के जूझ ॥ २४ ॥

इहाँ राज अस सेन बनाई । उहाँ साह के भई अवाई
अगिले दौरे आग आए । पछिले पाछ कोस दस छाप
साह आड चितउरगढ बाजा । हस्ती सहस बीस मँग साजा
ओनड आए दूनौ दल साजे । हिदू तुरुक दुवौ रन गाजे
दुवो ममुद दधि उदधि अपारा । दूनौ मेरु रिखिद पहारा
भा सग्राम न भा अस काऊ । लोहे दुहुँ दिसि भए अगाऊ
सीस कध कटि कटि सुई परे । रुहिर सलिल होइ सायर भरे
काहू नाथ न तन गा, सकति मुण भव पोखि ।

ओलू पूर तेहि जानब, जो धिर आवत जोरि ॥ २५ ॥

अथवा दिवस, सूर भा दामा । परी रैनि, ससि उवा अकासा
चाँद छत्र देइ बैठा आई । चहुँ दिसि नरखत दीन्ह छिटकाई
नरखत अकासहि चढे दिपाही । टुटि टुटि लूक परहिं, न बुझाहीं
परहिं सिला जस परै वजागी । पाहन पाहन सौं उठ आगी
गोला परहिं, कोल्हु ढरकाहीं । चूर करत चारिउ दिभि जाहीं
ओनई घटा बरस भरि लाई । ओला टपकहिं, परहिं बिछाई
तुरुक न मुख फेरहि गढ लागे । एक मरै, दूसर होइ आगे

परहिं वान राजा के, सकै को सनमुख काठि ?

ओनई सेन साह कै रही भोर लगि ठाढि ॥ २६ ॥

भयउ विहानु, भानु पुनि चढा । सहसहु करा दिवस विधि गढा
 भा धावा, गढ कीन्ह गरेरा । कोपा कटक लाग चहुँ फेरा
 छँका कोट जोर अस कीन्हा । घुसि कै सरग सुरँग तिन्ह दीन्हा
 गरगज बाधि कमानै धरी । वज्र-आगि मुख दारु भरी
 अस्त धातु के गोला छूटहि । गिरहिँ पहार चून होइ फूटहिँ
 एक वार सब छूटहिँ गोला । गरजै गगन, धरति सब डोला
 फूटहिँ कोट फूट जनु सीसा । ओदरहिँ बुरुज जाहिँ सब पीसा
 लका-रावट जस भई दाह परी गढ सोइ ।

रावन लिखा जरै कहँ, कहहु अजर किमि होइ ॥ २७ ॥
 राजगीर लागे गढ थवई । फूटै जहाँ सँवारहिँ सबई
 सौ सौ मन के वरसहिँ गोला । वरसहिँ तुपक तीर जस ओला
 जानहुँ परहिँ सरग हुत गाजा । फाटै धरति आई जहँ बाजा
 सबै कहा अब परलै आई । धरती मरग जूझ जनु लाई
 ववहुँ राजा हिये न हारा । राज-पौरि पर रचा अस्सारा
 सोह साह कै बैठक जहाँ । समुहें नाच करावै तहाँ
 तत बितत सुभर धन-तारा । बाजहिँ सबद होइ भनकारा
 जग-सिंगार मनमोहन पातुर नाचहिँ पाँच ।

धादसाह गढ छँका, राजा भूला नाच ॥ २८ ॥ ✓
 जहँवाँ साँह साह कै दीठी । पातुरि फिरत दीन्हि तहँ पीठी
 देखत साह सिंघासन गूँजा । कब लागि मिरिग चाँद तोहि भूजा
 छाँडहिँ वान जाहिँ उपराही । का तँ गरब करसि इतराही ?
 बोलत धान लाख भए ऊँचे । कोइ कोट, कोइ पौरि पहुँचे

जहाँगीर कनउज कर राजा । ओहि क वान पातुरिके वाजा
लागा वान, जाँध तस नाचा । जिउ गासरग, परा मुँ सॉचा
उडमा नाच, नचनिया मारा । रहसे तुरुक वजाइ कै तारा

जो गढ साजै लाख दस, कोटि उठावै कोट ।

बादसाह जत्र चाहै छपै न कौनिउ ओट ॥ २९ ॥

ब्राठ बरिस गढ छँका रहा । धनि सुलतान, कि राजा महा
प्राइ साह अँवराव जो लाग । फरे भरे पै गढ नहि पाए
तौ तोरों तौ जौहर होई । पदमिनि हाथ चढै नहि सोई
गहि विधि ढील दीन्ह तत्र ताई । दिल्ली तँ अरदासँ आई
छिउँ हरेव दीन्ह जो पीठी । सो अब चढा सॉह कै दीठी
जन्ह मुँ साथ, गगन तेइ लाग । थाने उठे, आव सब भागा
हॉ माह चितउरगढ छावा । इहाँ देस अब होइ पराग

जिन्ह जिन्ह पथ न तृन परत, बाढे बेर बवूर ।

निसि अँधियारी जाइ तत्र वेगि उठै जौ सूर ॥ ३० ॥

ना साह अरदामँ पढो । चिता आन आनि चित चढी
इ सॉ अरुभि जाइ तत्र छूटै । होइ मेराव, कि सो गढ टूटै
हन कर रिपु पाहन हीरा । बेधौ रतन पान देइ बीरा
जा मँती कहा यह भेऊ । पलटि जाहु अत्र मानहु सेऊ
; तोहि सॉ पदमिनि नहि लेऊँ । चूरा कीन्ह छॉडि गढ देऊँ
जा पलटि सिंघ चडि गाजा । अग्या जाइ कहा जहँ राजा
बहूँ हिये समुझ, रे राजा । बादसाह सॉ जूझ न छाजा

हैं जो पाँच नग तो पहुँ लेइ पाँचों कहँ भेट ।

मकु सो एऊ गुन मानै सब ऐगुन धरि भेट' ॥ ३१ ॥

‘अनु सरजा को भेटै पारा । वादसाह वड अहै तुम्हारा
ऐगुन भेटि मकै पुनि सोई । औ जो कीन्ह चहै मो होई
नग पाँचौ देइ देउँ भँडारा । इसकदर सौँ वाँचै टारा
जौ यह वचन त माथे मोरे । सेवा करौँ ठाढ कर जोरे
पै विनु सपथ न अम मनमाना । सपथ बोल वाचा-परवाँना
राम जो गरुअ लीन्ह जग भारू । तेहि क बोल नहि टरै पहारू’
‘नाव जो माँझ भार हुँत गीवा’ । सरजै कहा ‘भद वह जीवा’
सरजै सपथ कीन्ह छल वेनहि मीठै मीठ ।

राजा कर मन माना, माना तुरत वसीठ ॥ ३२ ॥

हस कनक पीजर-हुँत आना । औ अमृत, नग परस-पराना
सो वसीठ सरजा लेइ आवा । वादसाह कहँ आनि मेरावा
‘कालिह आव गढ ऊपर भान् । जो रे धनुक, सौँह होइ वान्’
पान वसीठ मया करि पावा । लीन्ह पान, राजा पहुँ आवा
‘जस हम भेट कीन्ह गा कोहू । सेवा माँझ प्रीति औ छोहू
कालिह साह गढ देखै आवा । सेवा करहुँ जैम मन भावा
गुन सौँ चलै जो बोहित बोभा । जहँवाँ धनुक वान तहँ सोभा’
भा आयसु अम राजघर वंगि दै करहुँ रसोइ ।

ऐस सुरस रस मेरवहु जेहि सौँ प्रीति-रस होइ ॥ ३३ ॥

जत परकार रसोइ वरानी । साह जिवावहि कहँ सब आनी
जेवाँ साह जो भयड विहाना । गढ देखै गवना सुलताना

फवँल सहाय सूर सँग लीन्हा । राघव चेतन आगे कीन्हा
 ततखन आइ विवाँन पहुँचा । मन ते अधिक, गगन तें ऊँचा
 उधरी पवँरि, चला सुलतानू । जानहु चला गगन कहँ भानू
 आजु पवँरि-मुख भा निरमरा । जो सुलतान आइ पग धरा
 जनहुँ उरह काटि सब काढी । चित्र क मूरति विनवहि ठाढी
 लारन बैठ पवँरिया जिन्ह तँ नवहि करारि ।

तिन्ह सब पवँरि उघारे, ठाढ भए कर जोरि ॥ ३४ ॥

माताँ पवँरी कनक-केवारा । माताँ पर बाजहि धरियारा
 सात रग तिन्ह साती पवँरी । तत्र तिन्ह चढै फिरै नौ भँवरी
 खँड खँड साज पलँगश्री पीढी । जानहुँ इद्रलोक कै माँढी
 कनक-झत्र मिघासन माजा । पैठत पवँरि मिला लेइ राजा
 दादमाह चटि चितउर देखा । सब ससार पाँव तर लेखा
 रतन पदारथ नग जो बसाने । घूरन्ह माँह देख छहराने
 मँदिर मँदिर फुलवारी वारी । बार बार बहु चित्र सँवारी
 पाँसासारिकुँवरसब खेलहि, गीतन्ह सवन श्रोनाहि ।

चैन चाव तस देखा जनु गढ छँका नाहि ॥३५॥

देखत साह कीन्ह तहँ फेरा । जहँ मंदिर पदमावति केरा
 आन पास सरवर चहुँ पासा । माँभ मँदिर जनु लाग अकासा
 कनक सँवारि नगन्ह सब जरा । गगन चद जनु नखतन्ह भरा
 सरवर चहुँ दिसि पुरइन फूली । देखत वारि रहा मन भूली
 कुँवरि नहस दस बार अगोरे । दुहुँ दिसि पवँरि ठाढि कर जोरे

सारदूल दुहुँ दिसि गढि काढे । गलगाजहिं जानहुँ ते ठाढे
जावत कहिए चित्र कटाऊ । तावत पँवरिन्ह वने जडाऊ
माह मँदिर अस देखा जनु कैलास अनूप ।

जाकर अस धौराहर सो रानी केहि रूप ॥ ३६ ॥

नाँघत पँवरि गए खँड साता । सतएँ भूमि विछावन राता
आँगन माह ठाढ भा आई । मँदिर छाँह अति सीतल पाई
रानी धौराहर उपराहीं । करै दिस्टि नहि तहाँ तराहीं
सखी सरेली माथ वईठी । तपै सूर, ससि आव न दीठी
गजा सेव करै कर जोरे । आजु साह घर आवा मोरे
नट नाटक, पातुरि औ वाजा । आइ अरसाड माहँ सब माजा
परगट कह राजा साँ वाता । गुपुत प्रेम पदमावति राता
गीत नाट अस धधा, दहक बिरह कै आँच ।

मन कै डोरि लागि तहँ, जहँ सो गहि गुन साँच ॥ ३७ ॥

गोरा बादल राजा पाहों । रावत दुवौ दुवौ जनु बाहों
आइ स्रवन राजा के लागे । मूसि न जाहिं पुरुष जो जागे
'वाचा परगि तुरुक हम वूझा । परगट मेर, गुपुत छल सूझा
तुम नहि करौ तुरुक साँ मेरु । छल पै करहि अत कै फेरु'
सुनि राजहि यह बात न भाई । 'जहाँ मेर तहँ नहि अधमाई
मदहि भल जो करै भल मोई । अतहि भला भले कर होई
जो छल करै ओहि छल वाजा । जैसे सिंघ मँजूसा साजा'
राजै लोन सुनावा, लाग दुहुन्ह जस लोन ।

आए कोदाइ मँदिर कहँ, सिंघ डान अब गोण ॥ ३८ ॥

राजा कै सोरह सै दासी । तिन्ह महँ चुनि काढीं चौरासी
 बरन बरन सारी पहिगई । निकसि मँदिर तें सेवा आई
 जनु निसरीं सब शीरवहूटी । रायमुनी पींजर-हुँत छूटी
 मवै परथमै जोवन सोहँ । नयन वान औ मारँग भौहँ
 मारहिं धनुक फेरि मर ओही । पनिघट घाट धनुक जिति मोही
 काम-कटाछ हनहिं चित-हरनी । एक एक तें आगरि बरनी
 जानहुँ इद्रलोक तें काढीं । पाँतिहि पाँति भई मव ठाढीं
 माह पूछ राघव पहँ, 'ए मव अछरी आहिं ।

तुड जो पदमिनि बरनी, कहु सो कौन इन माहि' ॥ ३६ ॥

'दीरघ आउ, भूमिपति भारी । इन महँ नाहिं पदमिनी नारी
 यह फुलवारि सो ओहि कै दासी । कहँ केतकी भँवर जहँ बासी
 वह ती पदारथ, ए मव मोती । कहँ वह दीप पतँग जेहि जोती
 जी लगि सूर क दिस्टि अकासू । तौ लगि ससि न करै परगासू
 सुनि कै माह दिस्टि तर नावा । 'हम पाहुन, यह मँदिर परावा
 पाहुन ऊपर हेरै नाहीं । हना राहु अर्जुन परछाहीं'
 सेव करै दामी चहुँ पामा । अछरी मनहुँ इद्र कैलासा
 पुनि मँधान बहु आनहिं, परसहि वूकहि वूक ।

करहि मँवाग गोसाईं, जहाँ परै किछु चूरु ॥ ४० ॥

भड जेवना फिरा खँडवानी । फिरा अरगजा कुहँकुहँ-पानी
 नग अमोल जो थारहि भरे । राजै सेव आनि कै धरे
 बिनती कीन्ह धालि गिउ पागा । 'ए जगसूर, सीउ मोहिं लागा'
 सुनि बिनती बिहँसा सुलवान् । सहसौ करा दिपा जस भान्

सारदूल दुहुँ दिसि गडि काढ । गलगाजहिं जानहुँ ते ठाढे
जावत कहिण चित्र कटाऊ । तावत पँवरिन्ह वने जडाऊ
माह मँदिर अस देखा जनु कैलास अनूप ।

जाकर अस धौराहर सो रानी केहि रूप ॥ ३६ ॥

नाँघत पँवरि गए सँड साता । सतएँ भूमि विछावन राता
आँगन माह ठाढ भा आई । मँदिर छाँह अति सीतल पाई
रानी धौराहर उपराहीं । करै दिस्टि नहि तहाँ तराहीं
सखी मरेखी साथ बईठी । तपै सूर, ससि आव न दीठी
राजा सेव करै कर जोरे । आजु साह घर आवा मोरे
नट नाटक, पालुरि औ वाजा । आइ अखाड माहँ सब माजा
परगट कह राजा साँ वाता । गुपुत प्रेम पदमावति राता
गीत नाट अस यथा, दहक विरह कै आँच ।

मन कै डोरि लागि तहँ, जहँ सो गहि गुन खाँच ॥ ३७ ॥

गोरा बादल राजा पाहाँ । रावत दुवौ दुवौ जनु बाहाँ
आइ स्रवन राजा के लागे । मूसि न जाहि पुरुष जो जाग
'वाचा परछि तुरुक हम बूझा । परगट मेर, गुपुत छल सूझा
तुम नहि करौ तुरुक साँ मेरु । छल पै करहि अत कै फेरु'
सुनि राजहि यह घात न भाई । 'जहाँ मेर तहँ नहिं अधमाई
मदहि भल जो करै भल सोई । अतहि भला भले कर होई
जा छल करै ओहि छल वाजा । जैसे सिंघ मँजूसा साजा'
राजै लोन सुनावा, लाग दुहुन्ह जस लोन ।

आए कोहाड मँदिर कहँ, सिंघ छान अत्र गोन ॥ ३८ ॥

राजा कै सोरह सै दासी । तिन्ह महँ चुनि काढीं चौरासी
 बरन बरन मारी पहिराई । निकसि मँदिर तें सेवा आई
 जनु निसरीं सब वीरवहूटी । रायमुनी पौंजर-हुँत छूटी
 सबै परधमै जोवन सोहैं । नयन वान औ मारँग भौहैं
 मारहिँ धनुक फेरि सर ओही । पनिघट घाट धनुक जिति मोही
 काम-कटाछ हनहि चित-हरनी । एक एक तें आगरि बरनी
 जानहुँ इद्रलोक तें काटीं । पाँतिहि पाँति भई मव ठाढीं
 माह पूछ राघव पहुँ, 'ए मव अछरी आहिँ ।

तुड जो पदमिनि बरनी, कहु सो कौन इन माहिँ' ॥ ३८ ॥

'दीरघ आउ, भूमिपति भारी । इन महँ नाहिँ पदमिनी नारी
 यह फुलवारि सो ओहि नै दासी । कहँ केतकी भँवर जहँ बासी
 वह तौ पदारथ, ए मव मोती । कहँ वह दीप पतँग जेहि जोती
 जो लागि सूर क दिस्टि अकासू । तौ लागि समि न करै परगासू
 सुनि कै माह दिस्टि तर नावा । 'हम पाहुन, यह मँदिर परावा
 पाहुन ऊपर हेरै नाहीं । हना राहु अर्जुन परछाहीं'
 सेव करै दामाँ चहुँ पामा । अछरी मनहुँ इद्र कैलासा
 पुनि मँधान बहु आनहि, परसहि वूकहि वूक ।

करहिँ मँवार गोसाई, जहाँ परै किछु चूरु ॥ ४० ॥

भड जेवना फिरा खँडवानी । फिरा अरगजा कुहँकुहँ-पानी
 नग अमोल जो थारहि भरे । राजै सेव आनि कै धरे
 विनती कीन्ह घालि गिड पागा । 'ए जगसूर, सीउ मोहिँ लागा'
 सुनि विनती विहँसा सुलतानू । सहसौ करा दिपा जस भानू

‘ए राजा, तुइ माँच जुडावा । भइ सुदिस्ति अब, सीउ छुडावा
 खाहु देस आपन करि सेवा । प्रौर देउँ माँडौ तोहि, देवा’
 हँसि हँसि बोलै, टेकै काँधा । प्रोति भुलाइ चहै छल बाँधा
 माया-बोल बहृत के साह पान हँसि दीन्ह ।

पहिले रतन हाथ कै चहै पदारथ लीन्ह ॥ ४१ ॥

माया-मोह-विवस भा राजा । साह खेल सतरँज कर साजा
 ‘राजा, है जौ लगि सिर घामू । हम तुम घरिक करहि विसरामू’
 दरपन साह भीति तहँ लावा । देखौं जबहि भरोखे आवा
 खेलहि दुआँ साह औ राजा । साह क रुख दरपन रह साजा
 सूर देख जौ तरई-दासी । जहँ ससि तहाँ जाइ परगासी
 ‘सुना जो हम दिखी सुलतानू । देखा आजु तपै जस भानू
 ऊँच छत्र जाकर जग माहौं । जग जो छाहँ सब ओहिकै छाँहौं
 वादसाह दिखी कर कित चितउर महँ आव ।

देखि लेहु, पदमावति, जेहि न रहै पछिताव’ ॥ ४२ ॥

विगसै कुमुद कहे ससि ठाऊँ । विगसै कँवल सुने रवि-नाऊँ
 भइ निसि, ससि धौराहर चढी । सोरह कला जैस विधि गढी
 विहँसि भरोखे आइ मरेखी । निरसि साह दरपन महँ देखी
 होतहि दरस परस भा लोना । धरती सरग भयउ सब सोना
 रुख माँगत रुख ता सहुँ भयऊ । भा शह मात, खेल मिटि गयऊ
 राजा भेद न जानै भाँपा । भा विसँभार, पवन विनु काँपा
 राघव कहा कि लागि सोपारी । लेइ पौटावहि सेज सँवारी

रैनि वीति गइ, भार भा, उठा सूर तत्र जागि ।

जो देखै नसि नाहीं, रही करा चित लागि ॥ ४३ ॥

राघव चेति माह पहुँ गयऊ । सूरज देखि कवँल विसमयऊ
 'देखि एक कोतुक ह्यै रहा । रहा अंतरपट पै नहीं अहा
 मरवर देख एक मैं सोई । रहा पानि पै पानि न होई
 मरग आइ धरती महँ छावा । रहा धरति पै धरत न आवा
 तिन्ह महँ पुनि एक मदिर ऊँचा । करन्ह अहा पै कर न पहुँचा
 तेहि मडप मूरति मैं देखी । विनु तन, विनु जिउ जाइ विसेरी
 पग्न चद होइ जनु तपी । पारस रूप दरस देइ छपी
 विगसा कँवल सरग निमि, जनहुँ लोकि गइ बीजु ।

ओहि राहु भा भानुहि, राघव मनहि पतीजु ॥ ४४ ॥

अति विचित्र देखा सो ठाढी । चित कै चित्र, लीन्ह जिउ काढी
 मिघ-लक, कुभस्थल जोरु । आकुम नाग, महाउत मोरु
 तेहि ऊपर भा कँवल विगासू । फिरि अलि लीन्ह पुहुप-मधु-वासू
 दुइ खजन विच बैठेउ मूआ । दुइज क चाँद धनुक लेइ ऊआ
 मिरिग देखाइ गवन फिरि क्रिया । ससि भा नाग, सूर भा दिया
 सुठि ऊँचे देखत वह उचका । दिस्टि पहुँचि, कर पहुँचि न सका
 पहुँच-विहून दिस्टि कित भई ? । गहि न सका, देवत वह गई
 राघव, हेरत जिउ गयउ, कित आछत जो असाध ?

यह तन राख पाँस कै सकै न, केहि अपराध' ॥४५॥

राघव सुनत सीस भुईँ धरा । 'जुग जुग राज भानु कै करा
 चहै कला, वह रूप विसेरी । निसचै तुम्ह पदमायति देगी

(७) युद्ध खंड

कुभलनेर - राय देपालू । राजा केर सत्रु हिय - साल
 वह पै सुना कि राजा बाँधा । पाछिल बैर सँवरि छर माधा
 मत्रु-साल तव नेवरै सोई । जौ घर आव सत्रु के जोई
 दूती एक विरिध तेहि ठाँऊँ । बाम्हनि जाति, कुमोदिनि नाऊँ
 ओहि हँकारि कै वीरा दीन्हा । 'तेरे वर मैं वर जिउ कीन्हा
 तुइ जो कुमोदिनि कँवल के नियरे । सरग जो चाँद बसै तोहि हियरे
 चितउर महुँ जो पदमिनि रानी । कर वर छर सौँ दे मोहि आनी
 रूप जगत-मन-मोहन ओ पद्मावति नाँ ।

कोटि दरव तोहि देखौ, आनि करसि एहि ठाँव' ॥ १ ॥

कुमुदिनि कहा 'देखु, हौ सो हौ । मानुप काह, देवता मोहौ'
 दूती बहुत पकावन साधे । मोतिलाहू औ खेरौरा बाँधे
 लेइ पूरी भरि डाल अछूती । चितउर चली पैज कै दूती
 विरिध वैस जौ बाँधे पाऊ । कहौ सो जोवन, कित बेवसाऊ ?
 तन बूढ़ा, मन बूढ़ न होई । बल न रहा, पै लालच सोई
 कहौ सो रूप जगत मव राता । कहौ सो गरब हस्ति जस माता
 कहौ सो तीख नयन, तन ठाढा । सबै भारि जोवन-पन काटा
 मुहमद विरिध जो नइ चलै, काह चलै भुँइ टोइ ।

जोवन-रतन हेरान है, मकु बरती महुँ होइ ॥ २ ॥

आइ कुमोदिनि चितउर चढी । जोहन मोहन पाढत पढी
 पूछि लीन्ह रनिवास वरोठा । पैठी पँवरी भीतर कोठा
 जहाँ पदमिनी ससि उजियारी । लेइ दृती पकवान उतारी
 हाथ पसारि धाइ कै भेटी । 'चीन्हा नहिं, राजा कै बटो
 हो वाम्हनि जेहि कुमुदिनि नाऊँ । हम तुम उपने एकै ठाऊँ
 नावँ पिता कर दृवे बेनी । सोइ पुरोहित गँधरबसेनी
 तुम वारी तव मिंघलदीपा । लीन्हे दूध पियाइउँ सीपा
 ठाँव कीन्ह मैं दूसर कुभलनेरँ आइ ।

सुनि तुम्ह कहँ चितउर महँ कहिउँ कि भेटौँ जाइ' ॥ ३ ॥
 सुनि निसचै नैहर कै गार्ड । गरे लागि पदमावति रोई
 नैन-गगन रवि विनु अँधियारे । ससि-मुग्ग आँसु दूट जनु तारे
 जग अँधियार गहन दिन परा । कव लागि ससिनखतन्ह निसि भरा
 'माय घाप कित जनमी वारी । गौंड तूरि कित जनम न मारी ?
 कित वियाहि दुख दीन्ह दुहेला । चितउर पथ कत बँदि मेला
 अब एहि जियन चाहि भल मरना । भयउ पहार जनम दुख भरना
 निकसि न जाइ निलज यह जीऊ । देखौँ मँदिर सून प्रिनु पीऊ'
 कुहुकि जो रोई ससि नखत नैन हँ रात चकोर ।

अबहँ घोलै तेहि कुटुक कोकिल, चातक, मोर ॥ ४ ॥
 कुमुदिनि कठ लागि सुठि रोई । पुनि लेइ रूप-डार मुग्ग घेई
 'तुइ ससि-रूप जगत उजियारी । मुख न भौँपु निसि होइ अँधियारी
 सुनि चकोर कोकिल दुख दुखी । घुँघची भई नैन करमुखी
 केतौ धाइ मरै कोइ बाटा । सोइ पाव जो लिखा लिलाटा

जो विधि लिखा आन नहि होई । कित धावै, कित रोवै कोई
 कित कोउ हाँछ करै औ पूजा । जो विधि लिखा होइ नहिँ दूजा'
 जेतिऊ कुमुदिनि बैन करेई । तस पदमावति स्रवन न देई

मेढुर चौर मैल तस, सूरि रही जस फूल ।

जेहि सिंगार पिय तजिगा जनम न पहिरै भूल ॥ ५ ॥

तव पकवान उधारा दूती । पदमावति नहिँ छुवै अछूती
 'मोहि अपने पिय केर स्वभारू । पान फूल कस होइ अहारू ?
 मोकहँ फूल भए मव काँटै । बाँटि देहु जौ चाहहु बाँटै
 रतन छुवा जिन्ह हाथन्ह सँती । और न छुवौ सो हाथ सँकेती
 ओहि के रँग भा हाथ मँजीठी । मुकुता लेउँ तौ घुँघची दीठी
 नैन करमुहँ, राती काया । मोति होहिँ घुँघची जेहि छाया
 अम कै ओछ नैन ह्यारे । देखत गा पिउ गहँ न पारे
 का तोर छुवौँ पकावन, गुड करुवा, घिउ रूख ।

जेहि मिलि होत सवाद रस, लेइ सो गयउ पिउ भूख' ॥६॥

कुमुदिनि रहो कँवल के पामा । बैरी सूर, चाँद कै आसा
 धनि कुँभिलानि रही, भइ चूरू । विगसि रँनि वातन्ह कर भूरू
 'कस तुइ, वारि, रहसि कुँभिलानी ? सूरि बेलि जस पाव न पानी
 अघही कँवल-फरी तुइ वारी । कोवँरि वैस, उठत पौनारी
 वेनी तोरि मैलि औ रूपी । सरवर माहँ रहसि कस सूखी ?
 पान-बेलि विधि कया जमाई । मींचत रहै तबहि पलुहाई
 करु सिंगार सुख फूल तमोरा । वैठु सिंघासन, भूलु हिँडोरा

गार जोवन जस समुद हिलोरा । देखि देखि जिउ बूडै मोरा
ग श्रोर नहि पाइय वैसे । जरे मरे विनु पाउव कैसे ?
देगि धनुक तोर नैना, मोहि लाग निप-वान ।

बिहँसि कँवल जो मानै, भँवर मिलावौ आन' ॥ १२ ॥

कुमुदिनि, तुइ वैरिनि, नहि धाई । तुइ मसि बोलि चढावमि आई
नेरमल जगत नीर कर नामा । जौ मसि परै होइ मो सामा
वहँवाँ धरम पाप नहि दीसा । कनक सोहाग माँभजस सीसा
जो मसि परे होइ मसि कारी । सो हँसि लाइ देसि मोहि गारी
रूपर महँ न छूट मसि-अकू । सो मसि लेइ मोहि देसि कलकू
साम भँवर मोर सूरुज-करा । और जो भँवर साम मसि-भरा
कँवल भँवर-रवि देखै आर्यी । चदन-वास न बैठै मार्यी
साम समुद मोर निरमल रतनसैन जगसेन ।

दूसर सरि जो कहावै सो विलाइ जस फेन' ॥ १३ ॥

'पदमिनि, पुनि मसि बोल न बैना । सो मसि देखु दुहँ तोरे नैना
मसि सिंगार, काजर मव बोला । ममि क बुद तिल सोह कपोला
लोना से । मसि-रेखा । मसि पुतरिन्ह तिन्ह माँ जग देसा
दुहँ लीन्ही । सो मसि फेरि जाइ नहि कीन्ही
उपराहीं । मसि भँवरा जे कँवल भँवाहीं
उरेही विनु दसन सोह नहि देही
म पिड न जेहि परछाहीं ?
ग सिर फेर ।

कुभलनेर' ॥ १४ ॥

जोवन-नीर घटे का घटा ? सत्त के वर जौ नहि हिय फटा'
 'जोवन बिना विरिध होइ नाऊँ । बिनु जोवन थाकै सब ठाऊँ
 जोवन हेरत मिलै न हेरा । सो जौ जाइ, करै नहि फेरा
 सेवर सेव न चित करु सूआ । पुनि पछितासि अंत जब भूआ
 रूप तोर जग ऊपर लोना । यह जोवन पाहुन चल होना
 उठत कोप जस तरिवर तस जोवन तोहि रात ।

तौ लहि रग लेहु रचि, पुनि सो पियर होइ पात' ॥१०॥

कुमुदिनि-वैन मुनत हिय जरी । पदमिनि उरहि आगि जनु परी
 'रंग ताकर हँ जाँरौ काँचा । आपन तजि जो पराएहि राँचा
 दूसर करै जाइ दुइ घाटा । राजा दुइ न होहि एक पाटा
 जेहि के जीउ प्रीति दिठ होई । मुख सोहाग सौ बैठै सोई
 जोवन जाउ, जाउ सो भँवरा । पिय कै प्रीति न जाइ, जो सँवरा
 एहि जग जौ पिउ करहिँ न फरा । ओहि जग मिलहि जो दिन दिन हेरा
 जोवन मोर रतन जहँ पीऊ । बलि तेहि पिउ पर जोवन जीऊ
 भरथरि विछुगि पिगला आहि करत जिउ दीन्ह ।

हँ पापिनि जो जियति हँ, इहै दोपुँ हम कीन्ह' ॥ ११ ॥

'पदमावति, सो कौनि रसोई । जेहि परकार न दूसर होई
 रस दूसर जेहि जीभ बईठा । सो जानै रस खाटा मीठा
 भँवर वाम घट फूलन्ह लेई । फूल बास बहु भँवरन्ह देई
 दूसर पुरुष न रस तुइ पावा । तिन्ह जाना जिन्ह लीन्ह परावा
 एक चुल्लू रस भरै न हीया । जौ लहि नहिँ फिर दूसर पीया

तेर जोवन जस समुद हिलोरा । देखि देखि जिउ बूडै मोरा
रग और नहि पाइय वैसे । जरे मरे विनु पाउब कैसे ?

देगि धनुक तेर नैना, मोहि लाग विप-वान ।

विहँसि कँवल जो मानै, भँवर मिलावौ आन' ॥ १२ ॥

'कुमुदिनि, तुइ वैरिनि, नहि धाई । तुइ मसि बोलि चढावसि आई
निरमल जगत नीर कर नामा । जौ मसि परै होइ सो सामा
जहँवों धरम पाप नहि दीसा । कनक सोहाग मॉभजस सीसा
जो मसि परे होइ ससि कारी । सोहँसि लाइ देसि मोहि गारी
कापर महँ न छूट मसि-अकू । सो मसि लेइ मोहिँ दसि कलकू
माम भँवर मोर सूरुज-करा । और जो भँवर साम मसि-भरा
कँवल भँवर-रवि देखै आँखी । चदन-वास न वैठै भारी
साम समुद मोर निरमल रतनसेन जगसेन ।

दूसर सरि जो कहावै सो विलाइ जस फेन' ॥ १३ ॥

'पद्मिनि, पुनि मसि बोल न वैना । सो मसि देखु दुहुँ तेरे नैना
मसि सिंगार, काजर सब बोला । मसि क बुद तिल सोह कपोला
लोना सोइ जहाँ मसि-रेखा । मसि पुतरिन्ह तिन्ह साँ जग देखा
जो मसि घालि नयन दुहुँ लीन्ही । सो मसि फेरि जाइ नहिँ कीन्ही
मसि-मुद्रा दुइ कुच उपरहीँ । मसि भँवरा जे कँवल भँवारीँ
मसि केमहि, मसि भौँह उरेही । मसि विनु दसन सोह नहिँ देही
सो कस सेत जहाँ मसि नार्हीँ ? । सो कस पिड न जेहि परछाहीँ ?

अस देवपाल राय मसि छत्र धरा सिर फेर ।

चितउर राज विसरिगा गयउ जो कुभलनेर' ॥ १४ ॥

सुनि देवपाल जो कुमलनेरी । पकज-नैन भौंह-धनु फेरी
 'सत्रु मोरे पिउ कर देवपाल । सो कित पूज सिंघ सरि भालू ?
 दु ख भरा तन जेत न केमा । तेहि का सँदेस सुतावसि, वेसा ?
 सोन नदी अस मोर पिउ गरुवा । पाहन होइ परें जौ हरुवा
 जेहि ऊपर अस गरुवा पीऊ । सो कस डोलाए डोलै जोऊ ?
 फेरत नैन चेरि सौ छूर्ती । भइ कूटन कुटनी तस कूर्ती
 नाक कान काटेन्हि, मसि लाई । मूँड मूँडि कै गदह चढाई
 मुहमद विधि जेहि गरु गढा का कोई तेहि फूँक ।

जेहि के भार जग थिर रहा, उडै न पवन के भूँक ॥ १५ ॥

काठि कुमुदनि धीरज धारा । गइ गोरा बादल के बारा
 चरन-रूवल भुङ्ग जनम न धरे । जात तहाँ लगि छाला पर
 निमरि आए छत्री सुनि देऊ । तस कापे जस काँप न कोऊ
 केस छोरि चरनन्ह-रज भारा । 'कहाँ पावँ पदमावति धारा ?'
 राखा आनि पाट सोनवानी । विरह-बियोगिनि वैठी रानी
 दोउ ठाट होइ चँवर डोलावहिं । 'माथे छात, रजायसु पावहिं
 उलटि वहा गगा कर पानी । सेवक-बार धाइ जो रानी
 का अस कस्ट कीन्ह तुम्ह, जो तुम्ह करत न छाज ।

अग्या होइ बेगि सो, जीउ तुम्हारे काज' ॥ १६ ॥

कही रोइ पदमावति वाता । नैनन्ह रक्त दीरज जग राता
 'तुम गोरा बादल ग्वंभ-देऊ । जम रन पारथ धौर न कोऊ
 दुख वरखा अब रहै न राखा । मूल पतार, सरग भइ साखा
 तेहि दुख लेव विरिछ बन बाढे । सीस उघारे रोवहि ठाढे

पुहुमि पूरि, सायर दुख पाटा । कौडी केर वेहरि हिय फाटा
 घेहरा हिये मजूर क प्रिया । बेहर नाहिँ मोर पाहन-हिया
 पिय जेहि वदि जोगिनि होइ धावौं । हौ वँदि लेउँ, पियहि मुकरावौं
 सूरुज गहन-गरासा, कँवल न वैठै पाट ।

महँ पद्य तेहि गवनव, कत गए जेहि वाट' ॥ १७ ॥

गोरा बादल दोउ पसीजे । रोवत रुहिर बूडि तन भीजे
 'हम राजा सो उहै कोहँने । तुम न मिलौ, धरिहै तुरकाने
 जो मति सुनि हम गए कोहँई । सो निग्रान हम्ह माथे आई
 जौ लागि जिउ, नहिँ भागहिँ दोऊ । स्वामि जियत कत जोगिनि होऊ
 उए अगस्त हस्ति जन गाजा । नीर घटे घर आइहि राजा
 बरपा गए, अगस्त जो दीठिहि । परिहि पलानि तुरगम पीठिहि
 वेधौ राहु, छोडावहुँ सूरु । रहै न दुख कर मूल अँकूरु
 सोइ सूर, तुम ससहर, आनि मिलावौं सोइ ।

तस दुख महँ सुख उपजै रैन माहँ दिन होइ' ॥ १८ ॥

लीन्ह पान बादल श्री गोरा । 'कोहि लेइ देउँ उपम तुम्ह जोरा?
 तुम सावत, न सरवरि कोऊ । तुम हनुवत अँगद मम दोऊ
 तुम अरजुन श्री भीम भुवारा । तुम बल रन दल मडनहारा
 राम लखन तुम दैत-सँघारा । तुमही घर बलभद्र भुवारा
 तुमहि युधिष्ठिर श्री दुरजोधन । तुमहि नील नल दोउ सयोधन
 तुम परदुन्न श्री अनिरुध दोऊ । तुम अभिमन्यु बाल सब कोऊ
 तुम्ह सरि पूज न विक्रम साके । तुम हमीर हरिचँद सत अँफे

जस अति सकट पडवन्ह भयउ भीवँ वँदिछोर ।

तस परवस पिउ काढहु, राखि लेहु भ्रम मोर' ॥ १६ ॥

गोरा धादल वीरा लीन्हा । जस हनुवँत अगद घर कीन्हा
 'कँवल-चरन भुइँ धरि दुख पावहु । चढि सिंघासन मँदिर सिंघावहु'
 सुनतहि शूर कँवल हिय जागा । केसरि-वरन फूल हिय लागा
 जनु निसि मँहँ दिन दीन्ह देखार्ई । भा उदोत, मसि गई विलाई
 बादल केरि जसोवै माया । आइ गहेसि बादल कर पाया
 'बादल राय, मोर तुइ वारा । का जानमि कस होइ जुभारा
 बादमाह पुहुमी-पति राजा । सनमुख होइ न हमीरहि छाजा
 जहा दलपती दलि मरहि, तहाँ तोर का काज ? ।

आजु गवन तोर आवै, बैठि मानु सुख राज' ॥ २० ॥

'मातु, न जानसि बालक आदी । है बादला सिंघ रनवादी
 सुनि गज-जूह अधिक जिउ तपा । सिंघ क जाति रहै किमि छपा?
 तौलगि गाज, न गाज सिंघेला । साँह साह साँ जुरौ अकेला
 को मोहि साँह होइ मैमता । फारौ सूँड, उरारौ दता
 जुरौ स्वामि सँकरे जस ढारा । पेलौ जस दुरजोधन भारा
 अगद कोपि पाँव जस राखा । टेकौ कटक छतीसौ लारखा
 हनुवँत सरिस जघ वर जोरौ । दहौ समुद्र, स्वामि-बँदि छोरौ
 मां तुम, मातु जसोवै, मोहि न जानहु वार ।

जहँ राजा बलि वॉधा छोरौ पैठि पतार' ॥ २१ ॥

बादल गवन जूझ कर साजा । तैसहि गवन आइ घर बाजा
 का चरनाँ गवने कर चारू । चद्रवदनि रचि कीन्ह सिंगारू

मानि गवन सो घूँघुट काढी । विनवै आइ चार भइ ठाढी
 मुख फिराइ मन अपने रोसा । चलत न तिरिया कर मुख दीसा
 तन धनि जिहँसि कहा गहि फेटा । 'नारि जो विनवै कत न भेटा
 आजु गवन है आई, नाहाँ, । तुम न, कत, गवनहु रन माहाँ'
 वनि न नैन भगि देखा पीऊ । पिउ न मिला धनि साँ भरि जीऊ

पायँन्ह धरा लिलाट धनि, 'विनय मुनहु, हो राय' ।

अलक परी फँदवार होइ, कैमेहु तजै न पाय ॥ २२ ॥

'छाँडि फेट धनि' वादल कहा । 'पुरुष-गवन वनि फेट न गहा
 जौ तुइ गवन आइ, गजगामी । गवन मोर जहँवाँ मार स्वामी
 जौ लागि राजा छूटि न आवा । भावै वीर, सिंगार न भावा
 तिरिया भूमि खडग कै चेरी । जीत जो खडग होइ तेहि केरी
 जेहि घर खडग मोछ तेहि गाढी । जहाँ न खडग मोछ नहि दाटी
 तव मुहँ मोछ, जीउ पर खेलों । स्वामि-काज इद्रामन पेलों
 पुरुष वानि कै टरें न पाछू । दमन गयद, गीउ नहिँ काछू

तुइ अबजा, धनि, कुमुधि उधि, जानै काह जुभार ।

जेहि पुरुषहि हिय वीर रम, भावै तेहि न सिंगार' ॥२३॥

एकौ विनति न मानै नाहाँ । आगि परी चितउर धनि माहाँ
 उठा जो धूम नैन करवाने । लागे परै आसु भरराने
 भोजे हार, वीर, हिय चोली । रही अछूत कत नहिँ खाली
 'जौ तुम कत, जूझ जिउ काँधा । तुम किय माहस, मैं सत बाँधा
 रन सग्राम जूझि जिति आवहु । लाज होइ जौ पीठि देगावहु'

मैं वैठि बादल औ गौरा । सो मत कीज परै नहि भौरा
जस तुरकन्ह राजा छर साजा । तस हम साजि छोडावहि राजा
पुरुष तहा पै करै छर जहँ बर किए न आँट ।

जहाँ फूल तहँ फूल है, जहाँ काँट तहँ काँट ॥ २४ ॥

सोरह सै चडोल सँवारे । कुँवर सजोइल कै वैठारे
पदमावति कर सजा विवानू । वैठ लोहार न जानै भानू
रचि विवान सो साजि सँवारा । चहुँ दिसि चँवर करहि सब ढारा
साजि सबै चडोल चलाए । सुरँग ओहार, मोति बहु लाए
भए सँग गौरा बादल बली । कहत चले पदमावति चली
हीरा रतन पदारथ भूलहि । देखि विवान देवता भूलहि
सोरह सै सँग चली सहेली । कँवल न रहा, और को बेली ?
राजहि चली छोडावै तहँ रानी होड ओल ।

तीस सहस तुरि रिचि सँग, सोरह सै चडोल ॥ २५ ॥

राजा वैदि जेहि के सौपना । गा गौरा तेहि पहुँ अगमना
टका लाख दस दीन्ह अँकोरा । विनती कीन्हि पायँ गहि गौरा
विनवा वादसाह सौ जाई । अब रानी पदमावति आई
'विनती करै आड हँ दिखी । चितउर कै मोहि स्यो है किछी
विनती करै जहो है पूँजी । सब भँडार कै मोहि स्यो कुँजी
एक धरी जौ अग्या पावौ । राजहि सौपि मँदिर महँ आवौ'
तब रखवार गए सुलतानी । देगि अँकोर भए जस पानी
लीन्ह अँकोर हाथ जेहि जीउ दीन्ह तेहि हाथ ।

जहाँ चलावै तहँ चलै, फरे फिरै न माथ ॥ २६ ॥

लोभ पाप के नदी अँकोरा । सत्त न रहै हाथ जौ वोरा
 जहँ अँकोर तहँ नीक न राजू । ठाकुर केर बिनासै काजू
 भा जिउ धिउ रखवारन्ह केरा । दरब लोभ चडोल न हेरा
 जाइ माह आगे सिर नावा । 'ए जगसूर, चाँद चलि आवा
 जावत हैं सब नग्नतराई । सोरह सै चडोल सो आई
 चितउर जेति राज कै पूँजी । लेइ सो आइ पदमावति कूँजी
 बिनती करै जोरि कर खरी । लेइ सौँपौं राजा एक घरी
 इहा उहाँ कर स्वामी दुअौ जगत मोहिं आस ।

पहिले दरस देखावहु तौ पठवहु कैलास' ॥ २७ ॥

आग्या भई, जाइ एक घरी । छूँछि जो घरी फेरि विधि भरी
 चलि विमान राजा पहुँ आवा । संग चडोल जगत सब छाग
 पदमावति के भेस लोहारू । निकसि काटि वैदि कीन्ह जोहारू
 उठा कोपि जस छूटा राजा । चढा तुरग, सिंघ अम गाजा
 गोरा घादल साँढै फाढे । निकसि कुँवर चढि चढि भए ठाढे
 तीख तुरग गगन सिर लागी । केहुँ जुगुति करि टेकी वागी
 जो जिउ उपर सडग सँभारा । मरनहार सो सहसन्ह मारा
 भई पुकार साह सौँ, 'ससि औ नयत सो नाहिं ।

छर कै गहन गरासा, गहन गरासे जाहिं' ॥ २८ ॥

लेइ राजा चितउर कहँ चले । छूटेउ सिंघ, मिरिग खलमले
 चढ साहि, चढिलाग गोहारी । कटक असूभ परी जग कारी
 फिरि गोरा घादल सा रुहा । 'गहन छूटि पुनि चाहै गहा
 चहुँ दिसि आवै लोपत भानू । अब इहै गोद, इहै मैदानू

मैं वैठि वादल औ गोरा । सो मत फीज परं नहि भोरा
जस तुरकन्ह राजा छर साजा । तस हम साजि छोडावहि राजा
पुरुष तहा पै करै छर जहँ वर किए न आँट ।

जहाँ फूल तहँ फूल है, जहाँ काट तहँ काँट ॥ २४ ॥

सोरह सै चडाल सँवारे । कुँवर मजोइल कै वैठारे
पदमावति कर सजा विवानू । वैठ लोहार न जानै भानू
रचि विवान सो साजि सँवारा । चहुँ दिसि चँवर करहि सब ढारा
साजि सबै चडाल चलाए । सुरँग ओहार, मोति बहु लाए
भए सँग गोरा वादल वली । कहत चले पदमावति चली
हीरा रतन पदारथ भूलहि । देखि विवान देवता भूलहि
सोरह सै सँग चली सहेली । कँवल न रहा, और को वेली ?

राजहि चली छोडावै तहँ रानी होइ ओल ।

तीस सहम तुरि पिरिँ सँग, सोरह सै चडाल ॥ २५ ॥

राजा वँदि जेहि के सौपना । गा गोरा तेहि पहुँ अगमना
टका लार दस दीन्ह अँकोरा । विनती कीन्हि पायँ गहि गोरा
विनवा वादसाह सौं जाई । अब रानी पदमावति आई
'विनती करै आई हौं दिखी । चितउर के मोहि स्यो है किल्ली
विनती करै जहो है पूँजी । सब भँडार के मोहि स्यो कुँजी
एक घरी जौ अग्या पावौ । राजहिँ सौपि मँदिर महँ आवौ'
वब रग्वार गण सुलतानी । देखि अँकोर भए जस पानी
लीन्ह अँकोर हाथ जेहि जीउ दीन्ह तेहि हाथ ।

जहाँ चलावै तहँ चलै, फेरे फिरै न माथ ॥ २६ ॥

लोभ पाप के नदी अँकोरा । सत्त न रहै हाथ जौ वोरा
जहँ अँकोर तहँ नीक न राजू । ठाकुर केर बिनासै काजू
भा जिड धिड रखवारन्ह केरा । दरब लोभ चडोल न हेरा
जाइ माह आगे सिर नावा । 'ए जगसूर, चाँद चलि आवा
जावत हैं सब नग्नत तराई । सोरह सै चडोल मो आई
चितउर जेति राज कै पूँजी । लेइ सो आइ पदमावति कूँजी
बिनती करै जोरि कर खरी । लेइ साँपौ राजा एक घरी
इहा उहाँ कर स्वामी दुऔ जगत मोहिं आस ।

पहिले दरस देखावहु तौ पठवहु केलास' ॥ २७ ॥

आग्या भई, जाइ एक घरी । छूँछि जो घरी फेरि विधि भरी
चलि विवान राजा पहुँ आवा । संग चडोल जगत सब छाना
पदमावति के भेस लोहारू । निकसिकाटि वैदि कीन्ह जोहारू
छा कोपि अस छूटा राजा । चढा तुरग, सिंघ अन्न गाजा
गोरा घादल खाँडै काढे । निकसिकुँवर चढि चढि भए ठाढे
तीख तुरग गगन सिर लागा । केहुँ जुगुति करि टेकी घागा
जो जिड ऊपरराडग सँभारा । भरतहार सो सहमन्ह मारा
भई पुकार साह माँ 'ससि औ नखत सो नाहिं ।

छर कै गहन गरासा, गहन गरासे जाहिं' ॥ २८ ॥

लेइ राजा चितउर कहँ चले । छूटेउ सिंघ, मिरिग सलभले
चढ साहि, चढि लाग गोहारी । कटक असूभ परी जग कारी
फिरि गोरा घादल सौँ कहा । 'गहन छूटि पुनि चाई गहा
चहुँ दिसि आवै लोपत भानू । अब इहै गोइ, इहै मीदानू

लेइ हाँकि हस्तिन्ह कै ठटा । जैसे पवन विदारै घटा
जेहि मिर देइ कोपि करवारु । स्यो वोडे दूटै असवारु
लोटहि सीस कबध निनारे । माठ मजीठ जनहुँ रन ढारे
खेलि फाग सँदुर छिरकावा । चाँचरि खेलि आगि जनु लावा
हस्ती घेड धाइ जो धूका । ताहि कीन्ह सो रुहिर भभूका
भइ अग्या सुलतानी, 'वेगि करट्टु एहि हाथ ।

रतन जात है आगे लिए पदारथ साथ' ॥ ३४ ॥

मवै कटक मिलि गोरहि छेका । गूँजत सिंघ जाइ नहि टेका
सरजा धीर सिंघ चढि गाजा । आइ सौँह गोरा सौँ बाजा
पहुँचा आइ सिंघ असवारु । जहाँ सिंघ गोरा बरियारु
वहि क गरजि सिंघ अस धावा । सरजा सारदूल पहुँ आवा
सरजै लीन्ह साँग पर घाऊ । परा खडग जनु परा निहाऊ
तब सरजा कोपा बरिवडा । जनहुँ सदूर केर भुजदडा
कोपि गरजि मारेसि तस बाजा । जानहुँ परी दूटि सिर गाजा
गोरा परा खेत महुँ, सुर पहुँचावा पान ।

घादल लेइगा राजा, लेइ चितउर नियरान ॥ ३५ ॥

पदमावति मन रही जो भूरी । सुनत सरोवर-हिय गा प्री
अद्रा महि-टुलास जिमि होई । सुख सोहाग आदर भा सोई
राजा जहा सूर परगासा । पदमावति मुख-कँवल विगासा
कँवल पायँ सूरुज के परा । मूरुज कँवल आनि सिर घरा
'पूजा कौनि देउं तुम्ह राजा ? मवै तुम्हार, आव मोहि लाजा

तन मन जोवन आरति करऊँ । जीव काढि नेवछावरि धरऊँ
पथ पूरि कै दिति विछावौ । तुम पग धरहु, सीस मैं लावौ
जौ सुरज सिर ऊपर, तौ रे कूवल सिर छात ।

नाहि त भरे मरोवर, सूखे पुरडन-पात' ॥ ३६ ॥

परसि पायँ राजा के रानी । पुनि आरति वादल कहँ आनी
पूजे वादल के भुजदडा । तुरख के पावँ दाब कर-खडा
'यह गजगवन गरज जो मोरा । तुम्ह राखा, वादल औ गोरा
मँदुर-तिलक जो आंकुस अहा । तुम्ह राखा माथे तौ रहा
काछ काछि तुम जिउ पर खेला । तुम्ह जिव आनि मँजूपा मेला
राखा छात, चवँर औधारा । राखा छुट्टधट-भनकारा
तुम हनुवँत होइ धुजा पईठे । तव चितउर पिय आइ वईठे'
पुनि गजमत्त चढावा, नेत निछाई खाट ।

वाजत गाजत राजा, आइ बैठ सुखपाट ॥ ३७ ॥

सुनि देवपाल राख कर चालू । राजहि कठिन परा हिय सालू
'दादुर कतहुँ कँवल कहँ पेसा । गादुर मुख न सूर कर देगा
अपने रँग जस नाच मयूरू । तेहि सरि साध करै तमचूरू
जौ लागि आइ तुम्ह गढ बाजा । तौ लागि धरि आनी तौ राजा'
नीद न लीन्हि, रैनिसव जागा । होत विहान जाइ गढ लागा
कुमलनेर अगम गढ बाँका । विपम पथ चढि जाइ न भाँका
राजहि तहाँ गयेउ लेइ कालू । होइ सामुठँ रोपा देवपाल
दुवौ अनी सनमुख भई, लोहा भयेउ असूभ ।

सत्रु जूझि तव नेवरै, एक दुवौ मँ जूझ ॥ ३८ ॥

जौहर भई सब इस्तिरी, पुरुष भए सग्राम ।

बादसाह गढ चूरा, चितउर भा इसलाम ॥ ४३ ॥

मुहमद कवि यह जोरि सुनावा । सुना सो पीर प्रेम कर पावा
जोरी लाइ रक्त कै लोई । गाढि प्रीति नयनन्ह जल भेई
श्री मैं जानि गीत अस कीन्हा । मकु यह रहै जगत महँ चीन्हा
कहों सो रतनसेन अब राजा ? कहा सुआ अस बुधि उपराजा ?
कहाँ अलाउदीन सुलतानू ? कहँ राघव जेइ कीन्ह बरानू ?
कहँ सुरूप पदमावति रानी ? कोइ न रहा, जग रही कहानी
धनि सोई जस कीरति जासू । फूल मरै, पै मरै न बासू

कोइ न जगत जस वेंचा, कोइ न लीन्ह जस मोल ?

जो यह पढै कहानी हम्ह सँवरै दुड बोल ॥ ४४ ॥



टिप्पणी

(१) पदमावती खंड

पौछा १ जोति परकासू = मुसलमानी धर्म में चर माना जाता है कि ईश्वर ने अपनी ज्योति से सज से पहले मुहम्मद को पैदा किया। तेड (तेज) = उती ने। खेदा, खेह = धूल। उरोदा (उछेरा) = चित्रकारी। धरती = पृथ्वी। दिाधर (दिन कर) = सूर्य। तराइन-पाती = तारागण की पक्ति। सीठ = शीत। बीजु (विद्युत्) = बिजुली। दूसर छाज न काटि = दूसरे किसी को जो शोभा नहीं देता है।

दो० २ चाटा = च्यूँटी। ताकर उपराहीं = उसकी दृष्टि जो सद्रके उपर रहती है। उपाई (उत्पद्) = उत्पन्न की, बपजाइ। जियना = जीवन। आसहर (आसधर) = आशा रखनेवाले।

दो० ३ अछत (अछत्र) = छत्र-रहित। छावा = छााना—छत्र धारण कराना। सरवरि = बराबरी, समता। चाँटहि = चाँटा को, च्यूँटी को, 'हि' अवधी की विभक्ति है।

दो० ४ प्रवरन (अवरण) = वर्ण हित। वस्ता (विरक्त) = अलग। सरय बित्रापी = सर्षव्यापी। सिरज्जा = रचना सृष्टि। हुत = था। बेहरा = अलग, पृथक्। विहरना = विदीर्ण होना, फटना, अलग होना। दीठिवत = दृष्टिमान्, दृष्टिवाला।



दोहा < निरमरा = निर्मल । पूनेकरा = पूर्णिमा के ममान कलावाला, ज्योतिमान । सिहिरि = सृष्टि । लेसि = जलाकर । दूसर लिपे = मुसलमानों के कलमा-शरीफ में ईश्वर के नाम के पश्चात् मोहम्मद का नाम आता है (देखो—'लाइलाह इल लिहाह मुहम्मद रसूलिहाह') । पाठत = पाठ, शिक्षा, कलमा जो कुरान में लिखा है । बसीठ = दूत, पैगबर, ईश्वर का दूत । बिधि = ईश्वर । लेस और जोस = लेसा जोसा—हिसाब किताब । त्रिनबर = त्रिनय करेगा । मोस (मोस) = मुक्ति ।

दो० ६ ज्ञान और पाटा = छत्र और पाट (सिंहासन) । दुनी = दुनिया । इसकंदर जुलकरन—मिकदर जुलकरनेवा जुलकरन = एक पट्टी जो सिकदर को दी गई थी । सुलेमां = सुलेमान, एक यहूदी नृप, कहते हैं कि इसके पाम एक थैंगूठी थी जिसके कारण ज्यों ज्यों यह दान देता था त्यों त्यों इसका धन बढ़ता जाता था, यह नृप बड़ा दानी था । सुहताज = मुख देसनेवाला, मुरापेची, याचक ।

दो० ७ अशरफ = सैयद अशरफ जहांगीर चिरती । दीया = दीपक । हीया = हृदय । बोहित = नाव, जहाज, वेडा । कधार (कर्णधार) = नावक, रास्ता देसनेवाला गुरु । दस्तगीर = बर्हि गहनेवाला, रक्षा करनेवाला । निहकलक = निष्कलक । मखदूम = मालिक । दाद = बदा, गुलाम, दास ।

दो० ८ देह कहँ = देने के लिये, दिखाने के लिये । मुरशिद = सीधा मार्ग बतलानेवाला । पीर = गुरु । खेक = खेनेवाला ।

दो० ९ मेहदी = सैयद मुहीबद्दीन, जायसी के मत्र-गुरु । बत-इल = वेग से । रोसन = बज्ज्वल प्रज्वलित, विख्यात ।

सुरररु=सुखरु, तेजमान, जिसका सुग तेजयुक्त हो। लखाण=दिखाया, लघित कराया। मेरइ=मिला लिया। हो (अह)=में। केर-का।

दो० १० एक-नयन=कहते हैं कि जायसी बाईं आँख के अंधे थे। विधि श्रवतारा=ईश्वर ने पैदा किया। सूक=शुक्र नक्षत्र। नखतन्ह=नखत्रों। मार्हा=में। अयहि=आम्र में। जोहति=देरों। जोहना=देगना, प्रतीचा करना।

दो० ११ मिताई=मिश्रता। सरि=बराबरी। उभै=उठी हे। ररिया=बलवान। जुम्हार (युद्ध)=योद्धा। चतुर-दसा=चतुर्दश, चौदह। बिरिछ=वृक्ष। वेद=बैंत। कित्त=क्यो, कहाँ।

दो० १२ पड़लागा=पीछे लगनेवाला, अनुयायी। भँडार=भांडार। तार=तालू। कुँजी=कुजी। घाया=घाव, जखम। छपा=छिपा।

दो० १३ आछै (आस्ते)=है। नियर=समीप। कवि बियास आछै पास=कवि व्यास के समान हो और काव्य रस से पूर्ण हो पर यह आवश्यक नहीं है कि वह उस रस को पाकर उसका संचार कर सके, क्योंकि ऐसा देखने में आता है कि संसार में कुछ वस्तुएँ ऐसी हैं जो दूर रहने पर निकट ही होती हैं और कुछ ऐसी भी हैं जो निकट रहने पर भी दूर हैं जैसे फूल और काँटा, गुड और च्यूँटा, भँवर और कमल, दादुर और कमलगध। इसलिये यह आवश्यक नहीं है कि मैं बड़ा कवि होकर अपनी कथा को रसपूर्ण कर सकूँ, परन्तु जो कुछ कथा है उसे कहता हूँ।

दो० १४ चक्रवै=चक्रवर्ती। यहाँ चक्रवै क्रिया है। चक्रवर्ती के समान राज करता है।

- दो० १५ अमराउ = अमराई, आम्र का घाग । पारौ = सकों ।
पारना = सकना । मिला० बँगला का 'पारवे' ।
- दो० १६ चुहचुही = पक्षि-विशेष, फूलसुँघनी । सारौ = सारिका,
मैना । परेवा = कबूतर । करवरहीं = कलबल करते
हैं । गडुरी = पक्षि-विशेष । भिगराज = एक पक्षी । महरि = पक्षि-
विशेष । कुराहर = कोलाहल । भाप्ता = भापा, धोली ।
- दो० १७ पैग = पग । बावरी (चापी) = बावली । पावरी =
सीढी । गरेरी = चक्रदार, घुमौवा । पखुरिन = पँखडी ।
पाल = बाध ।
- दो० १८ अपूर (आपूर्ण) = भरपूर । पोते = पुता हुआ, लीपा
हुआ । मेद = एक सुगन्धित वस्तु, कस्तूरी । ग्याता = ज्ञाता,
ज्ञाती । गौरा = गोरोचन । संसकिरित = संस्कृत ।
- दो० १९ तरहि करिन्ह = नीचे हाथियो (दिग्गजो) । लोह =
खाई, खटक । सप्त पतारहि = सप्त पाताल । जरे =
जटित, जडे ।
- दो० २० बाजिरथ = रथ और घोडे । चूरु = चूर हो जायँ ।
पाजी (पदातिक) = पैदल । कोतवार = कोतवाल । चपत =
दगाते हुए, रपते हुए । काडे = खुटे हुए, बने हुए । नाहर = सिंह ।
गु जरि = गरज कर । ताई = तक । केवार = केवाड । बसेरा = डेरा ।
- दो० २१ धरियार = घडियाल । डाँड = डडा । भाँडा =
पुतला । बटाऊ (बटुक) = बटोही, मुसाफिर । गजर =
गजल । बजर = वज्र । रहँट = पानी भरने का एक यंत्र ।
- दो० २२ अरुपति = अश्वपति । पत्तान = पापाण । चौपारी =
चौपाल, बैठक । कीरति = कीर्ति ।
- दो० २३ वारा = द्वार । पहारा = पहाड । धूम = धूमिल रंग
के । समुद = समुद्र । रिस लोह चबाहीं = क्रोध से लोहे

की लगाम चनाते हैं। तुखार = तुपार देश के श्वश्रु। रथवाह = रथ को बहन करनेवाले, घोड़े।

दो० २४ दर निसान = दल, सेना का डका। विगसह (विकसति) = विकसित होता है।

दो० २५ उहै = वही। अद्धरीन्ह = अप्सराएँ। जेती = जितनी। वारह बानी = द्वादशवर्णी—सूर्य के समान ज्योतिवाली। बत्तीसो लच्छनी = बत्तीसो लक्षणवाली। खियो के ३२ लक्षण ये हैं—
 (१) नख—रक्तवर्ण (२) पादपृष्ठ—कल्लुप की पंक्ति जैसा। (३) गुल्फ—गोल। (४) पैर की अँगुली—अविरल। (५) पैर का तलवा—लाल, शुभ चिह्न युक्त। (६) जघा—गोल, चढ़ाव-उत्तारवाला। (७) जानु—घरावर, सुढौल। (८) उरु—अविरल। (९) भग—पीपर-पत्र सी। (१०) भग का मध्य भाग—गुप्त (११) पेड़—कूर्मपृष्ठवत्। (१२) नितम्ब—मासल, मास-युक्त। (१३) नाभि—गमीर। (१४) नाभि का ऊपरी भाग—सिक्की-युक्त। (१५) स्तन—मम, गोल, कठोर। (१६) पेट—मृदु, लोम-रहित। (१७) ग्रीवा—कडु-वत्। (१८) श्रोत्र—लाल। (१९) दाँत—कुदवत्। (२०) वाणी—मधुर (२१) नासिका—सीधी, उँची। (२२) नेत्र—कजवत् (२३) भौह—धनुषवत्। (२४) ललाट—अर्द्धचन्द्रवत्। (२५) कान—कोमल। (२६) केश—नीले, सटकारे, सुकुमार। (२७) शीश—सुढौल। (२८) कलाई—गोल, कोमल। (२९) हथेली—रक्तवर्ण, शुभ लक्षण युक्त। (३०) बाहु—सुढौल। (३१) मणिबंध—नीचे को दया हुआ। (३२) हाथ की अँगुली—पतली, सुढौल।

दो० २६ मलोनी = सुदर । बरा = प्रदीप्त हुआ, जला ।
घट = उदर । श्रोटर = उदर, गर्भ । अवधान = गर्भ ।
उपना = उत्पन्न हुआ ।

दो० २७ हुति (हुँतो) = से । घाटि = कम । छीन = क्षीण ।
निरमई (निर्मित) = निर्माण किया ।

दो० २८ छठिरात्री = छठी की रात । विहान (विभात) =
प्रभात, सवेरा । अरथाणु = अर्थ किया । बेगारी = बैठाया ।
श्रोनाहीं = आवे, भुकेँ । बरोक = बरेखी, बररचा, विवाह ।

दो० २९ सँयोग सयानी = विवाह के योग्य । कोई =
कुमुदिनी । सोहागहि = सोहागा में । सासतर = शास्त्र ।

दो० ३० वनत = श्रोतत, यौवनभार से मुकी । वेधा = विद्ध
हुआ, फैला । दुहज = द्वितीया का चद्रमा । कनक
जँभीरा = सोनहला नीबू ।

दो० ३१ मोहि = मेरे लिए । आंगि लगावहि = आंस
लगाना, किस्ती की ओर देखना, किस्ती पर अनुग्रह आना ।
अनगा = मदन । अग्या = आज्ञा ।

दो० ३२ उआ = जगा । सुजान = सजान, बुद्धिमान् ।
दारिँ = दाडिम, अनार । दास = द्राचा, थगूर ।

दो० ३३ उतर = उत्तर । उबारा = उद्धार । माया = प्रेम ।
परेवा = पछि । धोख न लाग = बोसा नहीं लगा, चुक
नहीं हुई । हिये घालि = हृदय में डालकर । केइ = किसो ।
खुरक = खुटका । करिया = कर्णधार, केवट ।

दो० ३४ सारी = साडी, वख । बाद मेलि = बाद लगाकर,
। घाजी लगाकर । हेरे = हूँढ़ने ।

दो० ३५ परसे = स्पर्श किया । श्रोप = काति । भा = हुआ ।

दो० २६ मजारी = मार्जारी । ताकि = देखकर । भुकदाता = भोजन देनेवाला । तुई = तूने । मोग = शोक । विछोड़ = बियोग । सुमिरना = स्मरण ।

दो० २७ पहुँ = पास । छूँ छा = खाली । गहने गही = ग्रहण लगा । पाल = राध । अर्सु = अश्रु । ऊपू = उगे । चिहुर (चिहुर) = गाल, केश । मँकेत = सँकरा, सखीर्य । सुग्रटा = शुक, सुधा । दहुँ = (संदिग्धवाचक सर्पनाम) क्या ?

दो० २८ पँली = पत्नी (शुक) । लहि = लौ, तक । थंदि = कैद । उटान-फर = उटने का फल । केतन = कितनी । गाड = कठिन, तग ।

दो० २९ विवाध = व्याध । टाटी = टट्टी, आड । डेली = डलिया, टोकरा । एरभरही = एडबड करते ह । चारा = दाना, भोजन । चिरिऱार = चिड़ीमार । लासा = जिससे पत्नी फँसाते हैं । बिल = बिप । धाम्ना = विद्ध हुआ, फँसा ।

दो० ४० आड लाइ = टट्टी लाकर, टट्टी की आड में । जिवलेवा = जीव लेनेवाला । तिसना = तृष्णा, लोभ, लालच । खाधू = पाव । अरपाना = अरपना । मस्ट = मौन ।

(२) रतनसेन खंड

दो० १ चारा = बालक, पुत्र । श्रोहि लागि = उसके बिये । पारखी = परखनेवाले, जौहरी ।

दो० २ त्रेपारी = व्यापारी । रिन = शृणु । बेमाहना— (व्यवसाय) = खरीद फरोख्त । माठि = पूँजी, धन ।

दो० ३ मूरै = निष्फल, व्यर्थ । अनिज = वाणिज्य । कुदानी, (कु + वाणिज्य) = बुरा व्यापार । मूर = मूलधन, पूँजी ।

- दो० ४ मँजूसा = मजूषा, पेढारी। परमँस = पराये का मास। खाधू = खानेवाले।
- दो० ५ काँठा = कठा, गले में लाल लकीर।
- दो० ६ रजाइ = राजाज्ञा। निरारा = अलग। जोहारा = प्रणाम किया, श्रादर किया। मेरवो = मिलाऊँ।
- दो० ७ चीन्हा = पहचाना। अगाहु = अगाध, गभीर।
- दो० ८ नार्हा = नाथ को। श्रोपनवारी = चमकनेवाली, सुदर। आन = कसम, शपथ।
- दो० ९ आगरि = बढ चढकर। विलोनि = लावण्य-रहित। लोनी = सुदर। पुहुप = पुष्प। सेधे = सुगध।
- दो० १० अँकूरू = अकुर। पाला = पाला हुआ, पोसा हुआ। साखी = साचि, गवाह। तमचूरू (ताम्रचूड) = मुर्गा।
- दो० ११ बिसरामी = विश्राम देनेवाला, मनोरजन करनेवाला। तुरय..... जाए = घोडे का रोग बंदर के सिर मढना। कहते है कि यदि अस्तबल में बंदर रखा जाय तो घोडे का रोग बंदर के सिर जाता है और वे नीरोग रहते है।
- दो० १२ हतियार = हत्यारा।
- दो० १३ विक्रम पछिताना = कथा है कि राजा विक्रम के यहाँ एक शुक था, उसने उन्हें एक दिन एक फल दिया जिसके खाने से वृद्ध युवा हो जाता था। राजा ने वह फल रखवा दिया। किसी साँप ने आकर उसमें अपना मुँह लगा दिया। दूसरे दिन राजा ने वह फल खाने के लिये मँगवाया। मंत्रियो ने सलाह दी कि बिना परीखा किए इसे खाना ठीक नहीं। फल का एक टुकड़ा एक जानवर को खिलाया गया। वह मर गया। राजा ने क्रुद्ध होकर तोते को मरवा डाला। पीछे वह फल फेंक दिया गया। कुछ दिन बाद उसके बीज से एक पेड़ तैयार हुआ और उसमें फल लगने लगा।

एक दिन एक बूढ़े आठमी ने मरने की इच्छा से उसके फल को विपैला ममकर रखा। मरने के बदले वह युवा हो गया। राजा को यह बात मालूम हुई। वह अपनी गलती से तोते के मारे जाने पर पछताने लगा। कहते हैं कि इस तोते का नाम भी 'हीरामन' था।
मर्ती = नागमती। गहन = ग्रहण। दोहाग (दुर्भाग्य) = अभाग्य।
परहेली = अवहेलना की गई। नाह = नाथ।

दो० १४ रिम ईर्ष्या) = क्रोध। मरम = मम, भेद।

दो० १५ सँवर (शालमली) = सेमल। भूआ = भूई। दुआ दस = द्वादश। कठा फूट = जब तोते के गले के चारों ओर रक्तवर्ण चूड़ी सी लकीर पड़ जाती है तब लोग कहते हैं कि वे अच्छी तरह से बोलते हैं। गला खुलना। सर्वैरा = स्मरण करूँ। हरियर = हरा।

दो० १६ भा कली = अभी व्याही है कि कुँआरी।

दो० १७ राता (रक्त) = लाल। पेम = प्रेम। फाँद = फदा। दुहेला = दुख देनेवाला, दुखदाई। मेरवै = मिलावे।

दो० १८ बिसहर = विपधर। कोंवर = कोमल। लहरन्ह = लहर लेते हैं। सँकरै (श्र खला) = सीकर, जजीर। फँदवार = फदेवाले। गिड (ग्रीव) = गला। कुरी = कुल।

दो० १९ परगसी = परगटी, प्रगट हुई। रुहिर = रुधिर। करवत (करपत्र) = आरा। पूरि = पिरोकर। सोती = सोता, धार। करवत तपा = योगी लोग तीर्थ-स्थानों पर आरे से अपने को चिरना डालते थे। काशी में भी लोग इस तरह 'करवट' लेते थे। गांग = गंगा।

- दो० २० जोती = ज्योति । श्रोति = उतनी । गहासा = गरासा । ध्रुव = ध्रुव तारा । चक्र = चक्र, आस्र ।
- दो० २१ भवा = भ्रमा । अपसर्वा (अपसर्पण) = भागना । श्रदार = पाल, बांध ।
- दो० २२ शनी = सेना । हिरकाइ = लगा । हिरकाना = हृदय से लगाना । बिब = बिबाफल । रम = रमा हे ।
- दो० २३ अरहि चाखे = अभी अविवाहित है । बतीसी = दांत । निरमई = निर्मित हुई । छरकि = छटक । दरहि तडक कर ।
- दो० २४ कौघा = बिजुली । लौकहि = देखाई पडते है । कजु = शर । रीसी = ईर्ष्या करनेवाले, प्रतिद्व द्वी । कुई फेरि = खराद पर चढा कर । पुछार (पुच्छ) = पूँछवाला, मोर । सकारे = सपेरे । कंठसिरी (कंठी) = एक प्रकार का गले का आभूषण ।
- दो० २६ भाई (अमित) = फेरी हुई, घुमाई हुई । गाम (गर्भ) = दल, कोमल पत्ते । वेडिन = नाचनेवाली, बीडा लेनेवाली, पातुरी । लारु = लड्डू । कचोर = कचोल, कटोरी । जँभीर = एक प्रकार का नीबू । वारी = कन्या, फुलवारी, याटिका । मरोरत = मलते हुए ।
- दो० २७ कुईकुई = कुमकुम, रोली । काछे = बनी ठनी, विभूषित । कारी = काली ।
- दो० २८ पहुमि = पृथ्वी । मीनी (सीण) = पतली । भँवै = भ्रमै । तीवइ = स्त्री की । फेरि जनु लाए = मानो उलट कर लगाए हे ।
- दो० २९ विसँभारा (वि + सँभारा) = बेसुध । खिनहि = क्षण में । तरासहि = आस देते हैं ।

दो० ३० जावत = बहुत से, नितने । गारडी = सर्प का विष उतारनेवाले । वावर (गतुल) = पागल । थहुठ = माटे तीन ।

दो० ३१ जेई = जीवा, भोजन किया । पोई = पकाई हुई । कोड = कुमुदिनी । साधन्ह = साध से, इच्छा से ।

दो० ३२ हेराई = खो जाय । सुल्गाइ लेइ = प्रज्वलित करले ।

दो० ३३ रघछाला = व्याघ्रचर्म । किगरी = एक बाजा, छोटी सारंगी ।

दो० ३४ गनक (गण-क) = ज्योतिषी । मरेसा = चतुर, सज्ञान । सर्दिया = डैडी पीटनेवाला । कट्फाई = सेना की तैयारी । माया = माता । लच्छि (लक्ष्मी) = स्त्री । परिग्रह (परिग्रह) = नौकर चाकर ।

दो० ३५ निग्रान = निदान, अत में । पोखि (पोषण) = पाल करके । पिरीता = प्यारे । अहियात = सोहाग, सौभाग्य ।

दो० ३६ मते = राय ले, बात मानै । लेसा = समान । गिड अमरन = श्रीवाभरण, गले का आभूषण ।

दो० ३७ गांय = ग्राम । मगुनियै = मगुन विचारनेवाले गोहराई (गोहरण) = पुकारा ।

दो० ३८ पोरी = पाँवरी, सडाऊँ । शंकरोरी = शंकरौड = ककटी । दडाकरन = दडकारण्य । धीम् = (विजन),

निर्न ।

दो० ४० सीम पर मागा = आपकी आज्ञा सिर पर हे । कौडिया = पक्ष विशेष, कौडिला (King fisher)

दो० ४१ दत्त = दान । भरम = भ्रम । पेले = तेजी से चले । ठाटी = समूह ।

- दो० २२ सुफल लागि = अच्छे फल के लिये । जन्म . .
 भीजा = जन्म भर यदि भीगे तो भी पानी उसके अंदर न
 जाय । तरैदा = तैरनेवाला, तराक ।
- दो० २४ कुस्टि = कोढी । धनि = धन्या, छा, नारी ।
- दो० २५ बिलमांवा = बिलच किया, भरमाया । निस्तर =
 निस्तर, छुट्टी । अधजर = आधा जला ।
- दो० २६ आंचर = अंचल । तो पहुँ = तुम्हारे पास । अछरी =
 अप्सरा ।
- दो० २७ निहचै = निश्चय । डभकहि = डबडगाते हे, जल-
 पूर्ण होते हे । परगट = प्रकट करते हैं । सूत = सूत्र ।
- दो० २८ मयारू = दयालु, मया, प्रेम, स्नेह । शोका = उसको ।
 सित्रलोका = शिवलोक, स्वर्ग । धांक = धांका, सुदर ।
 कोटवारा = कोतवाल, रक्षक । मरजिया = जीविकिया, वह मनुष्य जो
 समुद्र में गोता लगाकर मोती आदि निकालता है ।
- दो० २९ ताल कै लेता = ताड के समान ऊँचा । गुटेका =
 गुटिका, गोली । परी हूल = शोर हुआ, हल्ला मचा ।
- दो० ३० जुगुति (युक्ति) = अवसर, ढग । भुगुति = भिन्ना,
 भोजन । वार = द्वार, रास्ता । घोरा = ओर से, तरफ से ।
 साखि = साधि । निहोरा = लिये, वास्ते ।
- दो० ३१ रीसा (ईर्ष्या) = क्रोध । धरती चाटा = पृथ्वी पर
 रहकर आममान चाटना । मिलाधो—रहे भूईं चाटे बादर ।
 अस्ति नास्ति = बनाना, बिगाडना, सृष्टि और प्रलय । नारा =
 देर । छारा = धूल । नप = भुके, नष्ट हुए । कोह = क्रोध ।
- दो० ३२ वसिउन्ह = दूत । ठाँव = स्थान । मापे (अमर्ष) =
 अमर्ष हुआ, क्रुद्ध हुए । सँजोउ = युद्ध की तैयारी ।
 पति = प्रतिष्ठा, शान, इज्जत । माखू = मोच । दोखू = दोष । जोगी

ऐले = बिना गये योगी कहाँ रहते हैं । आछे = रहने । भस्त्र
= भक्षण ।

दो० ३३ मर्झी (मध्य) = बीच में पड़नेवाला, केवट,
राम्ना दिसानेवाला । राती = रक्त, लाल । नाठा = नष्ट ।

मसि = स्याही ।

दो० ३४ राती = अनुरक्त । वसदर = वैश्वानर, अग्नि ।

दो० ३६ ताती = तप्त, जलती हुई । पवारी = फेंक ।

दो० ३७ हो = मैं । थिर = स्थिर, निश्चल । अगी = घोली ।
भोरी = भोली । घाला = ढाला ।

दो० ३८ केत = केतकी । महुँ = मैं भी ।

दो० ३९ भूरा = दुखित हुआ । वूरा = ढेर । केवा = केतकी ।
सामि = स्वामि ।

दो० ४० पाति = पत्र । बेहराना = थलग हुआ । सँभारा
(स्मृ) = स्मरण किया । मँधि (सधि) = नकर ।

दो० ४१ राध = परिपक्व, बुद्धि में परिपक्व । अपसवहि
(अपसरण) = जायँ । छरहि = छल्लें, छल करें । छर =
छल । बसाई = बस ।

दो० ४२ गुदर = गुजारिश, जिनय । कटक = सेना । जूका
= युद्ध । गाढ = कष्ट । सोह = सामने ।

दो० ४३ विसमो = विस्मय, दुःख । नास्ती = नष्ट हुई ।

दो० ४४ इतराहीं = इतराते हैं । तरा = तर जाऊँ । कर-
वत (करपत्र) = थारा ।

दो० ४५ बिहानी = मरेरा हुआ, ध्यतीत हुई ।

दो० ४६ गरास्ती = ग्रसित हुई । निसम = निश्चाम लेकर ।
गहेली (गृहीत) = ग्रसी हुई ।

दो० ४७ उवेली = उधाड़ी । म्हापा = ढपा हुआ । बस = नेत्र ।

- दो० २२ सुफल लागि = अच्छे फल के लिये । जन्म . ..
 भाँजा = जन्म भर यदि भीगे तो भी पानी उसके अदर न
 जाय । तरेंदा = तैरनेवाला, तैराक ।
- दो० २४ कुस्टि = कोढी । धनि = धन्या, छा, नारी ।
- दो० २५ बिलमाँवा = विलब किया, भरमाया । निस्तर =
 निस्कार, छुष्टी । अधजर = आधा जला ।
- दो० २६ आचर = अचल । तो पहुँ = तुम्हारे पास । अछरी =
 अप्सरा ।
- दो० २७ निहचै = निश्चय । डभकहि = डबडवाते है, जल-
 पूर्ण होते हे । परगट = प्रकट करते हैं । सून = सूत्र ।
- दो० २८ मयारु = दयारु, मया, प्रेम, स्नेह । श्रोका = उसको ।
 सिवलोका = शिवलोक, स्वर्ग । बाँक = बाँका, सुदर ।
 कोटपारा = कोतवाल, रक्षक । मरजिया = जीविकिया, वह मनुष्य जो
 समुद्र मे गोता लगाकर भोती आदि निकालता है ।
- दो० २९ ताल के लेखा = ताड के समान ऊँचा । गुटेका =
 गुटिका, गोली । परी हूल = शोर हुआ, इल्ला मचा ।
- दो० ३० गुगुति (युक्ति) = अवसर, ढग । मुगुति = भिजा,
 भोजन । धार = द्वार, रास्ता । शोरा = शोर से, तरफ मे ।
 साखि = साधि । निहोरा = लिये, वास्ते ।
- दो० ३१ रीमा (ईर्ष्या) = क्रोध । धरती चाटा = पृथ्वी पर
 रहकर आसमान चाटना । मिलाओ—रहे भूईं चाटे बादर ।
 अस्ति नास्ति = बनाना, विगाड़ना, सृष्टि और प्रलय । धारा =
 देर । धारा = धूल । नए = भुके, नए हुए । कोह = क्रोध ।
- दो० ३२ वसिठ्ण्ह = दूत । ठाव = स्थान । माखे (अमर्ष) =
 अमर्ष हुआ, कुद्ध हुआ । सँजोउ = युद्ध की तैयारी ।
 पति = प्रतिष्ठा, शान, इज्जत । मोख = मोघ । दोख = दोष । जोगी

- दो० १० हुतें = से ।
- दो० ११ रसना = जिह्वा, जगन । करमहि = कर्म में । पति =
मालिक, स्वामी ।
- दो० १२ यरोक = बरच्छा, वरदक्षिणा, फूलदान । ओनाहँ =
उमगयुक्त ।
- दो० १३ सगरी (सकल) = सब । गोहने = माथ में ।
मसियार = मशाल । ताई = तक्, पाय ।
- दो० १४ चित्तर-मारी = चित्रमारी । बैसारा = बैठाया । पसरे =
फैलाये थे । पनवार = पत्तल, पुरइन के पत्ते की पत्तल ।
खँडपानी = खाँड + पानी, शरवत, रम । थरगजा = चदन । कुँहकुँह
= कुमकुम, केसर ।
- दो० १५ तरइन्ह = ताराओ । सत भावैरी = विवाह के थवसर
पर दी हुई सात भाँवर । घुट कै = टड करके ।
- दो० १७ अथवै = अन्त हो । पत्रावलि = पत्रभग, घाल
यनाने की एक विधि ।
- दो० १८ मदूर = शार्दूल, सिद्ध । पहुँची = कलाई । लाजि =
लजा कर ।
- दो० १९ कुरकुटा = मोटा अन्न ।
- दो० २० छूति = छूत । पार = सके ।
- दो० २१ चिन्हारी = दोस्ती, जान-महचान । निसियर = चद्र,
निशाकर । निनअर = दिनकर, सूर्य । छाँहा = छाया,
प्रतिछाया ।
- दो० २२ तुम्ह हुँत = तुम्हारे लिण । पुहुप = पुष्प । दाधा =
दग्ध हुआ, अनुरक्त हुआ ।
- दो० २३ चरचिउँ = परीछा की, चर्चा की, भाँप लिया ।
थनाइ = अवनत की, नवाई । ओटि = थोट करके ।

- दो० ४८ वैद = वैद्य । धनि = स्त्री । झारा = ज्वाल ।
 दो० ४९ दुहेली = दुखित ।
 दो० ५० पैरि = पैल, दरवाजा । भोरू = प्रभात । सूरी =
 वह स्थान जहाँ मृत्युदंड दिया जाता है, सूली ।
 दो० ५१ परसेद = प्रस्वेद ।

(४) भेंट खंड

- दो० १ मरू = तुरही । मसूरू = एक मुसलमान फकीर जो
 'अनलहक' अर्थात् 'अहम् ब्रह्म' कहा करता था । इसी
 कारण काफिर बतलाकर लोगो ने उसे सूली पर चढ़ा दिया था । मसूरू
 ने प्रसन्नतापूर्वक यह दंड स्वीकार किया था । भाव = कारण, उद्देश से ।
 दो० २ निवेरा = निपटारा, उद्धार । पहुमि = पृथ्वी ।
 दो० ३ गाढ = कष्ट । साजू = सामान, तैयारी । गुपुत =
 छिप कर । फटक = सेना ।
 दो० ४ विपति = विपत्ति । दसौधी = भाटो की एक जाति ।
 दो० ५ औधी = उलटी, नीची । असाई = अताई । रन-
 घट = रणभेरी । कुरी = कुल ।
 दो० ६ अभाऊ = अशिष्ट । वरम्हाठ = आशीर्वाद । खरि =
 खरा ।
 दो० ७ भांटकरा = भांट की भाति । तोका = तुम्हे । रुवारी =
 कटोरी ।
 दो० ८ ओहट = ओट, दूर, आरिष के सामने से दूर । हींछा =
 इच्छा । चालों = चलाऊँ । ठाट = झुंड, समूह ।
 दो० ९ उरण = उमड़े । दर = दल । ईसर = महादेव, ईश्वर ।
 सो . साजा = उसी ने वैर साधा है । वारि = बाला,
 कन्या ।

(५) नागमती खंड

दोहा १ नागर = नायक, रतनसेन । नारायण बावेंन करा =
ईश्वर वामन कला के रूप में । करन = राजा कर्ण । छुद =
छल । अपमवा = चल दिया । पीजर = पजर, ठट्टरी ।

दो० २ वाजर = वातुल, दाबला, पागल । रामा = नारी ।
नारी = नाडी । चोला = शरीर । पहर योला = एक
प्रहर में मुद्र से निकली हुई वात ममक पडती है । पयान =
प्रयाण, जाना । आहि = आह ।

दो० ३ हारु = हार । मेरावा = मिलाप, मेल । टेकु = रोक,
मह । धीति (स्थिति) = स्थिरता । साजन = प्रिय । अकम =
अक, अकवार । पलुहत = पल्लवित होते हैं ।

दो० ४ साम = श्याम । ओनई = अवनत हुई, कुन्नी,
घेर ली । गारौ = गोरव ।

दो० ५ मेह = मेघ । सरेला = चतुर, श्रेष्ठ । भँभीरी =
एक पातगा, भँवर (?) । ताकी = देयी । थाकी = थकी,
अथवा, हे ।

दो० ६ दूभर (दुर्बह) = कठिन । अनतै (अन्यत्र) = अलग,
दूसरी जगह । तरासा = त्रास देता है । ओरी = खोलती,
छाजन का किनारा । पूया = पूवा नक्षत्र ।

दो० ७ लटा = निर्मल हुआ । पतुहै = पल्लवित हो । तुरय =
तुरग, घोड़े । पलाणि = कसबर । साले (शाल्य) = दुःख
दे । वाजहु = लडा । गाजहु (गर्ज) = गजन करो । सदुर =
शार्दूल, सिद्ध ।

दो० ८ अग्नि दाह = अग्नि के ममान दाह, ताप । देवारी =
दिवाली । तिठार = शोकार ।

- दो० २४ मेराने (शीत) = ठंडे हुए ।
- दो० २५ र्सांगी = घटी, कम हुई । कापर = कापड, कापडे ।
- दो० २६ नए चार = नई चाल से, पुन । कुई = कोई, कोका-
बेली, कुमुदिनी । ऊई = उर्गी । नाहू = नाथ ॥
- दो० २७ सोधे = सुगन्ध । खरी = खडी । धिरित (घृत) = घी ।
- दो० २८ कटकई = कटरु की तय्यारी, सेना की तय्यारी ।
कोरहि = कोर से, किनारे से । पैज = प्रतिज्ञा । र्साँचौ =
र्साँचते हो । महुँ = मैने भी ।
- दो० २९ वीर सिगार = वीर और श्र गार रस । र्साँधार = तबू,
डेरा । धरहरिया = बीच में पडनेवाला, मध्यस्थ ।
- दो० ३० सुरितु = सुम्भतु । मगा = मांग । छिरका = छिडका ।
सौर = चादर । सुपेती = गद्दा, त्रिळावन । डासी =
बिडाई । धनि और कत = स्त्री और पुरुष । देवहरे (देवगृह) = देवमदिर ।
- दो० ३१ भीना = महीन । मेद = कस्तूरी । सिञ्जर = शीतल ।
सोवनारा (स्वप्नागार) = सोने का घर । ओहारा = परदा ।
तमेर = ताबूल, पान । टारिडे = दाडिम ।
- दो० ३२ पांति बग = वक-पक्ति ।
- दो० ३३ आसिन = आश्विन । सोनफूल = सोनजुही । गरे =
गले ।
- दो० ३४ जूक = युद्ध । श्रवाहीं = संतुष्ट होते हैं ।
- दो० ३५ सिसर = शिशिर । दगल = दगला, एक प्रकार का
श्रगरसा, चोला । जानहुँ भागा = जैसे राम के बाण
से व्यथित होकर जयत भागा था ।

दो० १८ पुद्धार = पूछनेवाली, मयूर, मोर । चिञ्जवांसू = फदा, चिड़िया फँसाने का फदा । रोप्य = रोप । दया = एक पत्नी । गोरवा = चरक पत्नी । तिलोरी = टेसी मेना । कटनमा = काटने तथा नाश करनेवाला, नागर कटक । निन्नर = समीप ।

दो० १९ करमुषी = कलमुषी । ताती = तप्त । रासी = डेर, समूह । पराम = पलास । देसरा = देश । हेवत = हेमत शत्रु ।

दो० २० न लावसि श्रान्ति = श्रांस न लगना, नौट न श्राना । कारन कै = कस्या करके, दुख से । वत पिछोई = कंत से वियोग हो जिसका, विरहिणी । नाहू = पति, नाथ ।

दो० २१ बीरा = भाई । भिउँ = भीम । शँगवै = श्रगीकार करे । किँगरी = किकरी, चेरी । खप्पर = पात्र, जिसे कापालिक लोग लिए रहते हैं । किगरी = चिकारा, एक बाजा ।

दो० २२ वरता = व्रत । राख = रावली, मडल । वारी = बाला ।

दो० २३ धराही = जलते हैं । मरवन = श्रमणकुमार, श्रमण कुमार की कथा उत्तर भारत में प्रचलित है । कहते हैं कि श्रमण अपने श्रधे माता पिता को वहिगी पर लिए हुए फिरता था और उनकी सेवा करता था । यह कथा बौद्धों में प्रसिद्ध हुई और बौद्ध भिक्षुक इसे गाते फिरते थे । डफारा = चिह्नाया ।

दो० २४ उत्तग = ऊँचा । गंभीर = गहन, धनी । तुरय = तुरग, घोडा । पसिन्ट = पसियो की । मामा = श्याम । मासक दुइ = दो मास के लगभग । दाडे = टग्य हुण ।

दो० २५ निसरा = निकला । धुँध = श्रधकार । पेसा = भेस । महुँ = मै मी । नरी = तिनता है ।

दो० २६ घमोई = सत्यनाशी नामक वनस्पति, भँडभौंड । बँधा = बांधकर । कविरि = वहिगी, जिसे कथे पर रक्ते

- दो० ६ बहुरा = लोटा । विछोई = छोड़ करके, विछोह करके । सुलुगि = सुलगाकर, जलकर । सँदेसडा = संदेश ।
- दो० १० चापा जाई = टवाकर पहुँचा । हियरे = हृदय में । सचान = बाज, श्येन । गरा = गल गया । ररि = रटकर ।
- दो० ११ माहा = माघ । महवट = मघवट, माघ की ऋठी । मोला = भूकोरा, भोका । तिनवर = तिनका । मोल = राख, भस्म ।
- दो० १३ उजारी = उजाड़ दिया । मँजीठ = मजीठा । बैरे = वौरना । धिरिनि = गिरहवाज कवूतर ।
- दो० १४ चोत्रा = एक सुगन्धित द्रव्य । वजागि = बज्राग्नि । भार = भाड़ । भडभूजों के भाड़ की आग बड़ी तेजी से जलती है । विडरत = विदीर्ण होता हुआ । उर्वंगरा = वर्षा की ऋठी ।
- दो० १५ लुवारा = लू । गाजि = गर्जन करके । पलका = पर्यक, पलंग अथवा लका के और आगे का स्थान । अधजर = आधी जली । हाडन्ह = हड्डियो में । सराहिण् = सराहना कीजिए ।
- दो० १६ द्वाजनि = द्वाजी, छप्पर, छत । तिनवर = तिनका । कध = कर्णधार, सहायक । नृँ द्वा = खाती । टेक = आधार । धाँभ = स्तंभ । वूनी = लकड़ी की टेक । छपर छपर = सरापोर, पानी से लतपत । कोरो = काँडी, धाँस या लकड़ी जो छप्पर में लगती है । नच कै = नए सिरे से ।
- दो० १७ वरख = वर्ष । सेराई = व्यतीत हुआ । सुनारी = नागमती । गरा = गला । नेह = स्नेह । जुडावहु = शीतल करो । ऋखि = टुपित होकर । वृभि = पूछकर । पखि = पची ।

- दो० ४१ भंढे = शरीर में । निरमर = निर्मल । हुती = थी ।
बहल = बहली, गाढ़ी । दुहेल = दुग् ।
- दो० ४२ तर्कूँ = तू भी । मोर्का = मुझे, मुझसे । सिबलोक
= स्वर्ग ।
- दो० ४३ निद्धोर्दं = स्नेहरहित ।
- दो० ४४ परसा = स्पर्श किया । रज = धूलि । अचरज =
आश्चर्य्य ।
- दो० ४५ आथी = अर्थ, पूँजी ।
- दो० ४६ सरवन = शरण, का । मावक = शावरु । मादूर
= शार्दूल, सि इ । मूर = मूल । कटक = सेना । पयान =
प्रयाण ।
- दो० ४७ शेंदोरा = प्रादोत्न, हलचल । तुचा = त्वचा । सुचा =
सोच, ध्यान । सहेलरी = महेली । उग = उगा ।
- दो० ४८ सीअर = शीतल । नण चार = नण सिरे से । सन =
छण । दर = दल । थोनए = घेरे ।
- दो० ४९ बेवानू = विमान, पालकी, सवारी । हेम सेत = सफेद
हिम, पाला । उवरिगा = खुल गया ।
- दो० ५० निघनी = निर्यन । दोहाग = ददोरा । मँगतन्ह =
मँगो को । डागि = डौदी ।
- दो० ५१ पोद = कडे, पुष्ट । पलुहाई = पलवित की । ठावँ =
स्थान ।
- दो० ५२ निसासी = निखान । रहंट = रहट, जलयत्र ।
पक = कीचड ।
- दो० ५३ हिरक = पास जाय । करिया = काला ।
- दो० ५४ सारिउ = सारिका । रहसत = केलि करते हुए ।
खूसट = मनहूस ।

है। इसके दोनो छेरो पर दो साँके लगे रहते है। पांजर = पजर, ककाल, डटरी। जरी = जडी, औपधि।

दा० २७ सगरो = सव, सकल। गोहरावा = पुकारा। विस-
भर = बेसुध। वारा = पुत्र।

दो० २८ काचि = कच्चा सीसा। पाती = पत्र।

दो० २९ विरवा = विटप। भावा = शब्धा लगता है। मिधा
वहि = सिधारै। आव = आयु। गवने = गमन, चलन।

दो० ३० सदवरग = सदवर्ग, गंटा। धसकि = धँस गया।
निछोह = स्नेह-रहित।

दो० ३१ गरव = गर्व। किरोध = क्रोध। तूरे = तोड़े।

दो० ३२ टेक = रोक। गुरेरा = साक्षात्, देखादेखी।

दो० ३३ वाव = वायु। उलघाना = उमडा।

दो० ३४ पाटा = पटारा, तम्बा। लछि = टक्की। तीवह = छी।

दो० ३५ कागर = कागज। पतरा = पतला। छीजा = कम-
हुआ। कोरै [क्रोड] = गोद।

दो० ३६ पसार = फैलाकर। चेती = चेत करके, होश करके।
बही = बहती हुई। सर = चिता।

दो० ३७ महर भटर = भर-भर करता हुआ, आग जलने का
शब्द। बरा = बला, जला। खीन = क्षीण। खरी =
सडी। सो = वह।

दो० ३८ खटवाट = खटपाटी। खिर्या प्राय खूकर खाट पर
जा पडती है। सेसा = शेष।

दो० ३९ मेरवसि = मिलाता है। आज = आयु। विछोहा
= वियोग।

दो० ४० शीव = गला, शीवा। बेसाखी = लाठी। अपघाता =
आत्मघात। परिहँस = परिहास।

- दो० ४१ भंढे = शरीर में । निरमर = निर्मल । हुती = थी ।
बहल = बहली, गादी । दुहेल = दुःख ।
- दो० ४२ तहूँ = तू भी । मौका = मुझे, मुझको । सिवलोक
= स्वर्ग ।
- दो० ४३ निछोड़ै = स्नेहरहित ।
- दो० ४४ परसा = स्पर्श किया । रज = धूलि । श्चरज =
आश्चर्य्य ।
- दो० ४५ आधी = अर्ध, पूँजी ।
- दो० ४६ सरवन = श्रवण, कान । सावक = शावक । सादूर
= शार्दूल, सिंह । मूरु = मूल । कटक = सेना । पयान =
प्रयाण ।
- दो० ४७ चंदोरा = आदोलन, हलचल । तुचा = त्वचा । सुचा =
सोच, ध्यान । सहेलरी = सहेली । उवा = उगा ।
- दो० ४८ सीअर = शीतल । नए चार = नए सिरे से । सन =
घण । दर = दल । ओनए = घेरे ।
- दो० ४९ बेवानू = विमान, पालकी, सवारी । हेम सेत = सपेद
हिम, पाला । उघरिगा = खुल गया ।
- दो० ५० निघनी = निर्वन । बोहारा = दयोरा । मँगतह =
मँगनेको । टांग = डोडी ।
- दो० ५१ पोढ = कटे, पुष्ट । पनुहाई = पल्लवित की । ठाँ =
स्थान ।
- दो० ५२ निर्मासी = निष्काम । रहँट = रहट, जलयत्र ।
पक = कीचड़ ।
- दो० ५३ हिरक = पाल जाय । करिया = काला ।
- दो० ५४ सारिउ = सारिका । रहसत = केलि करते हुए ।
खूसट = मनहूस ।



- दो० ५६ सँगतराव = संगतरा नीबू ।
- दो० ५७ रोवां = रोम, बाल, आम की गिठुली में रोएँ होते हैं । अभेरा = लटाई, भिडत । अँराव = वाग ।
- दो० ५८ तेदू = तेंद नामक वृक्ष । टे टी = करीरू का फल (?) ।
 वारिडे = दाडिम, अनार । दास = दाचा, अग्रूर । वाजु = लड । खूभागाजु = खूर गवार, व्यर्थ वस्तुएँ ।
- दो० ५९ डेल न बाहा = डेला न फेंका ।
- दो० ६० केवा = कमल । दई = डैव । पोत = काँच की बनी मोती । रांध = समीप ।
- दो० ६१ रोठा = रोडा, कठोर टुकड़ा । गटा = कमल का बीज ।
 परगटा = प्रकट होना । वेसिहे = देगा । हियरा = हृदय ।
 बहरावसि = बहलाता है । भरसी = भरती है । करसी = करती है ।
 भूँज = भूनी है ।
- दो० ६२ बिगास = विकास । तिमिर = अधकार । हार = माला ।
- दो० ६३ जरि = जड । बिसाईंध = बदबू । तेहिके = उसके ।
- दो० ६४ तमचूर = मुर्गा, अरुणशिरा । पुछारी = मयूर ।
 वेसरि = नाक में पहनने का आभूषण, लटकन । बिबाहीं = कुदरू, विवा । मराल = हंस । पुडुप = पुष्प । वसाइ = बसता है । लुउध = लुब्ध ।
- दो० ६५ जणै = स्थान । गही = डसी । अखारे = अखाडे में ।
 कोई प्राग न मोरा = कोई पीछे न हटा, किसी ने मुख न मोटा । ठग लाहु = वह लड्डू या मिठाई जिसे ठग लोगों को खिला कर उन्हें ठगता है । प्राय इसमें विप या नशीली चीज मिली रहती है । मीचु = मृत्यु । धरहरिया = बीचबिचाव करनेवाला ।
- दो० ६६ काहे क = कपो । सोन = स्वर्ण ।

(ई) राघव चेतन खंड

- दो० १ थाऊ सरि = थायु पय्य त । बावर
सरेखा = होशियार, सचेत, चतुर । जा
दो० २ दिस्टिबंध = कौतुक, इद्रजाल ।
चेटक = कलाजाजी, माया । कांवर = व
= छल किया ।
दो० ३ वानि = वर्ण, रंग । निसारा = निका
दो० ४ निहकलक = निष्कलक, कलकरहित
कँगन । पवारा = फँका । मारा = माला
दोप । परेव = भूत, प्रेत । सनिपावू = सन्निपात रोग ।
मृगी । वावू = वायु ।
दो० ५ पराइ = दूसरे की । टगोरी = टगी ।
पागलपने की । बटपारा = रहजन, रास्ते में लूटने
वाले । वरज = रोके । गोहारी = मदद को दौड़े । बटपारी
थलक = बाल ।
दो० ६ दच्छिना = दक्षिणा, दान । हँकारि = पु
बुलाकर ।
दो० ७ एता = यहाँ । संमौ = संशय । रहनि = रा
खाँगौं = मुझे कमी हो । डरं = डर । टक्सारा =
साल, जहाँ मुद्रा बनाई जाती है ।
दो० ८ मया = मेहरबानी की । हँकारी = बुलाकर । पूजा
घराररी कर सका । मनि = मणि । अक्षुरी = अक्षर
दो० १० परगसा = प्रकाशित हुआ । जोग = योग्य । लँभारि =
स्मरण कर, होश कर । जोरे = एकत्र किया । देलि लोन
बिलासी = लावण्य को देखकर लवण की भाँति गल जाती है ।
चक्कयै = चन्द्रर्षी राज करता है ।

- दो० ११ कटवात्रा = कहलाया । चितेर = चित्रकार ।
- दो० १२ देकरारा = वेकरार, चिक्ल । डारसि = बिछावें ।
सौर = चहर ।
- दो० १३ पार्हा = से । परस = पारस । रोफ = घोडरिच, नील-
गाव । सचान = बाज पक्षी । सायर = सागर ।
- दो० १४ पहिरावा = घख पटनाया । जोरी = जोड़ी । दिनार
= दीनार नामक स्वर्णमुद्रा । अनेग = अनेक ।
- दो० १५ दैड = दैव । बोलू = बचन ।
- दो० १६ घरनि = घरनी । सक-बंधी = साका बंधनेवाले ।
सैरधी = सैरधी, टोपदी । ताका = देखता है, ताक
लगाता है । मोद्धा = मूर्छ ।
- दो० १७ आपु जनाई = अपने को जनाकर, अपनी बडाई
करके । वारा = देर । भास = अमर्ष, रोष, वैर । अग-
मना = आगम, भविष्य में होनेवाली घटना ।
- दो० १८ वूझा (बुद्ध) = रोधित हो । मराना = शक्ति हुआ ।
वारिगह = डेरा, खीमा । नेमरा = सचर । सरह =
शलभ, टिट्टी ।
- दो० १९ पैग = परिग्रह । वाक = धाँके, तीखे । कनकानी =
एक प्रकार के घोड़े । लोहसार = लोहे का सार, फौलाद ।
धाने = बाना, पहनावा । पारा = सकता है । खदगी = खदग, गण्ड,
तीर । बेहर बेहर = गलग गलग । पयान = प्रयाण, यात्रा ।
- दो० २० दर = दल । दोराई = दौड़ाया, शीघ्र भेजा । मेंडू =
जंज, रोक । बारि = पानी ।
- दो० २१ एकमत = एकमत । नाता = संबंध । जौहर = राज-
पूतों में प्रथा थी कि उनके हारने पर उनकी स्त्रियाँ आग में
कूदकर जल मरती थीं—इसे जौहर कहते थे ।

- दो० २२ राग = कमी । धानुक = धनुषवाले । श्रांटी = पर्याप्त
हुई । अंगुरन = अंगुल । ठारे = सडे । लेखे लाव =
गिनती में आवे ।
- दो० २३ जहा = यूय, समूह । बैरस = तलवार (१) ।
छार = फूल ।
- दो० २४ संगेठ = तय्यारी । अकूत = अगणित । धुजा =
ध्वजा, पताका । अगी = सेना ।
- दो० २५ सेन = सेना । अगई = आगमन । सकति
पोखि = शक्ति भर सभ पोषण करते थे । ओळ जानव =
थोड़ा पूरा (मली भाति) उले समभो । धिर = स्थिर । जोखि
आवत = समझता है ।
- दो० २६ अथवा = अस्त हुआ । धामा हुआ = डेरा हुआ ।
नसत = नचत्र ।
- दो० २७ गरेरा = घेरा, घावा । छेका = छेक लिया, घेर लिया ।
गरगज = गुर्ज जिस पर तोप रखी जाती है । दारू = दारुद ।
ओदरहि = निर्दीर्ण होते हैं, ढह जाते हैं ।
- दो० २८ राजगीर = थवई, मेमार । थवई = मेमार । गाजा =
विजुली, वज्र । परती = प्रताप । जूकू = युद्ध । सोह = सामने ।
- दो० ३० अरदामे = पत्र । हरेव = देश विशेष । धाने =
चौकिया । परावा = दूसरे का । जिन्ह बबूर =
जिन रान्तों में इतनी सफाई थी कि तिनका भी नहीं जमता था
वहाँ घेर, सबूर लगे हे ।
- दो० ३१ भेज = भेद । सेज = सेवा । चूरा = चूर्ण ।
अग्या = आज्ञा । छाजा = शोभता है, उचित है ।
- दो० ३२ ऐगुन = अवगुण । भँडारा = भांडार, धन । इसकदर =
सिकदर । बाचा परवाना = बचन प्रमाण । भाव = त्राण ।

नाव ग्रीवा = जो भार सिर पर रखकर गर्दन हिलाता है अर्थात् जो उत्तरदायित्व लेकर हिचिकता है । सरजै = सरजा नामक दूत ।

दो० ३३ हुत = सहित । कोहू = क्रोध । सोम्ना = सीधा, मामने । रसोद् = भोजन ।

दो० ३४ जत = जितने । जेवा = भोजन किया । बिवान = विमान । पँवरि = दरवाजा । उरेह = चित्र ।

दो० ३५ केवारा = केवाड । छहराने = छितराए हुए ।

दो० ३६ अगोरे = रखवाली करें ।

दो० ३७ गुन = गुण, तागा । सांच = खींच ।

दो० ३८ रावत = सामत । मेरू = मेल । सिंह मँजूसा = कथा हे कि एक ब्राह्मण ने एक सिंह को पिँजडे से निकाल दिया था । वह उसे खाने ढांडा । टोना में वाद-विवाद होने लगा । एक शृगाल पच हुआ । उसने कहा पहले सिंह पिँजडे में चला जाय तो हम न्याय करे । सिंह पिँजडे में चला गया । ब्राह्मण ने द्वार बंद कर दिया और अपना रास्ता लिया । सिंह अपने किए का फल पा गया । सिंघ छान अत्र गोन = सिंह अब गोन (रस्ती) से बँधा चाहता हे ।

दो० ३९ निमरीं = निकलीं । रायसुनी = लाल पत्ती । सारँग = धनुष ।

दो० ४० हना परछाहीं = अर्जुन ने तेल में मछली की छाया देखकर बाण मारा था और झौपड़ी से ब्याह किया था । सँधान = अचार । वृरहि बूरु = सुट्टि भर भर कर ।

दो० ४१ सँडवानी = शर्वत, रम । अरगजा = चंदन । कुहँ-कुहँ = कुमकुम, केसर । धारहि = धाली में । घालि पागा = गले में पगड़ी डालकर, नम्रता तथा विनय सूचक चेष्टा है । सुदिस्टि = कृपादृष्टि ।

दो० ४२ भीति = दीवाल । लावा = लगा था । तरङ्ग = तारागण । जेहि = जिससे ।

दो० ४३ सरेसी = चतुर । मांपा = ढापा, छिपा । लागि सोपारी = सोपाडी लगी । कभी-कभी सोपाडी खान से अधिक गर्मी होती है और मनुष्य रेसुध हा जाता है इसे सोपाडी लगना कहते हैं । पौढावहि = सुलाते हैं ।

दो० ४४ विसमयज = विस्मय हुआ । करन्ह ऊहा = हायों में था । लोकि = चमकर । चाकना = चमकना । पतीजु = पतियाना, विस्वास कर

दो० ४५ आंकुस = अंकुश । महावत = हाथीवान । उचका = कूदा, उपर उठा । हेरत = हँडते हुए, देखते ही । आङ्गत = हे, अस्तिव हे । यह तन सके न = यह शरीर पल रखकर क्यों नहीं उठ जाता ।

दो० ४६ निसचे = निश्चय । अत्र सोई मति कीज = अथ यही विचार कीजिए । रस लीज = रस लीजिए ।

दो० ४७ मीत पे = मित्र से । माट्ट = मस्य । काट्ट = कच्छप । चीत = चेतता है, विचारता है । दोह = दोह ।

दो० ४८ सर्किर = श्र रत्ना । मँजूपा = पिँजडा, कंदखाना । बखाना = चचा, हाल । खूँदा = कूदा । मूँदा = बंद किया ।

मीन = मत्स्यावतार । पडव = पाडव । अथवा = अस्त हुआ ।

दो० ४९ निचि त = निश्चित । छाणु = रहे । नियतुर = यन् म्याा जहां जाकर कोड़ लोटे नहीं । लेशुरि (रजु) =

रस्सी । ठारै = ढाले, गिरावे ।

दो० ५० नागा = नागमती । पलुटे = पलवित हो । तचा = उचटा, हुन्धी । नाट = नाथ ।

(७) युद्ध खंड

दोहा १ हियमालू = हृदय में सालनेवाला, सटकनेवाला ।
छर = छल । नेवरै = निरटै, पूरी हो । जोई = जोय,
स्त्री । विरिध = वृद्धा, वृद्धी । वर = बल । कर वर छर = कल
बल छल ।

दो० २ खेरौरा = एक प्रकार की मिठाई । पेज = प्रतिज्ञा ।
वेस = बयस । वेयसाइ = व्यवसाय, काम । हेरान =
सो गया ।

दो० ३ जोहन मोहन = देखते ही मोहनेवाला ; (मंत्र) ।
बरोठा = चैठक । सीपा = स्त्री से ।

दो० ४ गीठ तूरि = गला मरोड कर । कंत = पति । कुहुकि =
कूक भरकर ।

दो० ५ सुठि = अच्छी तरह । करमुसी = कलमुसी, जिसका
मुख काला हो । श्रान (श्रान्य) = दूसरा । वैन = वचन,
बकवाद, बक-बक ।

दो० ६ खमारू = खभार, शोक । कस = कैसे । सँकेती =
समेटकर । और सँकेती = उस हाथ से और वस्तु नहीं
छुओंगी जिस हाथ को एक बार समेट चुकी हूँ । शोहि दीठी =
उस रखसेन रूपी रत के स्पर्श से मेरा हाथ लाल हो गया है और मोती को
हाथ में लेने से वह लाल गुजा के सदृश हो जाता है पर शीशों के तिल
की छाया पटने पर वह मोती जो हाथ के स्पर्श से लाल हो गया है
काले दाग-चाला हो जाता है और गुजा के समान टिरपाई पड़ता है ।
पारे = सके । करवा = कडुवा । रूख = रूखा । मवाद = स्वाद ।

दो० ७ रहसि = रहती है (तू) । कोवरि = कोमल । बैस =
बयस । पोनारी = पन्नार । तमोरा = ताम्बूल । सँभार
= श्र गार । बार = देरी

दो० ८ बजार = उजाड़ । माढी = मच, मचिया । जामी = लगी ।

दो० ९ कोहांड़ = क्रोध करता है । छुपान = छिपेगा । विरासी = विलासी । परासी = भागती है । विरिध = बुद्धावस्था । वान = वाण । धनुक = टेढी कमर ।

दो० १० खेरा = धर, वस्ती, स्थान । धर = स्थल, स्थान । सेव = सेवा । पछितासि = पड़तापुगा । लोना = सु दर । कोप = कौपल ।

दो० ११ रँग = भिलारी । रांचा = आसक्त हुआ । बाटा = रास्ता । दिढ = दड । सोहाग = सौभाग्य । मँवरा = स्मरण किया । हेरा = हूँटा ।

दो० १२ रसोई = भोजन । भरे न हीया = जी नहीं भरता है, संतोप नहीं होता ।

दो० १३ मसि चढावसि = कालिस पोतती है । कापर = कपडा । माली = मकड़ी । विलाद = विलीन हो, नष्ट हो ।

दो० १४ मसि = दुष्ट, बुरा । मुद्रा = मोहर । भँवाही = भ्रमते हैं । केमहि = केश मे । उरेही = बलिष्ठित । मसि विनु देही = बिना मिस्सी के दात मुख में अच्छे नहीं लगते । मिस्सी = एक पदार्थ जिसके लगाने से दात काले हो जाते है । पिड = शरीर । विसरिगा = विस्मृत हो गया ।

दो० १५ पकज फेरी = कमलनयनी ने भौहें टेढ़ी कीं । बेसा = बेग्या । हरवा = हलका । फेरत नैन = इशारा करते ही । भड घूटीं = कुटिनी को खून कूटा ।

दो० १६ छाला = फफोले । सोनवानी = खण के दखवानी । नार = द्वार ।

(७) युद्ध खंड

- दोहा १ हियसालू = हृदय में साठनेवाला, खटकनेवाला ।
छर = छल । नेबरे = निपटे, पूरी हो । जोई = जोय,
खी । विरिध = वृद्धा, बूढ़ी । दर = बल । कर वर छर = कल
बल छल ।
- दो० २ खेरोरा = एक प्रकार की मिठाई । पैज = प्रतिज्ञा ।
वेस = वयस । वेयसाइ = व्यवसाय, काम । हेरान =
सो गया ।
- दो० ३ जोहन मोहन = देखते ही मोहनेवाला । (मत्र) ।
बरोठा = बैठक । सीपा = सीप से ।
- दो० ४ गीव तूरि = गला मरोड कर । कत = पति । कुहुकि =
कूक भरकर ।
- दो० ५ सुठि = झच्छी तरह । करनुखी = कलमुखी, जिसका
मुख काला हो । आन (अन्य) = दूसरा । बेन = वचन,
यकवाद, बक-बक ।
- दो० ६ खमारू = खमार, शोक । कस = कैसे । सँकेती =
समेटकर । और सँकेती = उस हाथ से और वस्तु नहीं
छुओंगी जिस हाथ को एक बार ममेट चुकी हूँ । ओहि दीठी =
उस रत्नसेन रूपी रत्न के स्पर्श से मेरा हाथ लाल हो गया है और मोती को
हाथ में लेने से वह लाल गुजा के सदृश हो जाता है पर ग्रियों के तिल
की छाया पडने पर वह मोती जो हाथ के स्पर्श से लाल हो गया है
काले दाग-वाला हो जाता है और गुजा के समान दिखाई पडता है ।
पारे = सके । कट्वा = कडुवा । रूख = रूखा । मवाद = स्वाद ।
- दो० ७ रहसि = रहती है (तू) । कोवरि = कोमल । बंस =
वयस । पौनारी = पद्मनाल । तमोरा = ताम्बूल । सँभार
= श्र गार । धार = डेरी

दो० ८ रजार = रजाड । माडी = मच, मचिया । जामी = लगी ।

दो० ९ कोहांइ = क्रोध करता है । छपान = छिपेगा । विरासी = विलासी । परासी = भागती है । विरिध = वृद्धावस्था ।

बान = बाण । धनुक = टेडी कमर ।

दो० १० गेरा = घर, वस्ती, स्थान । धर = स्थल, स्थान । सेव = सेवा । पछितासि = पढ़तापुगा । लोना = सु दर ।

कोप = कोपल ।

दो० ११ रँग = भित्तारी । राचा = आसक्त हुआ । बाटा = रास्ता । दिड = दट । सोहाग = सोभाग्य । सँजरा = स्मरण

किया । हेरा = डूँडा ।

दो० १२ रसोई = भोजन । भरे न हीया = जी नहीं भरता है, संतोष नहीं होता ।

दो० १३ मसि चढावसि = कालिय पीतती है । कापर = कपडा । माग्गी = मक्की । विलाइ = विजीन हो, नष्ट हो ।

दो० १४ मसि = दुष्ट, बुरा । मुद्रा = मोहर । भँवाही = भ्रमते है । केसहि = केश में । वरेही = वल्लिखित । मसि

बिजु देही = बिना मिस्ती के दात मुख में अच्ये नहीं लगते । मिस्ती = एक पदार्थ जिमके लगाने से दांत काले हो जाते हैं । पिड = शरीर । विसरिगा = विस्मृत हो गया ।

दो० १५ परुज फेरी = कमलनयनी ने भौहे टेडी कीं । वेसा = वेश्या । हट्वा = हलका । फेरत नैन = इशारा करते ही । भट कूटीं = कुटिनी को सूय बूटा ।

दो० १६ छाला = फफोले । सोनबानी = स्वयं के दर्शवाली । चार = द्वार ।

- दो० १७ पारय = अर्जुन । बेहरा = फटा, विदीर्ण हुआ ।
मुकरावो = मुक्त करार्ज । गवनय = जायँगे ।
- दो० १८ पसीजे [प्रस्वेद] = दयार्द्र हुए । र्हिर = रुधिर ।
कोहाने = मोहित हुए । नियान = निदान, अत में ।
पलानि = जीन । थंवरू = अकुर ।
- दो० १९ भुवारा = भुवाल, राजा । आंके = वचन बोले ।
- दो० २० मसि = अधकार । जसोवै = यशोदा, जसोदा ।
पाया = पेर । वारा = पुत्र । जुभारा = युद्ध ।
- दो० २१ आदी = केवल, सिर्फ । सँकरे = संकीर्ण अवस्था में ।
ढार = ढाल । छेरो = छुडाँज ।
- दो० २२ गान = गीता । फँट = फँटा, कमर में बँधा टुपट्टा ।
- दो० २३ पुरप काठू = पुरुष का वचन लौट नहा सकता,
जिस प्रकार मे हाथी का निकला दाँत भीतर नहीं पेंठ सकता ।
पुरुष का वचन कहुए का गला नहीं है कि जो क्षण क्षण बाहर भीतर
होता रहे ।
- दो० २४ करवाने = कहुवाने । छर = छल । बर = बल ।
आँटे = आँटे, पार पा सके ।
- दो० २५ सजोइल = सजाकर । ढारा = सडे । थोल =
जमानत । तुरी = तुरग, घोड़े ।
- दो० २६ सौपना = डेररेर, निरीक्षण । अगमना = आगे ।
अंकोरा = घूस, रिशवत ।
- दो० २८ ठँछि = खाली । सँडे = सड्ड । तीस = तेज ।
- दो० २९ गोइ लेइ जाऊ = चौगान [पोलो] के खेल में बछे
से गेंद निकाल ले जाना । गोइ = गेंद ।
- दो० ३० परति कारी = अधकार होता जाता है ।

दो० ३१ हकिा = ललकारा । सोहिल = एक तारा जिसे
अगस्त कहते हैं । यह वर्षा के अंत में उगता है । दुग्गवै
(दुर्ग) = किला, धुस्सा । जमकातर = यवनसमूह, राक्षस । मेड = वर्षा ।
टेकों = रोकूँ । बेंडा = आढा, तीसा, टेटा ।

दो० ३२ वान = राण । वाटी = दुश्मन, शत्रु । हरद्वानी =
स्थान विशेष की बगी (तलवार) । उठैनी = घावा । स्यो =
सहित । दरतर = कवच । कूँड = टोप ।

दो० ३३ दगमेल = हाथों हाथ की लडाइ । भारत = युद्ध ।

दो० ३४ ठटा = समूह । करजारु = करवाल, तलवार ।
लावा = लगाया । धूका = दुका, मुका ।

दो० ३५ छेका = घेर लिया । सांग = एक प्रकार का छोटा
भाला जो फेंकर मारा जाता है । निहाड = निहाई ।
सदूर = शार्दूल । बाजा = लडा । गाजा = गर्जा ।

दो० ३६ भूरी = उदास । आरति = भेंट ।

दो० ३७ परसि = टकर । नुरय दाब = बाटल के घों के
पेर महलाये ।

दो० ३८ मालू = दु स । पेसा = देखा । नेयरै = निपटै ।

दो० ३९ एकौका = अकेले, एकाण्की । भारा = भाला ।
मँकजार = रास्ते में ।

दो० ४० सर्ाटी = कौंडा, छड़ी । नेगी = तंग पानेवाले ।

दो० ४१ पटोरी = वच । छहरावो = छितराऊँ, दिसराऊँ ।

दो० ४२ अगूता = आगे, सामने । चाटहि सूता = सेना
चाहती हैं ।

दो० ४३ सर = चिता । पोढ़ीं = लेटीं । महगवन = सती ।
अखारा = सभा में । पिरथिमी = पृथ्वी, संसार । जौहर =

सती हो गई, जल गई । भय संग्राम = लडाईं में मरे । चूरा =
चूर्ण किया । भा इस्लाम = मुसलमानी राज्य हुआ ।

दी० ४४ जेरी = जोड़ी । लेउं = वह पदार्थ जिससे जोड़ा
जाता है, लासा । भेईं = भिगोईं । हम्ह = मुझे । सँवरै =
याद करेगा । दुइ घोल = दो बार, दो शब्द ।

